3-5

कर्मविपाक संहिता

* उमामहेश्वराभ्यां नमः *



अथ

कर्मविपाकसंहिता

अथ प्रथमोऽध्यायः ।

मङ्गलाचरणम्

प्रणम्य शिरसा देवं गौरीपुत्रं विनायकम् ।
भक्त्या यः संस्मरेन्नित्यमायुः कामार्थसिद्धये ॥ १ ॥

ब्रह्मादयो यत्कृतसेतुपाला
यत्कारणं विश्वमिदं च माया ॥
आज्ञाकरी तस्य पिशाचचर्या
अहो शिवं तं सततं नमामि ॥ २ ॥

ब्रह्मादि देव जिनकी मर्यादा के रक्षकमात्र हैं, जिनसे यह विश्व उत्पन्न हुआ है, माया जिनकी आज्ञाकारिणी है, ऐसे अड़बंगी शिवजीको बारम्बार नमस्कार है ।

अथ प्रश्नविधिः ।

रविवारे च संक्रान्तौ शुभयोगे यथाविधि ।
वैधृतौ च व्यतीपाते विप्राणां च गृहे तथा ॥
देवतायतने चैव नद्यां वै सङ्गमोत्तमे ।
अथवा स्वगृहे चैव शुभे स्थाने विशेषतः ॥३-४॥

प्रथम प्रश्न किस प्रकार हो उसे कहता हूँ:—रवि के दिन, किसी शुभ योग या संक्रान्ति में, व्यतीपात, वैधृति इन योगों में तथा ब्राह्मणों का घर हो, मन्दिर या नदियों का संगम या अपने घर में ऐसे शुभ स्थान हों ॥ ३-४ ॥

स्नानं समाचरेद्रोगी मृतपुत्रः सपुत्रकः ।
कर्मणा पीडितो योऽसौ नारी वा पुरुषोऽथवा॥५॥
धात्रीफलानि लोध्रञ्च गोमयं तिलसर्षपान् ।
मृत्तिकाः सप्त कर्पूरमुशीरं मुस्तसंयुतम् ॥६॥

जो निज कर्मों द्वारा पीड़ित स्त्री, पुरुष, रोगी, मृतपुत्र-वाला अथवा पुत्रवाला हो वह निम्नलिखित आँवला, लोध, गोबर, तील, सरसों, सात स्थानों (घोड़ा, हाथी, वीमउट, नदीसङ्गम, राजद्वार, गोशाला, तालाब) की मिट्टी, कपूर, खस, नागर मोथा इन सब औषधियों को समभाग पानी में मिलाकर स्नान करे और देव पितृ तर्पण कर सूर्यार्घ्य दे ॥ ५-७ ॥

एवं सर्वविधिं कृत्वा संकल्पं कारयेत्ततः ।
अद्येत्यादिप्राचीनसंचितकर्मविलोकनार्थं मनः-कामनासिद्ध्यर्थं शिवपूजनपूर्वकं कर्मविपाकपु-स्तकपूजनमहं करिष्ये ॥

अङ्गन्यासपूर्वकं षोडशोपचारपूजासंकल्पः वैश्वदेवं श्राद्धं च । अत्रान्तरे देहशुद्ध्यर्थं पुरश्चरणांगत्वेन गोमिथुनदानं कुम्भदानं च प्रजापतिसंतुष्टये षोडश ब्राह्मणान्भोजयेत् । भोजनानन्तरं प्रार्थनाऽऽचार्यस्य ॥

इस प्रकार सब कार्य करते हुए संकल्प करे। पूर्व संचित कर्म को देखने के लिए तथा मनोरथ सिद्ध्यर्थ प्रथम शिव-पूजन करके मैं कर्मविपाक नामक पुस्तक का पूजन करता हूँ। इसके बाद अंगन्यासादि षोडशोपचारादि सहित पूजन का

संकल्प कर, वलि वैश्वदेव श्राद्ध करे। पश्चात् शरीर शुद्धि के लिये पुरश्चरण का अङ्ग जोड़ा गौ और घृत पूर्ण घड़ा दान करे तथा प्रजापतिके प्रसन्नताके निमित्त सोलह ब्राह्मणोंको खिलावे। भोजनके बाद दक्षिणा देकर आचार्यकी इस प्रकार प्रार्थना करे।

ब्राह्मण त्वं महाभाग भूमिदेव द्विजोत्तम।
यथाविधिं प्रतिज्ञाय प्राचीनं च शुभाशुभम्॥
कथं मे कथयस्वाशु कृपां कृत्वा ममोपरि।
एवं तु ब्राह्मणाचार्यं नमस्कृत्य प्रसादयेत्॥९-१०॥

यथा—हे ब्राह्मण! हे महाभाग! हे द्विजोत्तम! हे भूमिदेव! मेरे पूर्वकृत शुभाशुभ कर्मों को यथोचित जानकर मुझपर अनुकम्पा रखते हुए कृपया तत्क्षण कहिये—इस तरह ब्राह्मण आचार्य को नमस्कार करके प्रसन्न करे॥ ९-१०॥

दश पञ्च तथा विप्रानुपवेश्य प्रयत्नतः।
तेषामनुज्ञया सर्वं प्रायश्चित्तमुपक्रमेत॥११॥

इस तरह दश पाँच ब्राह्मणों को यत्नपूर्वक वैठाकर आचार्य से आज्ञा लेकर अपने सब प्रायश्चितों को करावे॥११॥

वस्त्रालङ्करणैराचार्यं पूजयित्वा प्रजापतिस्वरूपं गुरुं प्रार्थयेत्।

प्रजापते महाबाहो वेदवेदाङ्गपारग।
पुत्रकामसमृद्ध्यर्थं पूजां गृह्णीष्व ते नमः॥१२॥

वस्त्र आभूषणों से सविधि आचार्य की पूजा करके पश्चात् प्रजापति स्वरूप गुरु महाराज की प्रार्थना करे—हे प्रजापते! हे महाबाहो! वेदाङ्ग सहित वेद के पारंगत! पुत्र रूपी मनोरथ के सिद्धि के लिये मेरा किया हुआ पूजन आप ग्रहण करें आपको नमस्कार है॥ १२॥

विष्णो त्वं पुण्डरीकाक्ष भुवनानां च पालकः।

लक्ष्म्या सह हृषीकेश पूजां गृह्णीष्व ते नमः ॥१३॥

हे विष्णो! कमल के सरीखे नेत्र वाले तीनों लोकों के प्रतिपालक हे हृषीकेश! लक्ष्मी के सहित मेरे पूजन को अंगीकार करें, आपको नमस्कार करता हूँ ॥ १३ ॥

रुद्र त्वं दैत्यनाशाय सदा भस्मांगधारक।
नागहारोपवीती च पूजां गृह्णीष्व ते नमः ॥१४॥

हे रुद्र! आप सतत दीनजनों के कष्ट को नाश करने वाले भस्माङ्गी तथा सर्प के जनेऊ को धारण किये हुए मेरी पूजा स्वीकार करें, आपको नमस्कार है ॥ १४ ॥

स्वर्गे सुराश्च गन्धर्वाः पाताले पन्नगादयः।
मृत्युलोके मनुष्याश्च सर्वे ध्यायन्ति भास्करम् ॥१५॥

स्वर्ग, मृत्यु, पाताल इनमें रहनेवाले देवादि, गन्धर्व, मनुष्य, सर्पादि ये सदा सूर्य का ही ध्यान करते हैं ॥ १५ ॥

महायज्ञादिकं चैव अग्निहोत्रादिकर्म च।
तीर्थस्नानं तथा ध्यानं वर्तते भास्करोदयात् ॥१६॥

महायज्ञादि, अग्निहोत्रादिकर्म, तीर्थस्नान तथा देवताओं का अर्चनादि ये सूर्योदय के बाद ही होते हैं (क्योंकि दृश्य से सम्बन्धित हैं) ॥ १६ ॥

ब्रह्मा विष्णुः शिवः शक्तिर्देवदेवो मुनीश्वराः।
ध्यायन्ति भास्करं देवं साक्षीभूतं जगत्त्रये ॥१७॥

तीनों प्रकार के (श्रेष्ठ, मध्यम, अधम) जगत् के साक्षी ब्रह्मा, विष्णु, शिव, देवी, देव, श्रेष्ठ इन्द्र और मुनीश्वर भी भास्कर (सूर्य) का ही ध्यान करते हैं ॥ १७ ॥

त्वं ब्रह्मा त्वं च वै विष्णुस्त्वं रुद्रस्त्वं प्रजापतिः।
त्वमग्निस्त्वं वषट्कारस्त्वामाहुः सर्वसाक्षिणम् ॥१८॥

आप ब्रह्मा, विष्णु, शिव, प्रजापति, अग्नि तथा वषट्कार

स्वरूप कहे जाते हैं, और समस्त संसार के शुभाशुभ कर्मों के द्रष्टा (देखने वाले) कहलाते हैं ॥ १८ ॥

योगिनां प्रथमो ध्येयो यतीनां ब्रह्मचारिणाम् ।
आधिव्याध्योश्च कर्त्ता त्वं सर्वपापक्षयं कुरु ॥१९॥

प्रथम योगी, संन्यासी तथा ब्रह्मचारी आप को मनन करते हैं। आप रोगादि के उत्पादन कर्त्ता हैं अतः मेरे पापों का शमन करें ॥ १९ ॥

दीनानां कृपणानाञ्च सर्वेषां व्याधिनाशनम् ।
एवं च भास्करं ध्यात्वा नमस्कृत्य प्रसादयेत् ॥२०॥

सब प्राणियोंपर दया करनेवाले दीनों और कृपण जनोंके दुःख नाशक सूर्य भगवान्को इस तरह ध्यान पूर्वक प्रसन्न करे ॥२०॥

अथ पृच्छकप्रार्थना—

पापी चैव दुराचारी परनिन्दापरो जनः ।
ब्रह्महा हेमहारी च सुरापी गुरुतल्पगः ॥२१॥
स्त्रीहन्ता बालघाती च अगम्यागमनं तथा ।
एवमादिकपापानि मया वै पूर्वजन्मनि ॥२२॥
कृतानि विविधान्येव सर्वाणि मार्ष्टुमर्हसि ।
शरणं तव संप्राप्तस्त्वं मामुद्धर्तुमर्हसि ॥ २३ ॥

इसके बाद प्रश्नकर्ता—पापी, कुमार्गी, परनिन्दक, ब्राह्मण-घाती, सोनाचोरी (सोनार) करने वाला, शराबी, गुरुपत्नि-गामी, स्त्री तथा बालघाती, परस्त्रीगमन इत्यादि जो पूर्वजन्म कृत कुकर्म हुए हों, उनके उद्धार के लिये आपकी शरण में आया हूँ आप समर्थ हैं—इस प्रकार प्रार्थना करे ॥२१–२३॥

ममोपरि कृपां कृत्वा कर्म मे कथय प्रभो ।
लग्नं तात्कालिकं कृत्वा जन्मपत्रं निरीक्ष्य च ॥२४॥
लग्नं ग्रहविचारेण ज्ञातव्यं कर्म मामकम् ।

ग्रहलग्नविचारेण कर्म जानन्ति पण्डिताः ॥२५॥

हे भगवन् ! मुझपर कृपा कर पूर्व जन्मार्जित मेरे कर्मों को तात्कालिक लग्न, तथा ग्रहों द्वारा यत्न से विचार कर कहें, क्योंकि पण्डित लोग जन्म कुण्डली के द्वारा ग्रह स्थिति वश शुभाशुभ कर्मों को जानते हैं अतः विचार कर मेरे फलों को कहें ॥ २४–२५ ॥

सूत उवाच

कैलासशिखरे रम्ये सुखासीनं महेश्वरम् ।
प्रणम्य पार्वती भक्त्या पप्रच्छ च सदाशिवम् ॥२६॥

सूतजी बोले—कि कैलास पर्वत के उत्तम शिखर पर सुखासीन शिव को सदा कल्याण चाहने वाली पार्वती ने श्रद्धा से प्रणाम करके यह प्रश्न किया ॥ २६ ॥

पार्वत्युवाच

देवदेव जगन्नाथ भक्तानुग्रहकारक ।
लोकोपकारकं प्रश्नं वद मे परमेश्वर ॥ २७ ॥

पार्वती बोलीं—हे देव श्रेष्ठ ! जगत् के स्वामी भक्त जनोंपर दया करने वाले लोकोपकारी आप हमारे प्रश्नको कहिये ॥२७॥

कलौ च मानवास्तुच्छाः पापमोहसमन्विताः ।
महामोहग्रहग्रस्ताः पुत्रकन्याविवर्जिताः ॥२८॥
कुत्सिता रूपविभ्रष्टा मृतवत्सा नपुंसकाः ।
नारीणां पुरुषाणां च पूर्वकर्म च यत्प्रभो ॥२९॥
तत्सर्वं वद मे स्वामिन् सर्वज्ञोऽसि मतो मम ।
तच्च श्रुत्वा वचो देव्याः प्रीतिमान् स महेश्वरः ॥३०॥
प्रहस्य जगतामीशो वल्लभां प्रीतिसंयुताम् ।
उवाच प्रश्नं तद्गूढं त्रैलोक्ये चापि दुर्लभम् ॥३१॥

कलि में सब मनुष्य हीन बुद्धि वाले पाप तथा माया में लिप्त रहते हैं, व्याधि और ग्रहों से पीडित सन्तान रहित, कुत्सित, कुरूप, मृत सन्तात वाले और नपुंसक ऐसे नर नारियों के पूर्व जन्म कृत कर्मों को कहें आप सर्वज्ञ हैं। इस तरह के पार्वती के वचनको सुन कर शिवजी बहुत प्रसन्न हुए और त्रैलोक्य में दुर्लभ ऐसा गूढ़ प्रश्न है हँसकर कहने लगे ॥ २८–३१ ॥

शिव उवाच

शृणु त्वं गिरिजे देवि नृणां कर्म विशेषतः।
कथयामि न सन्देहो यत्ते मनसि वर्तते ॥३२॥

शिवजी बोले—हे पार्वती ! मनुष्यों के विशिष्ट कर्मों को मैं कहता हूँ उसे निःसन्देह सुनो ॥ ३२ ॥

मर्त्याः सर्वे जगज्जाताः कर्म कुर्वन्ति सर्वदा।
स्वकर्माणि ततो देवि भुज्यन्ते देवमानुषैः ॥३३॥

हे–पार्वती, संसार में उत्पन्न सभी जीव सर्वदा कर्म को करते हैं। अतः देवता या मनुष्य अपने किये कर्म फल को भोगते हैं ॥ ३३ ॥

पुण्यापुण्ये हि पुरुषः पर्यायेण समश्नुते।
भुञ्जतश्च क्षयं याति पापं पुण्यमथापि वा ॥३४॥

पाप, पुण्य दोनों अवश्यमेव मनुष्य को भोगने पड़ते हैं और भोगने से ही क्षय भी हो जाते हैं ॥ ३४ ॥

न तु भोगादृते पुण्यं किंचिद्वा कर्म मानवम्।
पावकं वा पुनात्याशु क्षयो भोगात्प्रजायते ॥३५॥

पुण्य अथवा पाप का सुख दुःख रूप कर्म विना भोगे मनुष्य इससे छुटकारा नहीं पाता, कारण कि भोग से ही पाप क्षय होता है इसे निश्चय जानो ॥ ३५ ॥

परित्यजति भोगाच्च पुण्यापुण्य निबोध मे।

दुर्भिक्षादेव दुर्भिक्षं क्लेशात् क्लेशं भयाद्भयम् ॥३६॥

कुकर्मी मनुष्य के दुर्भिक्ष से दुर्भिक्ष तथा दुःख से दुःख एवं भय से भय होता है। भोग के परित्याग होने पर ही छुटकारा मिलता है ॥ ३६ ॥

मृतेभ्यः प्रसृता यान्ति दरिद्राः पापकर्मिणः।
गतिं नानाविधां यान्ति जन्तवः कर्मबन्धनात्॥३७॥

दुष्ट कर्म करने वाला दरिद्री मनुष्य मरने पर भी मरता है और उस कर्म के अनुसार अनेक प्रकार की गति को प्राप्त होता है ॥ ३७ ॥

उत्सवादुत्सवं यान्ति स्वर्गात्स्वर्गं सुखात्सुखम्।
श्रद्दधानाश्च शान्ताश्च धनदाः शुभकारिणः ॥३८॥

जो मनुष्य श्रद्धावान् शान्त तथा अच्छे कर्म के करनेवाला धनी मानी है, वह उत्तम से उत्तम स्वर्ग सुख को पाता है ॥३८॥

सुगन्धिमाल्यासद्वस्त्रसाधुपानासनाशनाः।
स्तूयमानाः सदा यान्ति पुण्यैः पुण्याटवीष्वपि॥३९॥

और जो धार्मिक पुण्यात्मा हैं—वे सुगन्ध मालाओं से और उत्तम वस्त्र, खाने-पीने की वस्तुओं तथा अच्छे आसनादि से युक्त सर्वदा सब लोगों से पूजित उत्तम मार्ग द्वारा अच्छे स्थान पर सुख को भोगते हैं ॥ ३९ ॥

अनेकशतसाहस्रजन्मसंचयसंचितम्।
पुण्यापुण्यं नृणां तद्वत् सुखदुःखांकुरोद्भवम्॥४०॥

मनुष्योंके सैकड़ों-हजारों अर्थात् अनेक जन्म जन्मार्जित पुण्य या पाप उस सञ्चित कर्ता के सुख दुःखका अंकुर होता है ॥ ४० ॥

मानवस्तु विशेषेण सुखदुःखादिकं च यत्।
कर्मत्रयं च सर्वेषां तन्मध्ये संचितं च यत् ॥ ४१ ॥
वक्तव्यं नात्र संदेहो यत्कृत्वा फलमाप्नुयात्।

प्रारब्धं विस्तरं कर्म वर्तमानं च दृश्यते ॥ ४२ ॥

मनुष्यों के तीन प्रकार के (प्रारब्ध, सञ्चित, क्रियमाण) कर्म होते हैं—इनमें मुझे विशिष्ट रूप से संचित कर्म को कहना है—कारण कि प्रारब्ध विस्तृत रूप है और वर्तमान देखा ही जाता है ॥ ४१–४२ ॥

अश्विन्यादिकनक्षत्रे सर्वेषां जन्म जायते ।
तदापि पादभेदेन ज्ञातव्यं च शुभाशुभम् ॥४३॥

सभी मनुष्यों का अश्विन्यादि नक्षत्रों में जन्म होता है। उनमें चरण भेद से सब का शुभाशुभ फल भिन्न २ प्रकार से ज्ञात करना चाहिये ॥ ४३ ॥

इति पूजनविधिर्नाम प्रथमोऽध्यायः समाप्तः ।

अथ द्वितीयोऽध्यायः ।

अश्विन्याः प्रथमे पादे यदा जन्म प्रजायते ।
तदा ब्राह्मणवर्णोऽयं मध्यदेशसमुद्भवः ॥ १ ॥

यदि अश्विनी के पहले चरण में जन्म हो तो उसके पूर्व जन्म की उत्पत्ति मध्य देश में ब्राह्मणके घर कहनी चाहिये ॥१॥

द्वितीयचरणे देवि पुरा क्षत्री न चान्यथा ।
अयोध्यापुरतः पूर्वं पुत्रकन्याविवर्जितः ॥ २ ॥

हे देवि ! दूसरे चरण में जन्म होने से वह पूर्व जन्म में अयोध्या पुरी से पूर्व क्षत्री के घर सन्तान रहित था, ऐसा कहना चाहिये ॥ २ ॥

तृतीयचरणे देवि वैश्यवर्णसमुद्भवः ।
रोगी कुत्सितवर्णोऽयं मृतवत्सो नपुंसकः ॥ ३ ॥

हे देवि ! जिसका तीसरे चरण में जन्म हो तो वह वैश्य

के घर जन्म लिया था और रोगी, नीच वर्ण का नपुंसक तथा उसकी सन्तान नहीं जीती थी ॥ ३ ॥

चतुर्थचरणे देवि यदा भवति मानवः ।
तदा शूद्रं विजानीयाद्रोगवान् मृतवत्सकः ।
श्यामलः पुष्टदेहश्च कुष्ठरोगेण पीडितः ॥ ४ ॥

हे देवि ! जो मनुष्य चौथे चरण में जन्म लिया हो उसे शूद्र वर्ण और रोगी, मृत सन्तान वाला, श्याम रंग का शरीर से पुष्ट तथा कुष्ठ रोग से पीड़ित जानना चाहिये ॥ ४ ॥

शिव उवाच ।

अथ कर्म प्रवक्ष्यामि यत्कृतं ब्राह्मणादिभिः ।
एको ब्राह्मणवेदज्ञो गुणरूपसमन्वितः ॥ १ ॥

शिवजी बोले—कि जो कर्म ब्राह्मणादि वर्णों ने किया है उसे मैं कहता हूँ—रूप और गुण से युक्त वेद को जानने वाला एक ब्राह्मण था ॥ १ ॥

तस्य पत्नी विशालाक्षी पुंश्चली क्षत्रवंशजा ।
तस्यां पुत्रोऽभवद्देवि नाम्ना नरहरिस्तदा ॥ २ ॥

हे देवि ! उसकी कमल के समान नेत्रवाली दुराचारिणी क्षत्रिय वंश में उत्पन्न स्त्री थी और उसको एक पुत्र नरहरि नाम का उत्पन्न हुआ ॥ २ ॥

ब्रह्मकर्मपरिभ्रष्टो व्याधिभिः पीडितः सदा ।
तस्य मित्रो द्विजोऽप्येको धनपुत्रैश्च संयुतः ॥३॥

वह ब्राह्मणों के कर्म से च्युत होने के कारण सर्वदा दुःखित रहता था और उसका पुत्रों से युक्त एक धनवान् ब्राह्मण मित्र था ॥ ३ ॥

नामतो लग्नशर्मेति निकटे तस्य चागतः ।
आदरं बहुधा कृत्वा स्वर्णं दृष्ट्वा प्रहर्षितः ॥ ४ ॥

वह लग्न शर्मा नाम करके ब्राह्मण था—उसके पास वह आया आने पर उस ब्राह्मण ने अत्यन्त आदर सत्कार के साथ बैठाया तथा उसका सुवर्ण देख कर बहुत प्रसन्न हुआ ॥ ४ ॥

स्वर्णलोभेन तं विप्रं हतवान् पुत्रसंयुतम् ।
स्वर्णं सर्वं हृतं देवि व्ययं कृत्वा दिने दिने ॥५॥

हे देवि ! उसने सुवर्ण लेने के लोभ से उस लग्न शर्मा ब्राह्मण का पुत्र सहित वध कर डाला, और सोने को लेकर नित्य प्रति खर्च करता हुआ—॥ ५ ॥

षडंशैर्गुप्तदानं च गङ्गायमुनसङ्गमे ।
चकार तद्धनैर्भक्त्या विष्णुप्रीतिकरं तदा ॥ ६ ॥

उसमें का छठाँ भाग विष्णु भगवान् के प्रसन्नार्थ गङ्गा और यमुना के संगम स्थान पर गुप्त दान भी किया ॥ ६ ॥

एवं बहुगते काले पत्नी तस्य मृता पुरा ।
पश्चात्सोऽपि ग्रहग्रस्तो मृत्युं प्राप्नोति दुर्जनः ॥७॥

पश्चात् बहुत समय बीत जाने पर उसकी स्त्री मर गयी, बाद को दुर्जन भी ग्रह ग्रसित होकर मर गया ॥ ७ ॥

निक्षिप्तो नरके घोरे यमदूतैर्यमाज्ञया ।
युगसप्ततिपर्यन्तं भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ८ ॥

फिर यमराज की आज्ञा से उनके दूतों ने नरक में डाल दिया और वह सत्तर हजार युगों पर्यन्त नरक की यातनाओं को भोगता पड़ा रहा ॥ ८ ॥

नरकान्निःसृतो देवि शृगालो गहने वने ।
तत्स्थो निजफलं भुक्त्वा कृमियोनावभूत्पुनः ॥ ९ ॥

हे देवि ! जब वह नरक से बाहर हुआ तो शृगाल योनि को पाकर गहन वन में अपने कर्मों का फल भोगता हुआ फिर कृमि योनि को पाया ॥ ९ ॥

पुनर्मानुषयोनिः स तूर्णं च प्रथिते कुले ।
मध्यदेशे शुभे ग्रामे मृतवत्सो ह्यपुत्रकः ॥ १० ॥

वह फिर शीघ्रही मध्य देशीय अच्छे ग्राम में एक प्रतिष्ठित उच्चकुल में उत्पन्न हुआ, तथा उसकी सन्तान जो होती थी वह मर जाती थी अतः वह निःसन्तान था ॥ १० ॥

रुग्णो बहुधनाढ्यश्च गौडो मांसप्रियः सदा ।
तस्य भार्या महालुब्धा पुरा लोकमती च या ॥११॥

वह सदा शरीर से रोगी रहता और गौड जाति का धनवान था । तथा मांस प्रेमी और पहले जन्म की लोकमति नाम वाली उसकी स्त्री बहुत लोभी थी ॥ ११ ॥

पुनर्विवाहिता देवि पूर्वजन्मप्रसङ्गतः ।
मासि पुष्पं भवेत्तस्याः सन्तानं नैव वा भवेत् ॥१२॥

हे देवि वही पूर्व जन्म के संस्कार से फिर उसके साथ व्याही गयी और प्रतिमास ऋतुमति होने पर भी उसे सन्तान नहीं होती थी ॥ १२ ॥

सज्वरा दीर्घनेत्रा सा कुक्षिरोगेण पीडिता ।
इति श्रुत्वा वचस्तस्य महादेवप्रिया शिवा ॥१३॥

वह बड़े नेत्रवाली ज्वर तथा कुक्षि (उदर विशेष) रोग से सदैव पीड़ित रहा करती थी, पार्वती ने (शिवजी के) ऐसे वचन को सुनकर ॥ १३ ॥

प्रणम्य पार्वती देवी शङ्करं परमेश्वरम् ।
उवाच वचनं देवं चराचरगुरुं परम् ॥ १४ ॥

चराचर के गुरु परम ईश्वर जो शिवजी हैं उनको प्रणाम करके पार्वती देवी बोलीं ॥ १४ ॥

प्राणिनां केवलं कर्म तव मायाविचेष्टितम् ।
शुभमेवाशुभं चैव कथं जानामि पूर्वजम् ॥

तत्सर्वं कृपया देव वद मे परमेश्वर ॥ १५ ॥

हे देव ! प्राणियों के पूर्व जन्म के शुभाशुभ कर्म आपके माया से ही होते हैं, वह किस प्रकार जाने जायँ, हे परमेश्वर ! कृपा कर आप उसका स्पष्ट वर्णन करें ॥ १५ ॥

शिव उवाच ।

त्रिविधं प्राणिनां कर्म नृणां चैव स्वभावजम् ।
अनिष्टमिष्टं मिश्रं च त्रिविधं कर्मणः फलम् ॥ १६ ॥

शिवजी ने कहा——प्राणियों के तीन प्रकार के स्वाभाविक कर्म हैं और उसका निकृष्ट, शुभ, तथा मध्यम ये तीन प्रकार के फल भी होते हैं ॥ १६ ॥

अनिष्टं नागलोके च नरके विविधे तथा ।
इष्टं स्वर्गे फलं देवि मिश्रं मर्त्ये प्रजायते ॥ १७ ॥

हे देवि ! अधम कर्म नाग लोक में तथा विविध प्रकार के नरकों में भोगना पड़ता है । और शुभ कर्म फल स्वर्ग में और मध्यम कर्म फल को मनुष्य लोक में भोग किया जाता है ॥ १७ ॥

रोगतश्चेष्टया देवि ज्ञेयं सर्वं शुभाशुभम् ।
राजरोगी भवेद्यस्तु ब्रह्महा पूर्वजन्मनि ॥ १८ ॥

हे देवि ! चेष्टा तथा रोगों से समस्त शुभाशुभ कर्मों का ज्ञान करना चाहिये, जैसे राज रोगी (यक्ष्मादि) हो तो वह पूर्व जन्म में ब्रह्मघाती था ॥ १८ ॥

पुत्रकन्याविहीनो यो गोत्रहा गुरुहा भवेत् ।
पाण्डुरोगी नरो यस्तु देवपूजनवर्जितः ॥ १९ ॥

जो पुत्र तथा कन्या से वञ्चित हो तो समझना कि वह पूर्व जन्म का सगोत्रघाती या गुरुघाती था । जो मनुष्य देवताओं का पूजन नहीं करता वह पाण्डु (जलोदर) रोगी होता है ॥ १९ ॥

कन्यापत्यं भवेद्यस्य वेदनिन्दा कृता तदा ।

कन्याघातो पत्तिघाती तस्य भार्या न जीवति॥२०॥

और जिसे कन्या ही अधिक हों उसे पूर्व जन्म का वेद निन्दक जानना चाहिये, और चिड़ियों तथा लड़कियों को मारने वाले की स्त्री नहीं जीवित रहती ॥ २० ॥

भ्रातृहा यः पुरा देवि स ज्वरेण प्रपीडितः।
घण्टावादित्रहारी च कररोगो नरो भवेत् ॥२१॥

हे देवि ! जो मनुष्य पूर्वजन्म में अपने भाइयों को मारने वाला होता है वह सर्वदा ज्वर से पीड़ित रहता है। और घण्टा बाजा आदि का चोरी करने वाला हाथ रोगी होता है ॥२१॥

भगिनीनाशनं देवि कृतं यैः पूर्वजन्मनि।
तेन पापेन भो देवि ते ज्वरेण प्रपीडिताः ॥२२॥

तथा हे देवि! जो पूर्वजन्म में निज बहिन का नाश करने वाला होता है वह उस अपराध से ज्वर पीड़ित रहता है॥२२॥

मित्रद्रोही बालघाती पशुघाती तथैव च।
तत्फलेन महादेवि मृतवत्सश्च रोगवान् ॥ २३ ॥

हे देवि ! जो मनुष्य मित्र द्रोही, बालघाती, पशुओं को मारने वाला है वह मृत सन्तान (अर्थात् सन्तान होकर मर जाती है) वाला तथा रोगी होता है ॥ २३ ॥

कायाघाती गर्भपाती धनपुस्तकहारकः।
जन्मान्धो जायते देवि नात्र कार्या विचारणा॥२४॥

और आत्मघाती, गर्भ का नाश करनेवाला, धन तथा पुस्तकें चुराने वाला प्राणी निःसन्देह जन्मान्ध होता है ॥२४॥

वस्त्रहा भूमिहारी च परनिन्दापरस्तथा।
तेन पापेन भो देवि दरिद्रो जायते नरः ॥ २५ ॥

हे देवि! वस्त्र चुरानेवाला और भूमि हरण करने वाला तथा दूसरे की निन्दा करनेवाला मनुष्य इन पापों से दरिद्री होता है।२५

गोदारापहारी च दीर्घरोगी भवेन्नरः ।
महिषीपुत्रघाती च कम्परोगी प्रजायते ॥ २६ ॥

और सगोत्र की स्त्री हरण करनेवाला दीर्घ रोगी (वात कुष्ठादि) होता है तथा गर्भिणी भैंस का वध करने वाला कम्पन रोग वाला होता है ॥ २६ ॥

निर्बीजं वृषभ यो वै प्रकरोति नराधमः ।
षण्ढस्संजायते देवि मूत्रकृच्छ्री भवेत्ततः ॥ २७ ॥

हे देवि ! जो अधम मनुष्य बैलको वधिया करते हैं वे नपुंसक तथा मूत्रकृच्छ्र (प्रमेह) रोगी होते हैं ॥ २७ ॥

मातृहा पितृहा देवि महाकुष्ठी नरो भवेत् ।
अगम्यागमनं यस्तु वीरयोषागमं तथा ॥ २८ ॥

और जो मनुष्य माता-पिताको मारने वाले होते हैं, वे महा कुष्ठी (कोढ़ी) होते हैं । और अगम्या स्त्री के साथ तथा वीराङ्गनाके साथ रमण करने वाले—॥ २८ ॥

करोति योऽधमस्तस्य शरीरं ज्वरपीडितम् ।
गोवधी जायते देवि श्वेतकुष्ठी नरः सदा ॥२९॥

उस अधम पुरुष का शरीर ज्वर रोग से पीड़ित रहता है । तथा हे देवि ! गो वधिक मनुष्य श्वेत कुष्ठी (सफेद कोढ़) से सदा युक्त रहता है ॥ २९ ॥

कन्यकागमनं यस्तु करोति हठतः पुरा ।
तेन पापेन भो देवि रोगवान्धनवर्जितः ॥ ३० ॥

जो मनुष्य पूर्वजन्म में इच्छा विरुद्ध बल पूर्वक कन्या कुमारी केसाथ रमणकियाहैवह उसपाप से रोगीऔर दरिद्री होता है॥३०॥

पुष्पगन्धापहारी च मुखे तस्य विगन्धता ।
घृतहारी भवेत्कुष्ठी तस्माद्भ्रष्टः कृमिर्भवेत् ॥३१॥

और पुष्प सुगन्धियों को चुराने वाले का मुख दुर्गन्धित

होता है, घी चुराने वाला कोढ़ी तथा उस योनि से छूटकर कृमि योनि में जन्म लेता है ॥ ३१ ॥

वृक्षगन्धापहारी च काकः संजायते नरः ।
वापीकूपापहारी च दद्रुरोगी भवेन्नरः ॥ ३२ ॥

वृक्षों के गन्ध (फलादि) को चुराने वाला मनुष्य काक (कौआ) योनि को पाता है । बावली तथा कुँआ को नष्टभ्रष्ट करनेवाला दद्रु (दाद) रोगी होता है ॥ ३२ ॥

देवयात्रापहारी च कण्ठरोगी भवेन्नरः ।
सारङ्गीतघाती च वने दावाग्निदाहकः ॥ ३३ ॥
अक्षिरोगी नासिकायां व्रणी कृमिसमाकुलः ।
तैलहारी भवेत्तैली गुडहारी ज्वरी सदा ॥ ३४ ॥

देव यात्रा (तीर्थादि मार्ग) को भ्रष्ट करनेवाले मनुष्य के गले में कण्ठमालादि रोग होता है । सारङ्ग आदि पक्षियों के कलरव को बन्द करने तथा वन में अग्नि लगाने वाला नेत्र रोगी और उसके नाक में छिद्र हो जाने से कीड़े पैदा होकर गिरा करते हैं । तथा तेल चुराने वाला तेली, गुड़ चुराने वाला ज्वर-पीड़ित रहता है ॥ ३३–३४ ॥

स्वर्णरौप्यापहारी च नरो भवति पुत्रहा ।
दासदासीहरो यस्तु नरो भवति कर्णरुक् ॥ ३५ ॥

जो मनुष्य सोना, चाँदी चुराने वाला होता है, वह अपने पुत्रका नाश करता है, दास दासियों का हरण करने वाला मनुष्य कर्णरोगी होता है ॥ ३५ ॥

लोहमूल्यापहारी च पाण्डुरोगी भवेन्नरः ।
दधिदुग्धहरो यस्तु कुक्षिरोगी भवेन्नरः ॥ ३६ ॥

और जो लोहा खरीद कर उसका मूल्य नहीं देता वह मनुष्य पाण्डुरोगी (जलोदरी) होता है ॥ दही दूध का चोरी करने वाला कुक्षि (कोख में रोग) रोगी होता है ॥ ३६ ॥

मार्गग्राही वस्त्रहारी बाहुरोगी प्रजायते।
मयूरकुक्कुटानां च कच्छपानां च बाधकः ॥ ३७ ॥

रास्ते को घेरने वाला तथा वस्त्रों का अपहरण करने वाला पाण्डुरोगी और मोर, मुर्गा, कछुआ इनको पीड़ा देनेवाला मनुष्य

वातरोगी च खञ्जश्च जन्म जन्म नपुंसकः।
मद्यपी मांसभोजी च मत्स्यभोजी तथैव च ॥३८॥

वात रोगी, लँगड़ा तथा अनेक जन्म तक नपुंसक होता है। शराबी, मांसाहारी, मछली खाने वाला ॥ ३८ ॥

तेन पापप्रभावेण चर्मकारो हि जायते।
अन्नहा जलहा चैव दन्तरोगी भवेन्नरः ॥ ३९ ॥

उपरोक्त पाप के कारण मोची (चमार) के घर जन्म लेता है और अन्न तथा जल चुराने वाले के दाँत में रोग होता है ॥३९॥

ब्राह्मणस्य गृहं यस्तु धनधान्यसमन्वितम्।
हरणं तस्य वै कुर्यान्मृगीरोगी भवेन्नरः ॥ ४० ॥

जो धन धान्य से परिपूर्ण ब्राह्मण के गृह का अपहरण करता है, उसे मृगी रोग होता है ॥ ४० ॥

एवं बहुविधो रोगो नाराणां चैव जायते।
पूर्वकर्मफलं चैव भुज्यते खलु मानवैः ॥ ४१ ॥

इति कर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिव-संवादे
कृतकर्म भोगो नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

इस तरह के अनेकों रोग मनुष्यमात्र को हुआ करते हैं, पूर्वजन्म के किये हुए कर्म के फल उन्हें अवश्य ही भोगने पड़ते हैं ॥ ४१ ॥

दूसरा अध्याय समाप्त।

अथ तृतीयोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि यत्प्रश्नं भुवि जायते ।
प्रायश्चित्तं नराणां च मेषराशिक्रमादनु ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं—कि हे देवि ! संसार में जितने प्रश्न होते हैं, उन्हें मैं मनुष्यों के मेषादि राशियोंके कर्म से प्रायश्चित सहित कहता हूँ, उसे ध्यानपूर्वक सुनो ॥ १ ॥

ब्राह्मणं स्वर्णलोभेन हत्वा चैव सपुत्रकम् ।
स्वर्णं भुक्तं सदारेण तत्पापात् पुत्रवर्जितः ॥ २ ॥

सोने के लोभसे पुत्र सहित ब्राह्मण का वध करके स्त्री सहित सुवर्ण भोग किया इस पापसे उसे पुत्र नहीं है ॥ २ ॥

प्रायश्चित्तं जपं देवि गायत्री त्र्यम्बकं ततः ।
पञ्चलक्षप्रमाणेन ततः पापात् प्रमुच्यते ॥ ३ ॥

हे देवि ! उसके प्रायश्चित के लिए गायत्री और त्र्यम्बक मंत्रों का पाँच लाख जप करावे तो वह उस पाप से छूटता है ॥३॥

ब्राह्मणस्य सपुत्रस्य प्रतिमां कारयेद्बुधः ।
स्वर्णं दशपलस्यैव तां सम्पूज्य प्रयत्नतः ॥ ४ ॥

*(दशपल) पचास तोलेसे ऊपर सोनेकी पुत्रसहित ब्राह्मण की मूर्ति बनवाकर सविधि उसका पूजन करे ॥ ४ ॥

कुण्डं कृत्वा ततो देवि चतुरस्रं प्रसन्नधीः ।
प्रतिमां पूजयेच्चैव मन्त्रेणानेन भो प्रिये ॥ ५ ॥

हे प्रिये ! पुनः चतुष्कोण कुण्ड बनाय तथा स्वस्थ चित्त होकर अग्रिम लिखित मन्त्रों द्वारा मूर्ति का पूजन करे ॥ ५ ॥

---

* दशार्धगुञ्जं प्रवदन्ति माषं माषाह्वयैः षोडशभिश्च कर्षम्
कर्षैश्चतुर्भिश्च पलं तुलाज्ञाः कर्षं सुवर्णस्य सुवर्णसंज्ञम् ॥

ॐ नमो गणाधिपतये गन्धपुष्पादिबलिं समर्पयामि नमः ॥ ॐ इन्द्राय नमः ॥ ॐ अग्नये नमः ॥ ॐ यमाय नमः ॥ ॐ निर्ऋतये नमः ॥ ॐ वरुणाय नमः ॥ ॐ कुबेराय नमः ॥ ॐ कालाय नमः ॥ ॐ शिवाय नमः ॥ ॐ ब्रह्मणे नमः ॥ ॐ अनन्ताय नमः ॥ ॐ गरुडवाहनाय नमः ॥ ॐ विष्णवे नमः ॥ ॐ जयाय नमः ॥ ॐ विजयायनमः ॥ ॐ पुण्यशीलायनमः ॥ ॐ सुशीलायनमः ॥

ॐ सर्वे देवास्तथा दैत्या ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ।
मत्पापं यत्पुरा जातं तत्सर्वं क्षम्यतां सदा ॥ ६ ॥

हे सम्पूर्ण देवताओं तथा दैत्यों और ब्रह्मा, विष्णु, महेश आप मेरे पूर्वजन्म के किये हुए पापों को क्षमा करें ॥ ६ ॥

इमां पूजां गृहाणैवं मम पुत्रं प्रयच्छतु ।
अज्ञानाद्वा प्रमादाद्वा यत्कृतं पूर्वजन्मनि ॥ ७ ॥

हे भगवान् ! इस (पूजा को) ग्रहण करें तथा मुझे संतान देवें अज्ञानता से या अहंकार वश जो कुछ मैंने पहले जन्म में किया है ॥ ७ ॥

तत्सर्वं क्षम्यतां देव प्रयच्छ शरणं मम ।
ततो नवग्रहाः सर्वे दिक्पालाश्चाप्युपग्रहाः ॥ ८ ॥

वह सब हे देव ! आप क्षमा करें और मुझे शरण में लीजिये । तत्पश्चात् उपग्रह सहितदशों दिक्पालों तथा नवग्रहोंका पूजनकरे ॥ ८ ॥

सर्वे ममापराधान्मे क्षम्यतां पूर्वजन्मनः ।
एवं सर्वं यथान्यायं पूजां कृत्वा विचारतः ॥ ६ ॥

तथा इस प्रकार कहे कि, पूर्वजन्म में मेरे द्वारा जो अपराध हुए हों उसे आप क्षमा करें । और विधिवत् सब पूजन करके ॥ ६ ॥

ततो होमं प्रकुर्वीत तिलधान्यादितन्दुलैः ।

दशांशं होमयेद्देवि तर्पणं मार्जनं तथा ॥ १० ॥

पुनः कर्म के बाद तिल, यव, चावल आदि वस्तुओं के दशांश (घी) से हवन, उसके दशांश से तर्पण तथा मार्जन करे ॥ १० ॥

गोदानं च ततः कुर्याद्दशवर्णं विशेषतः ।
वृषमेकं प्रदातव्यं स्वर्णशृङ्गं सहाम्बरम् ॥ ११ ॥

और दश रंगवाली गौवों का दान करे तथा सोने से मढ़ा हुआ सींग वाला वस्त्र से युक्त एक बैल भी दान करे ॥११॥

ततो वै ब्राह्मणान्देवि भोजयेद्विधिपूर्वकम् ।
भोजनान्ते ततो दानं सुवर्णं दक्षिणां ततः ॥१२॥

हे देवि ! तदनन्तर विधिपूर्वक ब्राह्मणों को भोजन कराकर दक्षिणा में सुवर्ण दान देवै ॥ १२ ॥

प्रतिमालंकृता देवि ! वाचकाय प्रदापयेत् ।
एवंकृते महादेवि वंशो भवति नान्यथा ॥ १३ ॥

हे महादेवि ! उस सुसज्जित मूर्ति को विधि विधान के बताने वाले आचार्य को दे दे । इस प्रकार नियम करने वाले का अवश्य वंश चलता है ॥ १३ ॥

एकादशीव्रतं चैव सप्तमीं रविसंयुताम् ।
यावत्स्वमरणं देवि कुर्यात्सत्ययुतो नरः ॥ १४ ॥

और हे देवि ! वह मनुष्य जब तक जीवे तबतक एकादशीव्रत और रवियुक्त सप्तमीका व्रत तथासत्यभाषण काभीनियम रखे॥१४॥

पूर्वपापविशुद्धिःस्याद् व्याधिरेवं विनश्यति ॥१५॥

इति कर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसम्वादे
प्रायश्चित्तकथनं नाम तृतीयोऽध्यायः ॥३॥

इस प्रकार के आचरण वाला पुरुष अवश्य पूर्वजन्म कृत पापों का निःसन्देह नाश करता है ॥ १५ ॥

तीसरा अध्याय समाप्त ॥

अथ चतुर्थोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अथ द्वितीये वक्ष्यामि प्रायश्चित्तं तथाम्बिके ।
अश्विन्यां जायते देवि पूर्वकर्मविपाकतः ॥ १ ॥

शिवजी बोले—कि हे देवि ! अब पूर्व कर्मविपाक से अश्विनी के द्वितीय चरण के प्रायश्चित को कहते हैं ॥ १ ॥

अयोध्या पुरतो देवि पूर्वे क्रोशचतुष्टये ।
सरय्वा निकटे चैव वर्णसंकरक्षत्रियः ॥ २ ॥

हे देवि ! अयोध्यापुरी से चार कोस दूरी पर पूर्व दिशा में सरयू के तट पर एक वर्णसंकर क्षत्री रहता था ॥ २ ॥

नामतः श्वेतवर्मेति पुत्रदारसमन्वितः ।
एकदा मातुलो देवि पुत्रेण सह संयुतः ॥ ३ ॥

हे देवि ! उसका नाम श्वेतवर्मा था, स्त्री तथा पुत्रसे युक्त था। उसका मामा एक समय पुत्र के साथ आया ॥ ३ ॥

आगतो निकटे देवि स्वर्णकोटिसमन्वितः ।
आदरं बहुधा कृत्वा गृहे वासं ददौ च सः ॥ ४ ॥

वह करोड़ों रुपये का सोना लेकर उसके पास आया और वह अत्यन्त सत्कार के साथ अपने घर में आश्रय दिया ॥ ४ ॥

तस्य पत्नी गुणवती रूपयौवनसंयुता ।
मासमेकं तदा देवि प्रत्यहं भगिनीगृहे ॥ ५ ॥

हे देवि ! उसकी स्त्री रूप और गुणों से युक्त युवा थी। उसका मामा भी एक मास अपने बहिन के गृह में रहा ॥५॥

भुज्यते सह पुत्रेण चामिषं विविधं तथा ।
मासान्ते चावधीद्रात्रौ मातुलं सह पुत्रकम् ॥ ६ ॥

उसे नित्यपुत्र सहित हरेक तरहका मांस खातेएक महिनाहुआ

किएक दिनरात कोसोते हुएपुत्र सहितमामा कावध करडाला ॥६॥

भूमिमध्ये शवं ताभ्यां यत्नतः स्थापितं तदा ।
स्वर्णकोटिं प्रजग्राह पापात्मा गुरुघातकः ॥ ७ ॥

और उस मृत शव को स्त्री पुरुषों ने मिलकर वहीं भूमिमें गाड़ दिया तथा गुरुघातक तुल्य अर्थात् (गुरुके वध तुल्य) फिर उसके द्रव्यों को ले लिया ॥ ७ ॥

पत्न्या सह ततो द्रव्यं व्ययं कुर्वन् दिने दिने ।
एवं बहुगते काले क्षत्री कालवशोऽभवत् ॥ ८ ॥

औरफिरदोनों (स्त्रीपुरुष) मिलकरनित्यप्रति आनन्दसेखर्चते हुएसमय बितानेलगे। कुछदिनके बादउस क्षत्रीकी मृत्युहोगयी॥८॥

पश्चान्मृता ततः पत्नी निर्जने गहने वने ।
कर्दमे नरके घोरे यमदूतैर्यमाज्ञया ॥ ९ ॥

बादको उसकी स्त्रीभीएक गहनवनमें जाकरशरीरका त्यागकर दीमरनेके बाद यमाज्ञा से यमदूतों ने घोर कर्दम नामक नरकमें ॥९॥

निक्षिप्य महतीं पीडां तयोर्दत्त्वा ततः प्रिये ।
युगमेकं वरारोहे भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥१०॥

उन दोनों को डाल अनेक प्रकार की पीडायें देने लगे । हे प्रिये ! उन लोगों ने एक युग तक नरक यातना भोगी ॥१०॥

नरकान्निःसृतो देवि गर्दभत्वमजायत ।
पुनः सरटयोनिं तु भुक्त्वा मर्त्यस्ततोऽभवत् ॥११॥

हे देवि ! नरक से निकल फिर गदहे की योनि पायी, उसके बाद गिरगिट की योनि, अब मनुष्य योनिमें जन्म लिया है ॥११॥

हतोऽनेन पुरा देवि मातुलः पुत्रसंयुतः ।
तत्पापफलतो देवि वंशच्छेदश्च जायते ॥१२॥

प्रथम इसने पुत्र सहित मामा का वध किया था, अतः हे देवि ! उस पाप के फलसे इसका वंश नाश हो गया ॥१२॥

रोगयुक्ताऽभवद्देवि पत्नी वै पूर्वजन्मनि ।
ततो विवाहिता जाता पुनर्वै पूर्वकर्मतः ॥१३॥

हे देवि! इसकी स्त्री पूर्वजन्म में रोगी थी और पूर्वजन्म के संस्कार से वह उसके साथ फिर व्याही गयी ॥ १३ ॥

कासश्वाससमायुक्तो विषमज्वरपीडितः ।
प्रायश्चित्तं ततस्तस्य प्रवक्ष्यामि वरानने ॥१४॥

हे सुभगे! खाँसी, दमा और विषमज्वर से वह सर्वदा क्लेशित रहता है, अब उसका प्रायश्चित्त कहता हूँ ॥ १४ ॥

प्रत्यहं ब्राह्मणे दानं भक्तिपूर्वं वरानने ।
दशधेनुं प्रयत्नेन हरिवंशश्रुतिं तथा ॥१५॥

वह प्रति दिन हरिवंश का पाठ श्रवण करे तथा दश गौवों का दान ब्राह्मण को करे ॥ १५ ॥

सुवर्णप्रतिमां कृत्वा पलं पञ्चदशस्य च ।
वर्तुलाकारकुण्डे वै होमं कृत्वा प्रसन्नधीः ॥१६॥

और पन्द्रह पल सोने की मूर्ति बनवाकर पूजन तथा स्वस्थ होकर गोलाकार कुण्डमें हवन करे ॥ १६ ॥

गायत्रीलक्षजाप्यं च कारयेत्तु प्रयत्नतः ।
दशांशहोमः कर्तव्यो विप्राणां भोजनं तथा ॥१७॥

और गायत्री मंत्रका एक लाख जप तथा उसका दशांश हवन तथा ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ १७ ॥

शय्यादानं विशेषेण प्रतिमां पूजयेत्ततः ।

विशेष रूप से शय्यादान करके मूर्तिका पूजन करे ।

अथ प्रतिमापूजनम् ।

षोडशाङ्गुलिका वेदी मृत्तिकासप्तसंयुता ।
चतुरस्रा विचित्रा च गन्धपुष्पसमन्विता ।

तत्रैव प्रतिमां कृत्वा स्थापितां पूजयेत्ततः ॥१८॥

प्रतिमा पूजनकी विधि यह है कि सात स्थानों (अश्वशाला, गोशाला, राजद्वार, प्रतिष्ठा किये हुए तालाब की, हाथी के स्थानकी, बेमउट, नदी संगम) की मिट्टी लेकर सोलह अंगुल प्रमाण, चतुष्कोण वेदी बनावे । उसपर गंध पुष्पादि से अलंकृत प्रतिमा स्थापित कर पूजन करे ॥ १८ ॥

ॐ चक्रधराय नमः ॥ ॐ गदाधराय नमः ॥ ॐ शार्ङ्गिणे नमः ॥ ॐ गरुडाय नमः ॥ ॐ विष्णवे नमः ॥ ॐ शिवाय नमः ॥ ॐ ब्रह्मणे नमः । ॐ प्रजापतये नमः ॥ ॐ सर्वेश्वराय नमः ॥ ॐ लक्ष्म्यै नमः ॥

उपरोक्त इन मंत्रों से पूजन करे ॥

देवदेव महादेव शङ्खचक्रगदाधर ।
मम पूर्वं कृतं पापं हर त्वं धरणीधर ॥१९॥

हे देवाधिदेव महेश्वर ! हे शंख, चक्र, गदा को धारण करनेवाले ! हे पृथिवी को धारण करनेवाले ! आप मेरे पूर्वजन्म कृत पापों का शमन करें ॥ १९ ॥

एवं पूजां समाप्यैव प्रतिमां तां च दापयेत् ।
आचार्याय तदा देवि सुवर्णं दक्षिणां ततः ॥२०॥

हे देवि ! इस प्रकार पूजन समाप्त करनेके बाद उसे आचार्य ब्राह्मण को दे देवे और श्रद्धा सहित सुवर्ण दक्षिणा दे ॥ २० ॥

ततः प्रदक्षिणां कृत्वा ब्राह्मणे व्यासरूपिणे ।
माघे मासि प्रयागे तु स्नानं पत्नीसमन्वितः ॥२१॥

पुनः उस वेद व्यास स्वरूप आचार्य ब्राह्मणकी प्रदक्षिणा करे औरअपनी स्त्रीकेसाथ माघमासमें प्रयागतीर्थमेंजाकरस्नानकरे॥२१

एवं कृते न संदेहो वंशो भवति नान्यथा ।
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं वन्ध्यात्वञ्च विनश्यति ॥२२॥

रोगी च मुच्यते रोगात् कन्यका नैव जायते ॥२३॥
इति कर्मविपाकसंहितायामश्विनीनक्षत्रद्वितीयपाद-
विमर्शोनाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

इस प्रकार नियमपूर्वक करने से अवश्य सन्तान होती है। और जिनकी सन्तानें होकर मरजाया करती हैं, तथा जिन्हें सन्तान नहीं है उन्हें सन्तान सुख और रोगी रोग से मुक्त होता है जिनको केवल कन्या होती हैं उन्हें कन्या न होंगी ॥२२-२३॥

चतुर्थ अध्याय समाप्त।

—:*:—

अथ पञ्चमोऽध्यायः।

शिव उवाच।

अथातः संप्रवक्ष्यामि नक्षत्रतुरगस्य तु।
तृतीयस्य ततो देवि प्रायश्चित्तमतः शृणु ॥ १ ॥

शिव जी कहे—कि हे देवि ! अब अश्विनी नक्षत्रके तीसरे चरण का प्रायश्चित कहता हूँ उसे ध्यान से सुनो ॥ १ ॥

अयोध्यापुरतो देवि दक्षिणे पूर्वदिग्गते।
नारायणपुरे रम्ये राजपुत्रोऽभवत्तदा ॥ २ ॥

हे देवि ! अयोध्यापुरीसे अग्निकोणमें स्थित सुन्दर रमणीक नारायणपुर नामक नगरमें एक क्षत्री का जन्म हुआ ॥ २ ॥

स्वकर्मनिरतो दान्तः प्रजापोषणतत्परः।
नामतश्चोलसिंहेति तस्य पत्नी प्रभावती ॥ ३ ॥

वह दान्त अपने कर्म में निरत सदा प्रजापालन में तत्पर तथा चोल मुख नामवाला था उसकी स्त्री प्रभावती थी ॥ ३ ॥

तस्य मित्रं द्विजोऽप्येकः स्वकर्मपरिवर्जितः।
एकदा मृगयां यातो राजपुत्रः स ब्राह्मणः ॥४॥

उसका एक मित्र निजकर्म से वञ्चित ब्राह्मण था। एकसमय ब्राह्मण तथा क्षत्रिय दोनों शिकार खेलने के लिए गये ॥ ४ ॥

मृगं हत्वा वरारोहे जग्मतुर्गहने वने।
मांसस्य देवि भागार्थं कलहो हि महानभूत् ॥५॥

हे देवि! वे दोनों मृगों को मारकर दुर्गम गहन जंगलमें जा पहुँचे और दोनोमें मांस बाँटनेमें महान् कलह हो गया ॥५॥

ततः स ब्राह्मणो दुष्टः क्रोधेनैवापि च द्विषन्।
मरणं तस्य भो देवि बभूव गहने वने ॥ ६ ॥

उसी कारण अन्त में वह दुष्ट द्रोही ब्राह्मण उस कठिन जंगल में मृत्यु ग्रस्त हो गया ॥ ६ ॥

ततश्चिन्तापरीतात्मा राजपुत्रो गृहं ययौ।
गृहे च कारयामास तस्य कर्म यथाविधि ॥ ७ ॥

पश्चात् वह राजपुत्र उसकी चिन्ता से सन्तप्त होकर अपने घर चला आया और उसका यथाविधि कर्म कराया ॥ ७ ॥

ततो बहु गते काले प्रयागे मकरे मुदा।
शरीरं त्यक्तवान् देवि भार्यया सहितस्तदा ॥ ८ ॥

वह फिर बहुत समय बीतनेके बाद स्त्री सहित प्रयाग तीर्थमें जाकर मकरसंक्रान्तिमेंआनन्दसे अपनेशरीरका त्यागकर दिया॥८॥

स्वर्गं भुक्त्वा युगान् सप्त ततः पुण्यक्षये सति।
मर्त्यलोकेऽभवज्जन्म धनधान्यसमन्वितः ॥ ९ ॥

और सात युगों तक स्वर्ग सुखका भोग कर अन्तमें पुण्य क्षीण होने पर मृत्यु लोकमें धन धान्यसे परिपूर्ण जन्म लिया॥९॥

भार्यया सहितो देवि मध्यदेशे वरानने।
पुत्रो न जायते देवि पूर्वकर्मविपाकतः ॥ १० ॥

हे देवि! वह स्त्री सहित मध्यदेशमें जन्म लिया और जन्मान्तर के दोष से उसे पुत्र नहीं होता था ॥ १० ॥

ब्रह्महत्याफलेनैव मृतवत्सोऽपि वा भवेत्।
तस्य शुद्धिं प्रवक्ष्यामि यतः पुत्रः प्रजायते ॥११॥

या ब्रह्महत्याके फलसे सन्तान जीवित नहीं रहती, अबउसके (पाप) की शुद्धि को कहता हूँ जिससे उसको पुत्र हो ॥ ११ ॥

तदुद्देशेन कर्तव्यस्तडागो वापिका पथि।
हरिवंशश्रवणं देवि विधिपूर्वमतः शिवे ॥ १२ ॥

हे शिवे! (पार्वती) पुत्र के उद्देश्य से वह राह में तालाब, कुआँ खुदावे तथा हरिवंश कथा को सुने तो कल्याणप्रद हो॥१२॥

दशवर्णाः प्रदातव्याः स्वर्णयुक्ताः सहाम्बराः।
एवं कृते न सन्देहो वंशस्तस्य प्रजायते ॥ १३ ॥

तथा कई प्रकार की गौवों का दान और तुलादान वस्त्रदान करने से अवश्य वंशवृद्धि होती है। इसमें संशय नहीं ॥ १३ ॥

सा स्त्री स्यात्सुखिनी देवि सत्यमेव न संशयः।
काकवन्ध्यात्वमुक्तास्यात् मृतवत्सा सुखावहा॥१४॥
व्याधिनाशो भवेद्देवि नात्रकार्या विचारणा ॥१५॥

इति कर्मविपाक-संहितायामश्विनीनक्षत्रतृतीय-पादविमर्शो नाम पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

हे देवि! वह स्त्री सुखी तथा काकवन्ध्यादोषसे छूटकर पुत्रवती होगी। और मृतवत्सा कोभी निःसन्देह सन्तानसुख होगा,ऐसाकरने से रोगोंका नाशहोता है,हेदेवि! इसेबिना विचारे ही करें॥१४-१५॥

पाँचवा अध्याय समाप्त।

—:(❀):—

अथ षष्ठोऽध्यायः।

शिव उवाच।

शृणु देवि वरारोहे नृणां कर्मविपाकजम्।
तदहं संप्रवक्ष्यामि यथाकर्मानुसारतः ॥ १ ॥

शिवजी बोले-कि हे देवि ! मनुष्यों के जन्मान्तर के कर्मानु सार प्रादुर्भूत फलों का वर्णन करता हूँ उसको ध्यानसे सुनो ॥१॥

पुत्रा बहुविधा देवि लौकिका वै विचक्षणाः ।
जायन्ते नात्र संदेहस्तत्सर्वं शृणु वल्लभे ॥ २ ॥

हे देवि ! अनेक प्रकार के लौकिक विद्वान् पुत्र पैदा होतेहैं इसमें कुछ भी सन्देह नहीं । वल्लभे वह सब सुनो ॥ २ ॥

प्रथमः पुण्यसंबन्धो मातृपितृप्रियः सदा ।
सुसेवादिरतो नित्यं पितुर्मातुश्च यत्नतः ॥ ३ ॥

उसमें प्रथम पुण्य सम्बन्धवाला पुत्र माता पिता काप्रियहोता है तथा यत्नपूर्वक माता पिता की सेवा में नित्य तैयार रहताहै॥३॥

आजन्ममरणाद्देवि पितुराज्ञां करोति च ।
मरणे पितृमात्रोश्च श्राद्धं कुर्याद्दिने दिने ॥ ४ ॥

हें देवि ! आजन्ममाता पिता का आज्ञाकारी तथा सेवामेंनिरत रहताहै और उनकेमरने केबाद श्राद्धतर्पणकरना यही पुत्रका धर्महै४

पितृश्राद्धं विना देवि भोजनं न करोति हि ।
द्वितीयः शत्रुसंबन्धी तस्य चेष्टाञ्च मे शृणु ॥ ५ ॥

हे देवि ! वह पुत्र माता पिता का श्राद्ध विना किए भोजन भी नहीं करता और दूसरा पुत्र शत्रुवत् व्यवहार वालाजो होता है उसकी चेष्टा मुझसे सुनो ॥ ५ ॥

पूर्वजन्मप्रसङ्गेन शत्रुः पुत्रः प्रजायते ।
जन्मतः शत्रुरूपेण मातृपित्रोर्विरोधकृत् ॥ ६ ॥

पूर्वजन्म के सम्बन्ध से वह लड़का शत्रु होता है और जन्म से ही वह माता पिता के साथ शत्रुवत् व्यवहार करता है ॥६॥

तत्कर्म कुरुते येन तयोः क्लेशोऽभिजायते ।
तृतीयो ऋणसंबन्धान्मत्तः शृणु वरानने ॥ ७ ॥

वह ऐसा व्यवहार (कर्म) करता है कि उसके व्यवहार से

उनको दुःख होता है। हे प्रिये! तीसरे ऋण के सम्बन्ध द्वारा जो होता है वह सुनो ॥ ७॥

ऋणं यस्य गृहीतस्तु न दत्तं हठतः प्रिये।
तदा पुत्रत्वमाप्नोति द्रव्यदाता न संशयः ॥ ८ ॥

हे प्रिये! जन्मान्तर में जिससे कर्ज लिया हो और उसको हठ से न दिया हो तो वह कर्ज देनेवाला निःसन्देह पुत्ररूप होकर उसके यहाँ जन्म लेता है ॥ ८ ॥

पितृद्रव्यं प्रयत्नेन गृह्णाति हठतः प्रिये।
द्यूतवेश्याप्रदानेन व्ययं कुर्याद्दिने दिने ॥ ६ ॥

हे प्रिये! वह प्रतिदिन हठपूर्वक यत्न करके पिता से रुपये लेता है और उसे जूआ में तथा वैश्यागमन में नित्य खर्चता है॥६॥

यदा द्रव्यविहीनश्च पिता भवति वै प्रिये।
तदा मृत्युमवाप्नोति युवारूपो न संशयः ॥१०॥

हे प्रिये! जब उसका पिता धन से हीन होकर गरीब होजाता है। तब वह युवा अवस्था में ही मर जाता है ॥ १० ॥

चतुर्थो मित्ररूपेण पुत्रो जायते पार्वती।
स्थापितं द्रव्यमन्यस्य न दत्तं पूर्वजन्मनि ॥११॥

हे पार्वती! चौथा पुत्र मित्र तुल्य होता है, वह पूर्वजन्ममें जिस किसी का धन अपने पास रख उसको न दिया हो ॥११॥

तत्सबन्धस्वरूपेण पुत्रो जातस्तदा शिवे।
बहुप्रीतिं पितृभ्याञ्च पितृव्ये गोत्रजे तथा ॥१२॥

तो वह उस सम्बन्ध के कारण उसका पुत्र होकर जन्म पाता है। और हे पार्वती! माता, पिता, चाचा आदि गोत्र वालों से अधिक प्रेम रखनेवाला होता है ॥ १२ ॥

बहूद्यमो गुणी भोक्ता पितुः शिक्षासु तत्परः।
यत्करोति गृहे कर्म सुखदं जायते हि तत् ॥१३॥

बहुत परिश्रमी, गुणशाली तथा भोगी पिता का आज्ञाकारी होता है। अपने घर में जो कुछ कार्य करता है वह आनन्द दायक होता है ॥ १३ ॥

पूर्वरूपो यदा देवि पत्नी पुत्रसमन्वितः ।
ततः शरीरं वै त्यक्त्वा धनं गृह्य ततः प्रिये ॥१४॥

जब वह पूर्वरूप अर्थात् युवा होता है तथा स्त्री पुत्रवान् होता है तब हे प्रिये पिता के धन को खर्च करते हुए शरीर को त्याग स्वर्ग को चला जाता है ॥ १४ ॥

अथ वक्ष्यामि ते देवि चतुर्थचरणं शिवे ।
नक्षत्रतुरगस्यैव प्राणिनां नियतं शृणु ॥१५॥

हे प्रिये ! अब अश्विनी नक्षत्र के चौथे चरण में उत्पन्न हुए मनुष्यों का फल तेरे समक्ष कहता हूँ। हे शिवे ! उसे सुनो ॥१५॥

कोशलापुरतो देवि सरय्या उत्तरे तटे ।
तत्र क्षत्री वसत्येको नगरे नन्दने तदा ॥१६॥

हे देवि ! अयोध्यापुरी से उत्तर सरयू के किनारे वहाँ नन्दन नामक ग्राम में एक क्षत्रिय रहता था ॥ १६ ॥

स च धर्मविहीनस्तु लक्ष्मणेति च नामतः ।
तस्य भार्या विशालाक्षी कल्याणीनाम सा प्रिये १७

वह धर्मपथ से भ्रष्ट लक्ष्मण नाम करके प्रसिद्ध था। हे प्रिये उसकी स्त्री बड़ेतथा सुन्दरनेत्रोंवाली कल्याणी नामवाली थी॥१७॥

कुलटा यौवनोन्मत्ता परपुंसि रता सदा ।
व्यापारं कारयामास वस्त्रहेमादिकस्य हि ॥१८॥

वह पुंश्चली तथा यौवन से उन्मत्त सदा पर पुरुष से प्रेम रकनेवाली उसका पति वस्त्र आभूषणों का व्यापार किया ॥१८॥

उद्यमं बहुधा कृत्वा द्विजैः सह वरानने ।
एवं बहुतिथे काले विप्रद्रव्यं तु चोरितम् ॥१९॥

हे वरानने ! बहुत उद्योग करके ब्राह्मण से व्यापार द्वारा बहुत दिन बाद उसका धन इसने चुरा लिया ॥ १९ ॥

ततः शोकेन विप्रस्तु शीघ्रं पञ्चत्वमागतः ।
ततो बहुतिथे काले राजपुत्रस्य पञ्चता ॥२०॥

उसशोकसे ब्राह्मणने दुःखित होकर शीघ्रही शरीरका परित्याग कर दिया, बाद को कुछदिन बीतने पर क्षत्री भी मर गया ॥२०॥

गतः स नरकं घोरं निरुच्छ्वासं सुदारुणम् ।
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥२१॥

वह बहुत घोर नरक में गया जहाँ पर कि बहुत कठिन संताप मिलता है, वह उसमें साठ हजार वर्ष तक नरक यातना तथा पीड़ायें सहता हुआ पड़ा रहा ॥ २१ ॥

नरकान्निःसृतो देवि वृषयोनिः पुराभवत् ।
ततो वै राजपत्रस्तु मानुषत्वमुपागतः ॥२२॥

हे देवि ! उस नरक से जब बाहर आया तो बैल की योनि में जन्म पाया और उसके बाद अब मनुष्य योनि में जन्म लिया है ॥२२॥

पुरा तु यत्कृतं पापं तदिहैव प्रभुज्यते ।
मित्रस्य वञ्चनाद्देवि पुत्रस्यैव च पञ्चता ॥२३॥

इसने पहले जो पाप कर्म किया था उसे यहाँ भोगता है । हे देवि! पूर्व जो मित्र को धोखा दिया उससे इसके पुत्र की मृत्यु हुई॥२३॥

कोकवन्ध्या भवेत्पत्नी दुःखशोकसमन्विता ।
तस्य पुण्यं प्रवक्ष्यामि पूर्वपापस्य निग्रहम् ॥२४॥

उसकी पत्नि काकवन्ध्या (केवल एक ही पुत्र हुआ), इस दुःख रूपी संताप तथा पूर्वजन्म कृत उसके पापों के शमन के लिये अब पुण्य को कहता हूँ ॥ २४ ॥

गायत्रीलक्षजाप्येन सर्वं पापं प्रणश्यति ।
कूष्माण्डं नारिकेलं वा स्वर्णयुक्तं सहाम्बरम् ॥२५॥

गायत्री मंत्र का जप एक लाख करावे तो सम्पूर्ण पाप नाश हो जाते हैं, तथा सुवर्ण के साथ कुष्माण्ड (सफेद कुंभड़ा) वा नारियल वस्त्र में रखकर ॥ २५ ॥

गङ्गामध्ये प्रदातव्यं सन्तानार्थं वरानने ।
वर्तुलाकारकुण्डे च होमं यत्नेन कारयेत् ॥२६॥

हे सुभगे! सन्तान के लिये उसे गंगा के मध्य में दान करे और गोलाकार कुण्ड बनाय विधि पूर्वक उसमें हवन करे॥२६॥

स्वर्णशृङ्गीं रौप्यखुरां पटवस्त्रसमन्विताम् ।
आचार्याय प्रदद्यात्तु सपात्रां विधिवत् प्रिये ॥२७॥

और स्वर्ण की सींग तथा चाँदी की खुर बनवाय वस्त्र से उस (गौ) को आच्छादित कर दूध दुहने का पात्र आदि के सहित विधिवत् आचार्य को दान करे ॥ २७ ॥

एवं कृते न संदेहो वन्ध्यात्वञ्च प्रणश्यति ।
पुत्रपौत्राश्च वर्द्धन्ते न संदेहो वरानने ॥२८॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसम्वादे अश्विनीनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

हे प्रिये! इस प्रकारकी विधि करने से वन्ध्यात्व दोष छूट जाता है और पुत्र पौत्रादिकोंकी वृद्धि होतीहै इसमें संशयनहीं॥२८॥

छठवाँ अध्याय समाप्त ।

अथ सप्तमोऽध्यायः ।

पार्वत्युवाच ।

देवदेव महादेव सृष्टिस्थितिलयात्मक ।
स्त्रीणां च कर्म सम्ब्रूहि दयां कृत्वा ममोपरि ॥१॥

पार्वती कहीं—कि हे देवदेव शिवजी! आप सृष्टि, पालन और नाशस्वरूप हैं, मुझपर कृपाकरके उन स्त्रियों के (जो दुःखित हैं) कर्मों को सविस्तार वर्णन कीजिये ॥ १ ॥

ईश्वर उवाच ।

नारीणां शृणु मे सर्वं यत्कृतं पूर्वजन्मनि ।
ततोऽहं सम्प्रवक्ष्यामि समासेन वरानने ॥ २ ॥

शिवजी कहे—कि हे सुभगे! स्त्रियोंने जोभी कर्म पूर्वजन्ममें जिस प्रकार कियेहैं। उनसबको मुझसे सुनो उसे मैंसंक्षेपतःवर्णन करताहूँ॥

पूर्वजन्मनि या नारी पतिनिन्दां चकार ह ।
तेन पापेन भो देवि न स्त्री पुष्पवती भवेत्॥ ३ ॥

हे देवि! पूर्वजन्ममें जो स्त्री अपने पतिकी निन्दा या निरादर की है, वह उस पाप से पुष्पवती (मासिक धर्मवाली) नहीं होती ॥

यदा रौप्यस्य वै वृक्षं स्वांगुष्ठपरिमाणकम् ।
पलपंचमिदं देवि दद्याद्वेदविदे प्रिये ॥ ४ ॥

हे प्रिये! अपने अंगुष्ठ प्रमाण याने अंगुठे के बराबर चाँदी का वृक्षपाँचपल का बनवाकर जबतक वेदज्ञ ब्राह्मणको दान नहीं करती॥

तदा पुष्पं भवेद्देवि नात्र कार्या विचारणा ।
पतिं सुप्तं परित्यज्य परपुंसि रता भवेत् ॥ ५ ॥

हे देवी! तबतकवह मासिकधर्मवाली (रजस्वला) नहीं होती, इसमें विचार न करे, इसे विना विचारे ही करे और जो स्त्री अपने पति को सोते छोड़ कर पर पुरुष के साथ रमण करती है ॥५॥

तेन पापेन भो देवि वन्ध्या नारी प्रजायते ।
सुवर्णस्य कृतं वृक्षं फलपुष्पसमन्वितम् ॥ ६ ॥

वह स्त्री उस पाप से वन्ध्या (बाँझ) हो जाती है। यदि वह सोने का वृक्ष फल-पुष्पादि के सहित बनवा करके ॥ ६ ॥

दद्याद्वेदविदे नारी पतिसेवासु तत्परा ।

ततः पुत्रं प्रसूयेत सुवर्णपलतो दश ॥ ७ ॥

वेद जाननेवाले ब्राह्मण को दान करे तथा अपने पति की सेवा सुश्रुषा में तैयार हो जावे तब उसे पुत्र पैदा होता है। [उपरोक्त वृक्ष १० पल का होना चाहिये] ॥ ७ ॥

परपुंसि रता नारी स्वपतिं मिष्ठवादिनी।
तेन पापेन भो देवि कन्यापत्यञ्च जायते ॥ ८ ॥

हे देवि! जो स्त्री पराये पुरुष में सर्वदा मनको लगाये रहे तथा अपने पतिसेमधुरमीठीबातेंकिया करे तो उसेकेवल कन्याहीहोतीहैं॥

रौप्यस्यैव कृतं लिङ्गं पलपंचदशेन तु।
पूजयित्वा प्रयत्नेन दद्याद्विप्राय श्रोत्रिये ॥ ९ ॥

जब वह १५ पन्द्रह पल चाँदी का शिवलिङ्ग बनाकर विधिवत् उसका पूजन करे और फिर उसे वेदज्ञ ब्राह्मण को दान करदे॥९॥

ततः कन्या तु न भवेच्छुभं पुत्रं प्रसूयते।
सततं वै यदा नारी कुलटा धर्मचारिणी ॥१०॥
तेन कर्मविपाकेन नारी गर्भं विनश्यति।
ततः प्रपूजयेद्देवं शंखचक्रगदाधरम् ॥११॥

तब उसे कन्या नहीं होवे फिर उसे पुत्रही उत्पन्न होगा। और जो स्त्री सतत परपुरुष गामिनी होती है उस पाप से उसका गर्भपात हुआ करता है उसके लिए वह शंख, चक्र, गदाधारी विष्णु भगवान् का पूजन करे ॥ १०-११ ॥

प्रयागे मकरे स्नानं पतिना तु सहाचरेत्।
स्वर्णशृङ्गं रौप्यखुरं मुक्तालांगूलग्रन्थितम् ॥१२॥
दद्यात्सदक्षिणं देवि वृषभं विदुषे तथा।
या पतिं दुर्बलं त्यक्त्वा परेण सह संगता ॥१३॥

और वह मकर के रविमें प्रयागतीर्थ में जाकर पति के साथ विधिवत् स्नान करे। तथा सोनेकी सींग और चाँदी की खुर तथा

मोतियों से गुथी हुई पूँछ वाला बैल विद्वान् को देवे और जो स्त्री दुर्बल पति को छोड़ दूसरे के साथ चली जाती है ॥१२-१३॥

तेन पापेन भो देवि दरिद्रा पुत्रवर्जिता ।
ततः कुमारीं सम्पूज्य ब्रह्मविष्णुमहेश्वरान् ॥१४॥

हे देवि ! वह उस पाप से दरिद्रा और पुत्र रहित होती है। अतः वह कुमारी का तथा ब्रह्मा, विष्णु, महेश, त्रिदेव का सम्यक् प्रकार पूजन करे ॥ १४ ॥

पूजयेदब्दमेकंतु प्रत्यहं नियता प्रिये ।
वर्षे पूर्णे ततस्तस्यै वस्त्रं दत्त्वा विसर्जयेत् ॥१५॥

इस क्रम से एक वर्ष नियम पूर्वक पूजन करके वर्षान्त में उस कन्या का सत्कार कर वस्त्र के साथ उसको विदा करे ॥१५॥

व्रतं सूर्यस्य वै कुर्यात्प्रणम्य प्रतिवासरम् ।
तदा नारी पूर्वपापं दहत्येव न संशयः ॥१६॥

और हरेक रविवार को सूर्य का व्रत कर पूजन और नमस्कार करे। ऐसा नियम पूर्वक व्रत करे तब उस स्त्री का जन्मान्तर कृत पाप नष्ट होता है ॥ १६ ॥

मिष्ठं भुंक्ते तु या नारी पत्युर्मिष्ठं ददाति न ।
तेन पापेन सा नारी मुखे दौर्गन्ध्यधारिणी ॥१७॥

तथा जो स्त्री अपने पति को बिना दिये केवल आप ही मिष्टान्न [मीठा वगैरह] खाती है तो इस दोषके कारण उसका मुख दुर्गन्धित होता है ॥ १७ ॥

गुडं वा मधु वा खण्डं विप्राय प्रयता सदा ।
प्रयच्छति यदा देवि मुखे शुद्धिश्च जायते ॥१८॥

हे देवि ! यदि वह गुड़, मधु, या शक्कर प्रेमसे ब्राह्मण को सदा दान करे तब उसका मुख शुद्ध होता है ॥ १८ ॥

स्वपतिघ्नी च या नारी रण्डा भवति नान्यथा ।

तया नित्यं प्रपूज्या च तुलसी भक्तिभावतः ॥१९॥

जो स्त्री जन्मान्तर की निज पतिघातिनी [पतिको मारने वाली] होती है, वह निश्चय इस जन्ममें विधवा होती है, इसके लिए नित्य तुलसी का प्रेमसे पूजन करे ॥ १९ ॥

ऊर्जे माघे च वैशाखे प्रातः स्नानं समाचरेत् ।
एकादशीव्रतं नित्यं द्वादशाक्षरविद्यया ॥२०॥

और कार्तिक माघ तथा वैशाख महीने में प्रातःकाल स्नान करे तथा एकादशी व्रत रहकर द्वादशाक्षर (ॐ नमो भगवते वासुदेवाय) मन्त्र का जप करे ॥ २० ॥

जपं कृत्वा प्रयत्नेन पतिरूपाय विष्णवे ।
समर्पणं ततः कुर्यात् शीघ्रं पापं प्रणश्यति ॥२१॥

इस प्रकार विधिवत् जप करके पतिस्वरूप विष्णुभगवान् को अर्पण करे तो सद्यः उस पाप से छूट जाती है ॥ २१ ॥

यदा पापयुता नारी गर्भपातं च कारयेत् ।
तेन दुश्चरितेनेह ज्वरकुक्षिप्रपीडनम् ॥२२॥

यदि स्त्री पूर्वजन्म में गर्भपात कराईहोतो उस पापसे इसजन्म में वह ज्वर और कुक्षि [कोख] रोगसे सदा पीड़ित रहती है॥२२॥

योनिशूलं भवेद्देवि गुदरोगो भगन्दरः ।
तदा कुर्यात् प्रयत्नेन ब्राह्मणीं ब्राह्मणं तथा ॥२३॥

हे देवि।यदि योनिशूल [गुप्ताङ्गशूल]गुदारोग [मलद्वार] भगन्दर ये रोग उत्पन्न हों तो ब्राह्मण और ब्राह्मणी की प्रतिमा ॥ २३ ॥

रौप्यस्य च महादेवि दशनिष्कस्य भक्तितः ।
प्रत्यहं पूजयेद्देवि पत्युराज्ञां समाचरेत् ॥२४॥

दशनिष्क सोलह द्रम[१] प्रमाण चाँदी की बनवाकर नित्यउस मूर्तिका श्रद्धासे पूजन करे तथा पतिकी सेवामें प्रवृत्त रहे ॥ २४ ॥

भोजयेद्विविधैश्चान्नैर्घृतखण्डसमन्वितः ।

१—१२ कौड़ी=१ काकिणी ४ काकिणी=१ पण १६ पण=१ द्रम

गोदानं च ततः कुर्यात् भक्त्या विद्योपजीविने ॥२५॥

और तरह २ के स्वादिष्ट मधुर भोज्य पदार्थों को तैयारकर ब्राह्मणों को खिलावे तथा विद्याजीवी ब्राह्मणको गोदान करे॥२५॥

यदा नारी च दुष्टात्मा स्वपतौ दुर्वचो वदेत् ।
तदा कण्ठे भवेद्रोगो नासिकायां च पीनसम् ॥२६॥

दुश्चरित्रा स्त्री जन्मान्तर में अपने पति को दुर्वचनों द्वारा यदि तिरस्कार की हो तो उस पापसे उसे कण्ठ तथा नाक में पीनस रोग होता है ॥ २६ ॥

वातगुल्मं शिवे वापि श्वेतपुष्पं प्रजायते ।
रौप्यपुष्पयुतं देवि सुवर्णेन समन्वितम् ॥२७॥

हे शिवे! उसे वातगुल्म (वायुगोला) अथवा श्वेत पुष्प (श्वेत प्रदर)शरीरमेंचकतेहोतेहैं,उसकेलियेचाँदीऔरसोनेसेमिश्रितफूल।२७

दद्याद्विप्राय विदुषे तदा सप्तपलं शुभे ।
कन्यकां कलहा दुष्टा हन्ति नारी यदा हठात् ॥२८॥

सातपल (एकपल=४तोला) २८तोलेकावृक्ष बनवाकर विद्वान् ब्राह्मणकोदानकरे। हठपूर्वक कलहसेस्त्री यदिकन्याकोमारतीहै।२८।

तदा कुष्ठं भवेद्देवि जन्मजन्मदरिद्रता ।
सूर्यस्य पूजनं कान्ते सदा नारी व्रतं चरेत् ॥२९॥

तो उसेकुष्ठरोग[सफेदकोढ़] औरवहअनेकजन्मतकदरिद्राहोती है,इसलिए वहहमेशासूर्यकीपूजाऔरस्त्रीव्रत [वटसावित्रीव्रत] करे२९

मासे मासे शनौ वारे वृक्षे विष्णुस्वरूपिणि ।
विधिवत्पूजनं कुर्यात् पूर्वपापं विशुध्यति ॥३०॥

औरहरएकमासमेंशनिवारको विष्णु स्वरूपीपीपलका विधिवत् पूजनकरे इसविधानको करनेसे जन्मान्तरकृतपापकीशुद्धि होतीहै ३०

श्वश्रूं च श्वशुरं चैव नित्यं क्रूरवचो वदेत् ।
तेन पापेन भो देवि श्वेतपुष्पं ततो भवेत ॥३१॥

हे देवि! जो स्त्री हमेशा अपने श्वसुर और सासको कटुवचन बोला करती है, तो उस दोषके कारण उसके शरीरमें कोढ़ होता है ॥३१॥

सूर्यस्य प्रतिमां देवि सुवर्णत्रिपलस्य च ।
दद्याद्वेदविदे देवि सूर्यस्यैव व्रतं चरेत् ॥३२॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसम्वादे
स्त्रीकर्मकथनं नाम सप्तमोऽध्यायः ॥७॥

हे देवि! वह सूर्यकी प्रतिमा तीनपल [१२ तोला] की बनवाकर वेद जाननेवाले ब्राह्मणको देवे और सूर्य व्रतको करे तो निश्चय करके उस पापसे मुक्त होवेगी ॥ ३२ ॥

सातवाँ अध्याय समाप्त ।

अथ अष्टमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

भरण्याः प्रथमे पादे नीलकण्ठोऽभवद्द्विजः ।
ब्रह्मकर्मपरिभ्रष्टः काकुत्स्थनगरे शुभे ॥ १ ॥

शिवजी बोले—कि भरणी नक्षत्र के प्रथम चरण में उत्पन्न मनुष्य पहिले जन्ममें नीलकण्ठ नामक ब्राह्मण निजकर्म से च्युत काकुत्स्थ नामक रमणीक नगरमें पैदा हुआ ॥ १ ॥

वैश्येन सहमित्रत्वं क्रयं कृत्वा दिने दिने ।
ब्राह्मणी तत्र वृद्धासीत्पतिपुत्रविवर्जिता ॥ २ ॥

वह वैश्य [बनियाँ] के साथ मित्रता कर उसके साथ व्यापारकार्य [क्रय-विक्रय] करता था उसी नगरमें पतिपुत्ररहित एक वृद्धा ब्राह्मणी थी २

तस्या द्रव्यं गृहीतं च विक्रयार्थं द्विजेन तु ।
ततो बहुदिनं यातं तस्या द्रव्यं न दत्तवान् ॥ ३ ॥

उस ब्राह्मणीसे उसने [नीलकण्ठने] कर्जरूपमें कुछदिनकेलिये रुपये लिये किन्तु बहुतदिन होजानेपरभी उसकर्जको नहीं दिया ॥३॥

एवं बहुतिथे काले तस्य मृत्युरजायत।
ब्रह्मकर्म परिभ्रंशान्नरके पतनं प्रिये॥ ४॥

हे प्रिये! बादको उस ब्राह्मणकी मृत्यु हो गयी और साथही अपने कर्मसे पतित होनेके कारण उसे नरक वास हुआ॥ ४॥

नरकान्निःसृतो देवि सर्पयोनिरजायत।
सर्पयोनिफलं भुक्त्वा गर्दभत्वमुपागतः॥ ५॥

हे देवि! उस नरकसे निकलकर सर्पयोनिमें जन्म पाया और उस योनिके कर्म फलको भोगकर फिर गधेकी योनिमें आया॥५॥

पुनः संप्राप्तवान् देवि मध्यदेशे च मानुषम्।
धनधान्यसमायुक्तः पुत्रकन्याविवर्जितः॥ ६॥

हे देवि! फिर वह धनधान्य से परिपूर्ण और पुत्र कन्या से रहित मध्यदेश में मनुष्यके घर पैदा हुआ॥ ६॥

ततो बहुतिथे काले तदा कन्याभवत्प्रिये।
स्वर्णपूर्वं धृतं देवि स्वर्णसम्बन्धजा सुता॥ ७॥

इसकेबादबहुतसमयव्यतीतहोनेपरजिसस्त्रीका उसनेपूर्वजन्ममें धनलियाथा, वहीउस ऋणकेसम्बन्धसे पुत्रीरूपहोकर जन्मली॥७॥

ततः सा वर्द्धिता कन्या विवाहश्चाभवत्खलु।
पितृमातृप्रिया नित्यं युवती तु यदाभवत्॥ ८॥

और वह बढ़कर जब विवाहके योग्यहुईतो उसका विवाहहुआ और माता पिताकीबहुतप्यारी हुईतथाजबयुवावस्थाकोप्राप्तहुई॥८॥

तदा सा विधवा जाता मातापित्रोश्च दुःखदा।
पुनः पुत्रविहिनत्वं प्रायश्चित्तमतः शृणु॥ ९॥

तो वह विधवा हो गयी और उसके दुःखसे माता पिता बहुत दुःखित हुए और पुत्रहीन हो गये, अब इसके प्रायश्चित्तको सुनो॥९॥

सूर्यमन्त्रस्य जाप्येन लक्षमेकं वरानने।
पार्थिवस्यार्चनं सम्यक् त्र्यम्बकेति ततो जपेत्॥ १०॥

हेसुमुखि ! सूर्य मन्त्र का जप एकलाख तथा साथही शिव लिङ्ग बनाकर पार्थिवार्चन करे और त्र्यम्बक * मंत्रका जप करे या (ब्राह्मण द्वारा करावे) ॥ १० ॥

होमं च कारयेद्धीमान् शतब्राह्मण भोजनम् ।
पायसं शर्करायुक्तं कारयेद्विधिपूर्वकम् ॥११॥

और सुयोग्य ब्राह्मणों द्वारा हवन करावे तथा सौ ब्राह्मणों को विधिवत् खीर मिष्ठान्न वगैरह भोजन करावे ॥ ११ ॥

ततः कूपतडागौ च वापिकाञ्च महापथे ।
एवंकृते न संदेहो वंशलाभो वरानने ॥१२॥
यदा न क्रियते देवि तदा वंशो न जायते ॥१३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसम्वादे
भरणीनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्त-
कथनं नामाष्टमोऽध्यायः ॥८॥

हे वरानने ! फिर कुँआ, तालाब और बावली जहाँ न हों ऐसे आवश्यक स्थानों पर बनवावे तो निश्चय वंश वृद्धि होती है—हे देवि यदि उपरोक्त कर्म न किया जाय तो वंशवृद्धि नहीं होतीहै॥१२-१३॥

आठवाँ अध्याय समाप्त ।

अथ नवमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अथ द्वितीये वक्ष्यामि भरण्याश्चरणे प्रिये ।
तस्य सर्वं प्रवक्ष्यामि यत्कृतं पूर्वजन्मनि ॥ १ ॥

शिवजी कहे—हे प्रिये ! अब भरणी नक्षत्रके द्वितीय चरणमें उत्पन्न पुरुष, स्त्री के पूर्वजन्म कृत कर्मों को कहता हूँ ॥ १ ॥

अयोध्यापुरतो देवि क्रोशमात्रे प्रदक्षिणे ।
जानकीनगरे रम्ये द्विजश्चासीत्स तस्करः ॥ २ ॥

* त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्.....इति ।

हे देवी ! अयोध्यापुरी से एक कोष अर्थात् दो मील की दूरी पर दक्षिण दिशा में जानकी नामक अच्छे नगर में एक ब्राह्मण उत्पन्न हुआ किन्तु वह चोर था ॥ २ ॥

ब्रह्मकर्मपरिभ्रष्टो मद्यपानरतः सदा ।
स वेश्यानिरतो नित्यं पत्नी तस्य पतिव्रता ॥ ३ ॥

वह निज कर्म से पतित तथा मद्य पान में रत और वेश्या गामी था, उसकी स्त्री पतिव्रता थी ॥ ३ ॥

पतिभक्तिरता नित्यं देवपूजासु तत्परा ।
एकदा ब्राह्मणोऽप्येकः क्षुधार्तो दुर्बलः प्रिये ॥ ४ ॥

वह (स्त्री) पति की आज्ञा में सदा तत्पर और देवताओं के पूजन में प्रेम रखनेवाली थी । हे प्रिये ! एक दिन एक भिक्षुक ब्राह्मण भूखा तथा दीन हो आया ॥ ४ ॥

अन्नं च याचयामास लम्पटं प्रति वत्सले ।
दुर्वचश्चावदद्देवि भिक्षुकं प्रति दुर्बलम् ॥ ५ ॥

हे वत्सले! वहउसलम्पट ब्राह्मणसे अन्नकी याचनाकिया,परन्तु वह उसे [दीनभिक्षुकको] कटु वचनद्वारा तिरस्कृत कर दिया॥ ५ ॥

आत्मघातः कृतस्तेन दुर्बलब्राह्मणेन च ।
ततो बहुतिथे काले मरणं तस्य चाभवत् ॥ ६ ॥

और इस अपमान से दुःखित होकर उसने [भिक्षुक ब्राह्मण ने] आत्मघात कर लिया, तथा बहुत समय बीत जाने पर चोर ब्राह्मण की भी मृत्यु हो गयी ॥ ६ ॥

पातिव्रत्येन तत्पत्न्याः सत्यलोकं जगाम सः ।
बहुवर्षसहस्राणि स्वर्गे वासोऽभवत्प्रिये ॥ ७ ॥

हे प्रिये ! वह अपनी स्त्री के सतीत्व के प्रभाव से स्वर्गलोक को पाया और स्वर्ग में कई हजार वर्ष वास किया ॥ ७ ॥

ततः पुण्यक्षये जाते मर्त्यलोके स मानुषः ।

पूर्वपापफलाद्देवि पुत्रकन्याविवर्जितः ॥ ८ ॥

पुनः पुण्यक्षीणहोनेपरवह मर्त्यलोकमें मनुष्यका शरीरपाया। हे देवी ! पूर्वजन्मके पापके कारण वह सन्तान रहित हुआ ॥८॥

तदुद्देशेन मरणं ब्राह्मणस्याऽभवत् पुरा ।
मद्यपानं कृतं तेन ततः कुष्ठो प्रजायते ॥ ६ ॥

क्योंकि इसी के कारण पहिले [पूर्वजन्म में] उस दिन ब्राह्मण की मृत्यु हुई थी, तथा जन्मान्तर में इसने जो मद्य पान किया था उस दोष से कुष्ठ रोग हुआ ॥ ६ ॥

तस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि यतः पापात्प्रमुच्यते ।
गायत्रीमूलमंत्रेण लक्षजाप्यं प्रयत्नतः ॥१०॥

अब उसकी शान्ति के उपायों को कहता हूँ जिससे कि पूर्वकृत पापोंकाउन्मूलनहो, अतःगायत्री मंत्र काएकलाख जपकरावे॥१०॥

दशांशहोमः कर्तव्यो विप्राणां भोजनं शतम् ।
विधिवत्पूजयेद्देवि कपिलां स्वर्णभूषिताम् ।११॥

उसके दशांश अर्थात् दश हजार आहुति [हवन] एवंसौ ब्राह्मणों को भोजन कराकर, हे देवि ! विधिवत् सोने से अलंकृत गौ का पूजन कर दान करे ॥ ११ ॥

दद्याद्विप्राय तां देवि विदुषे ज्ञानरूपिणे ।
अतः पुत्रः प्रजायेत रोगनाशो भवेदनु ॥१२॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसम्वादे
भरणीनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्त-
कथनं नाम नवमोऽध्यायः ॥६॥

और उस गौको कर्मिष्ठ ब्राह्मणको दे, ऐसा करने से पुत्र लाभ होता है तथा रोग नाश होता है ॥ १२ ॥

नवम अध्याय समाप्त ॥

अथ दशमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

एको वणिग्जनो देवि काकुत्स्थनगरे शुभे ।
अग्निकोणे शिवपुरे योजनार्द्धप्रमाणके ॥ १ ॥

शिवजीनेकहा—किहेदेवि!काशीपुरीसेअग्निकोणमेंआधयोजन अर्थात् दो कोशकीदूरीपर स्थितकाकुत्स्थनामकनगरमें एकवैश्य॥१॥

धनाढ्यो ह्यवसेद्देवि वैश्यवृत्तिरतस्सदा ।
विक्रयं कुरुते देवि गुडमन्नं रसादिकम् ॥ २ ॥

धनवान् और वैश्यवृत्ति याने व्यापारमें प्रवृत्त रहता था, गुड़, अन्नतथा रसादि पदार्थोंका क्रय-विक्रय किया करता था ॥२॥

एकस्मिन् समये देवि गुडमादाय चाध्वनि ।
वृषभं भारसम्पन्नं करोति स वरानने ॥ ३ ॥

हे देवि ! एक दिन वह गुड़ के भारसे लदा हुआ बोझ वाला बैल लिए जा रहा था ॥ ३ ॥

भारेण पीडितोऽनड्वान् स वै पथिगतः शिवे ।
न ज्ञातं तेन वै पापं वृषभार्तिसमुद्भवम् ॥ ४ ॥

हे शिवे ! अधिक बोझ के भार से वह बैल रास्ते में बहुत पीड़ित हुआ किन्तु वैश्य ने इसका विचार नहीं किया ॥ ४ ॥

एवं बहुतिथे काले विल्वमङ्गलके पुरे ।
वैश्यस्य मरणं जातं सरय्वां सह भार्यया ॥ ५ ॥

इस तरह बहुत कालव्यतीत हुआ और विल्वमङ्गल नामक नगर जो सरयू के किनारे पर स्थित था वहीं उन दोनों [स्त्री पुरुष] की मृत्यु हो गयी ॥ ५ ॥

स्वर्गलोके गतौ द्वौ च तौ तु क्षेत्रप्रभावतः ।
षष्टिवर्षसहस्राणि स्वर्गे भुक्तं शुभं फलम् ॥ ६ ॥

उस पवित्र क्षेत्र के प्रभाव से उन दोनों का स्वर्गवास हुआ और स्वर्ग में साठ हजार वर्ष शुभफल भोगे ॥ ६ ॥

ततः पुण्यक्षये जाते मर्त्यलोके वरानने ।
अवन्तीनगरे जातौ धनधान्यसमन्वितौ ॥ ७ ॥

हे सुमुखि ! बादको जब पुण्य क्षीण हुआ तो मर्त्यलोकमें अवन्तिका (उज्जैन) नामक नगरी में धनधान्य से परिपूर्ण कुल में उत्पन्न हुए ॥ ७ ॥

मध्यदेशे विशालाक्षि पूर्वकर्मफलेन हि ।
पुत्रो न जायते देवि गर्भपातस्तथा शिवे ॥ ८ ॥

हे शिवे ! पूर्वजन्म कृत कर्म के फल से मध्य देश में जन्म लिए और इनको पुत्र नहीं होता था, गर्भपात हुआ करता था ॥८॥

कन्यका वै प्रजायेत वारं वारं वरानने ।
शरीरे च ज्वरोत्पत्तिर्मध्यमा च प्रजायते ॥ ६ ॥

और इसे वार वार कन्या हुआ करती थी, तथा शरीर में मध्यम ज्वर-बना रहता था ॥ ६ ॥

प्रायश्चित्तं प्रवक्ष्यामि पूर्वपापविशुद्धये ।
सुवर्णस्य वृषं शुभ्रं पलपंचमितं तथा ॥१०॥

अब पूर्व जन्म कृत पाप शुद्ध्यर्थ प्रायश्चित्त को कहता हूँ। पाँच पल अर्थात् वीस तोले सोने का सुन्दर बैल बनवावे ॥ १०॥

प्रतिमां कारयेद्देवि वृषमेकं विभूषितम् ।
प्रपूज्य शिवमंत्रेण वैदिकेन यथाविधि ॥११॥

हे देवि ! एक बैल की मूर्ति बनवाकर उसे अलंकृत कर वेदोक्त शिवमन्त्र द्वारा विधि-पूर्वक पूजन करे ॥ ११ ॥

प्रदद्याद्विदुषे तस्मै ज्ञानिने शुद्धबुद्धये ।
नमः शिवाय मन्त्रेण लक्षजाप्यं प्रयत्नतः ॥१२॥

और उस प्रतिमा को अच्छे कर्मिष्ठ ब्राह्मण को दान दे देवे

तथा "ॐ नमः शिवाय" इस मंत्रको एक लाख जपे अथवा ब्राह्मण द्वारा जप करावे ॥ १२ ॥

रोगतो मुच्यते देवि नात्र कार्या विचारणा ॥१३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसम्वादे भरणीनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम दशमोऽध्यायः ॥१०॥

हे देवि ! इस विधि को करने से निःसन्देह रोगादि से मनुष्य मुक्त हो जाता है ॥ १३ ॥

दशम अध्याय समाप्त ॥

अथ एकादशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

शृणु देवि वरारोहे नृणां कर्मविपाकजम् ।
प्रवक्ष्यामि न सन्देहो यदि ते श्रवणे मतिः ॥ १ ॥
उत्तरे चाप्ययोध्यायास्ततः क्रोशत्रयोपरि ।
तत्र तस्थौ च भो देवि लोकशर्मेति नामतः ॥ २ ॥

शिवजी कहे— कि हे देवि ! मनुष्यों के कर्मविपाकज [पूर्वकृत फलों को]मैं संशय रहित कहता हूँ यदि तुम्हारी सुननेकी इच्छा है तो उसे सुनो । अयोध्यापुरी से तीन कोश दूरी पर उत्तर दिशा में लोकशर्मा नाम का एक ब्राह्मण रहता था ॥ १-२ ॥

तस्य पत्नी शुभाङ्गी वै लीलानाम्नीति विश्रुता ।
ब्राह्मणः कर्मविभ्रष्टो व्याधरूपो वरानने ॥ ३ ॥

और उसकी शुभाङ्गी स्त्री लीला नाम से विख्यात थी, किन्तु हे शुभगे! वह ब्राह्मण कर्मभ्रष्ट होकरव्याध रूपहोगयाथा॥३॥

मृगान् सबालकान् हत्वा पक्षिणो विविधानपि ।
बुभुजे पत्नियुक्तस्तु तुतोष बहुधा तदा ॥ ४ ॥

बच्चोंसहित मृगोंको तथा अनेक पक्षियोंको मारकर स्त्रीसहित भक्षण किया करता था और अत्यन्त प्रसन्न रहता था ॥ ४ ॥

तस्य पत्नि महादुष्टा मुखरा चञ्चला तथा ।
परपुंसि रता नित्यं धर्मकर्मविवर्जिता ॥ ५ ॥

तथा उसकी पत्नी महादुष्टा मुखरा [क्रोधिनी] चञ्चल स्वभाव वाली और सदैव पर पुरुष से प्रेम करने वाली, अपने धर्म कर्म से रहित थी ॥ ५ ॥

एवं सर्वं वयो जातं बृद्धे सति वरानने ! ।
मरणं तस्य वै देवि स्वपुरे सर्पतस्तथा ॥ ६ ॥

हे वरानने ! इसी तरह उसकी सब अवस्था गत होकर जब वृद्धावस्था आई तो हे देवि ! वह चलते फिरते अपने नगर में ही शरीर त्याग दिया ॥ ६ ॥

पत्नी चैव तदा तस्य दुष्टा वै व्यभिचारिणी ।
उभौ च नरके यातौ स्वकर्मवशतः प्रिये ! ॥ ७ ॥

बाद को फिर उसकी दुष्टा व्यभिचारिणी कुलटा स्त्री नेभी शरीरछोड़दिया। हेप्रिये ! वे दोनों अपनेकर्मके अनुसारनरकमेंगये ॥

कुम्भीपाके महाघोरे नाना नरकयातनाम् ।
भुक्त्वा बहु सहस्राणि पुनर्जातश्च सूकरः ॥ ८ ॥

उस महाघोर [कठिन] कुम्भीपाक नामक नरकमें अनेक प्रकार के कष्टोंको कई हजार वर्ष तक सहते हुए फिर सूकर की योनि में जन्म पाये ॥ ८ ॥

योनिं च सूकरीं भुक्त्वा विडालत्वं पुनः प्रिये ! ।
ततो विडालयोनिं च भुक्त्वा गृध्रस्ततोऽभवत् ॥ ९ ॥

हे प्रिये ! उस सूअर की योनि से छुटकारा पाने पर फिर बिल्ली की योनि में आये और इसके बाद गृध्रकी योनिमिली ॥ ९ ॥

पुनः कर्मवशाद्देवि ! मानुषत्वं ततोऽभवत् ।

इह लोके वरारोहे ! पूर्वकर्मप्रभावतः ॥१०॥

हे देवि ! पुनः अपने कर्म के प्रभाव से मर्त्यलोक में मनुष्य योनि में उत्पन्न हुआ ॥ १० ॥

मृतवत्सा भवेन्नारी पुत्रश्चैव न जीवति ।
बहुरोगो भवेद्देवि ! ज्वरेणैव प्रपीडिता ॥११॥

और उसकी स्त्री मृतवत्सा हुई अर्थात् पुत्र नहीं जीवित रहते अर्थात् हो करके मर जाया करते थे। अनेक व्याधि तथा ज्वर से पीड़ित रहा करती थी ॥ ११ ॥

पूर्वजन्मकृतं पापमिह जन्मनि भुज्यते ।
इह लोके कृतं कर्म जन्मजन्मनि भुज्यते ॥१२॥

क्योंकि पूर्वजन्मका किया हुआ कर्म [पाप या पुण्य] इस जन्म में तथा इस जन्म में जो कर्म [पाप या पुण्य] किया जाता है वह दूसरे जन्म में भोगना पड़ता है ॥ १२ ॥

अथ शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं गिरिजे ! मम ।
वंशगोपालमन्त्रेण लक्षजाप्यं वरानने ! ॥१३॥

हे गिरिजे ! अबमैंइसके शान्तिके उपायोंकोकहता हूँतुमध्यान से सुनो, संतान गोपाल मन्त्र का एक लाख जप करावे ॥ १३ ॥

दशांशहोमः कर्तव्यो विप्राणां भोजनं शतम् ।
मन्त्रं च सम्प्रवक्ष्यामि येन पुत्रमवाप्स्यसि ॥१४॥

उसका दशांश याने दशहजार हवन तथा सौ ब्राह्मणों को भोजन करावे इसके बाद उसमन्त्रकोकहताहूँ जिससेपुत्रकीप्राप्तिहो ॥

मन्त्रः-ॐदेवकीसुत ! गोविन्द ! वासुदेव! जगत्पते ! ।
देहि मे तनयं कृष्ण ! त्वामहं शरणं गतः ॥१५॥

हे देवकीपुत्र ! हे वासुदेव । हे संसार के स्वामी ! मुझे पुत्र दीजिए। मैं आप के शरण में हूँ । यही जप के लिए सन्तान गोपाल का मन्त्र है ॥ १५ ॥

ततो वै स मृगान् कृत्वा मृगबालान् सपक्षिणः ।
स्वर्णपञ्चपलेनैव मृगान् कृत्वा सबालकान् ॥१६॥

अनन्तर पाँच पल सोने से छोटे बड़े मृगों तथा पक्षियों को बनवावे ॥ १६ ॥

रौप्यस्यैव वरारोहे ! पक्षिणः पञ्च कारयेत् ।
पूजनं विधिवत् कृत्वा सम्प्रार्थ्य परमेश्वरम् ॥१७॥

हे शुभगे ! और केवल चाँदी के पाँच पक्षी बनवावे तथा विधिपूर्वक उनका पूजन कर ईश्वर से प्रार्थना करे ॥ १७ ॥

स्रष्टा त्वं सर्वलोकानां सर्वकामप्रदः सताम् ।
देवदेव ! जगन्नाथ ! शरणागतवत्सल ! ॥१८॥

हे देवों में श्रेष्ठ जगन्नाथ ! आप जगत्स्रष्टा याने जगत् को उत्पन्न करने वाले तथा सज्जनों की कामनाओं को पूर्ण करनेवाले शरणागतों को शरण देने वाले भक्त वत्सल हैं ॥ १८ ॥

त्राहि मां कृपया देव ! पूर्वकर्मविपाकतः ।
एवं संपूज्य देवेशं ततो विप्रं प्रपूजयेत् ॥१९॥

हे देव ! पूर्वकर्म-विपाक से कृपाकर मेरी रक्षा कीजिये इस तरह विष्णु भगवान्का पूजन कर फिर ब्राह्मणका पूजनकरे ॥१९॥

सुवर्णेन वरारोहे ! अश्वादिवाहनेन वै ।
प्रतिमामर्पयेद्देवि ! विप्राय ज्ञानरूपिणे ॥२०॥

हे देवि ! सोनेके साथ घोड़ा आदि सवारी और पूजित उस प्रतिमा को भी वेदज्ञ ब्राह्मण को दान दे ॥ २० ॥

वापिकां कूपखातं च पथि मध्ये वरानने ! ।
प्रकरोति यदा देवि ! तदा पुत्रः प्रजायते ॥
रोगात्प्रमुच्यते देवि ! जीवेत् पुत्रो न संशयः ॥२१॥

हे सुमुखि ! जो मार्ग में कुआँ, वावली आदि खनाता है ।

उसे अवश्य पुत्र होता है और रोग शोकादि से निवृत हो जाता है, इसमें संशय नहीं ॥ २१ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसम्वादे भरण्याश्चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकादशोऽध्यायः ॥११॥

एकादश अध्याय समाप्त ।

अथ द्वादशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

कृत्तिकायां वरारोहे ! प्रथमे चरणे तथा ।
यो जायेत नरो देवि ! तस्य वक्ष्ये शुभाशुभम् ॥ १ ॥

शिवजी बोले—हे देवि ! कृत्तिका नक्षत्रके पहिले चरणमें जो मनुष्य उत्पन्न होता है, उसके शुभाशुभ फलको कहता हूँ ॥१॥

ईशानेऽपि महादेवि ! कौशलापुरतोऽनघे ! ।
राजपुत्रोऽवसत्कश्चिन्नगरे गूढसंज्ञके ॥ २ ॥

हे महादेवि ! अयोध्यापुरी से ईशानकोण में स्थित पवित्र गूढ नामक नगर में एक क्षत्रिय बसा हुआ था ॥ २ ॥

नामतश्चाहिवर्म्मेति तस्य पत्नी कला शुभा ।
धनधान्यसमायुक्तो रूपवान् मन्मथो यथा ॥ ३ ॥

उसका नाम अहिवर्मा था और उसकी स्त्री सुन्दरी कला नामकी थी वह धनधान्य सेयुक्त और सुन्दरता मेंकामदेवके समानथा ॥३॥

याति चाखेटकं नित्यं मृगीं हत्वा च गर्भिणीम् ।
प्रत्यहं मृगमांसेन पोषयेत्स्वतनुं तथा ॥ ४ ॥

वह नित्य शिकार को जाता था और उसी मृग मांस से अपने शरीर का पोषण करता था, एक दिन गर्भिणी मृगीकोभी मारदिया

शरीरे वृद्धता जाता दया तस्य न चाभवत् ।
ततो वै मरणाद्देवि ! सती भार्या ततोऽभवत् ॥ ५ ॥

वृद्धावस्था आने पर भी उसको दया नहीं आयी फिर जब वह मरा तो उसकी स्त्री उसके साथ अग्नि में सती हुई ॥५॥

सत्यलोकं गतस्तेन भार्यायाः सुकृतेन तु ।
भुक्तं कल्पमितं पुण्यं सत्यलोके वरानने ! ॥ ६ ॥

हे वरानने ! वह अपने स्त्री के पुण्य के प्रभाव से देव[सत्य] लोक को चला गया। फिर एक कल्प सत्यलोक अर्थात् जिसका नाश नहीं होता उस लोकमें सुख भोग किया ॥ ६ ॥

पुनः पुण्यक्षये जाते मानुषत्वमुपागतः ।
पत्न्या सह ततो देवि ! कुले महति पूजिते ॥ ७ ॥

हे देवि ! फिर पुण्य नष्ट होजाने पर स्त्री सहित श्रेष्ठ अर्थात् उच्चकुल में मनुष्य शरीर धारण किया ॥ ७ ॥

पूर्वजन्मविपाकेन मृतवत्सत्वमाप्नुयात् ।
मृगीं सगर्भां हतवान् पूर्वजन्मनि सुव्रते ! ॥ ८ ॥

हे सुव्रते !पूर्वजन्मकृत कर्म फलकेकारण उसकी सन्तानजीवित नहीं रहतीथी, क्योंकि जन्मान्तरमें गर्भिणी मृगी कावधकिया था॥

तेन कर्मविपाकेन मर्त्यलोके ह्यपुत्रकः ।
तस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि यतः पुत्रः प्रजायते ॥ ९ ॥

इस कर्मविपाक [गर्भिणी मृगी मारने के पाप] से मर्त्य लोक में पुत्र रहित हुआ । उसकी अब शान्ति कहता हूँ जिससे कि पुत्र उत्पन्न हो ॥ ९ ॥

गायत्रीजातवेदाभ्यां लक्षमेकं जपं तथा ।
दशांशहोमः कर्त्तव्यो विप्राणां भोजनं ततः ॥१०॥

गायत्री मन्त्र का और "जात वेदसे" "इत्यादि" इस मंत्र

का एक लाख जप करावे फिर उसके दशमांश हवन तथा ब्राह्मण भोजन करावे ॥ १० ॥

सौवर्णेन मृगीं कृत्वा मृगबालं तथैव च ।
पूजयित्वा विधानेन कपिलां च ततः प्रिये ! ॥११॥
प्रदद्याद्वेदविदुषे ब्राह्मणाय सुतेजसे ।
हरिवंशस्य श्रवणं चण्डीपाठं शिवार्चनम् ॥१२॥

हे प्रिये ! फिर बच्चों के सहित सुवर्ण की मृगी बनवाकर विधान से उसका पूजन करे और वेद के जाननेवाले ब्राह्मण को कपिला गोदान दे, हरिवंश कथा, दुर्गापाठ का श्रवण करे तथा शिवजी का पूजन करे अथवा ब्राह्मण द्वारा करावे ॥ ११-१२ ॥

एवं कृत्वा विधानेन शीघ्रं पुत्रः प्रजायते ।
कन्यका न भवेत्तस्य गर्भपातो न जायते ॥१३॥

इस तरह का विधि-विधान करने से यथाकाल पुत्र की प्राप्ति होगी और कन्या तथा गर्भपात भी न होगा ॥ १३ ॥

रोगात्प्रमुच्यते रोगी सर्वकामः प्रजायते ॥१४॥

और रोगी रोगों से मुक्त हो जायेगा तथा सभी कर्मों में सफलता मिलेगी ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसम्वादे
कृत्तिकानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं
नाम द्वादशोऽध्यायः ॥१२॥

द्वादश अध्याय समाप्त ॥

अथ त्रयोदशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

नराणां पुण्यशीलानामिह जन्मसमुद्भवम् ।
सुखं वक्ष्याम्यहं देवि ! पूर्वकर्मफलं यतः ॥ १ ॥

शिवजीबोले—हेदेवि! जिसपूर्वजन्मकृत कर्मकेप्रभावसेपुण्यात्मा मनुष्यों को इस जन्म में जो सुख मिलता है, उसको मैं कहता हूँ॥

येन दत्तं पुरा दानं गोसुवर्णगजादिकम् ।
तत्फलेन महादेवि! इह तस्मात् सुखं भवेत् ॥ २ ॥

हे महादेवि! जो जन्मान्तर में गौ, सोना हाथी आदि दान किया है, इस जन्म में उस दानके फल से उसे सुख मिलता है ॥२॥

शरीरे जन्मतः कान्तिर्लक्ष्मीवान् गुणवानपि ।
सौख्यं प्रभुज्यते नित्यं पुत्रतो धनतस्तथा ॥ ३ ॥

और जन्म से ही उसके शरीर में कान्ति होती है, धनवान् तथा गुणशाली होता है और नित्यही धन, पुत्र का सुखभोगकरता है॥ ३॥

न रोगो जायते देवि! दुःखं नैव कदाचन ।
इहलोके सुखं भुक्त्वा कीर्तिमान् सुखमेधते ॥ ४ ॥

हे देवि! नतो उसको रोग सताता है न कभी दुःख ही होता, इसजन्ममेंसुखभोगताहुआकीर्तिमान् [यशस्वी]औरसुखी होता है॥

अथ वक्ष्याम्यहं देवि! नक्षत्र कृत्तिकाह्वये ।
द्वितीयचरणे देवि! पूर्व यत् फलमुच्यते ॥ ५ ॥

हे देवि! अब कृत्तिका नक्षत्र के द्वितीय चरण में जो उत्पन्न हुआ है वह पूर्व [जन्मान्तर में] जो कर्म किया है उसके फल को मैं कहता हूँ ॥ ५ ॥

कान्यकुब्जो द्विजः कश्चिदिन्द्रशर्मेति नामतः ।
पत्नी रुद्रमती देवि! कुशीला कलहप्रिया ॥ ६ ॥

हे देवि! कोई इन्द्रशर्मा नाम करके एककान्यकुब्ज ब्राह्मणथा और उसकीस्त्रीरुद्रमतीनामकीकुटिलस्वभाव वाली और झगड़ालूथी

वेदपाठरतो नित्यं षडङ्गस्य च पाठकः ।
एकदा तत्र वै देशे कश्चित् क्षत्री नराधिपः ॥ ७ ॥

वहब्राह्मण वेदपाठ करने वाला तथा सर्वदाषडङ्गका पाठकिया

करता था, एक समय उसके देश में कोई क्षत्रिय राजा ॥ ७ ॥

मरणे तस्य वै याते तद्विप्रस्य निमन्त्रणम् ।
भुक्तं तेन तदा देवि ! क्षत्रियस्य क्रियासु च ॥ ८ ॥

की मृत्यु हो गयी और उस ब्राह्मण को क्रिया में [ब्राह्मण भोजन के दिन] निमन्त्रित किया हे देवि ! ब्राह्मणने उस राजा की क्रिया में भोजन किया ॥ ८ ॥

गृहीतं तस्य वै दानं शय्यां चैव गजादिकम् ।
सर्वं गृह्य गृहं गत्वा भुक्तं बहुदिनं प्रिये ! ॥ ९ ॥

और उसका शय्यादान तथा गजादि का भी दान लिया है प्रिये ! वे सब दान की वस्तुयें लेकर घर आया और बहुत दिन तक उनका उपभोग किया ॥ ९ ॥

ततो बहुगते काले तस्य विप्रस्य पञ्चता ।
स यातो यमलोके वै नरके च सुदारुणे ॥१०॥

तदनन्तर इस प्रकार बहुत काल बीत जाने पर वह ब्राह्मण मर गया और मरने के बाद यमलोक को गया वहाँ उसे दारुण [कठिन] नरक भोगना पड़ा ॥ १० ॥

भुक्तं स्वकर्मजं दुःखं युगमेकं वरानने ! ।
गजव्याघ्रकृमेर्योनिं ततो भुंक्ते पृथक् पृथक् ॥११॥

हे सुमुखि ! वह एक युग तक अपने कर्मानुसार दुःख भोग किया, उसके बाद हाथी की योनि फिर व्याघ्र और कृमि [कीड़े मकोड़े] की योनियों में पृथक् पृथक् भोग किया ॥ ११ ॥

मनुष्यत्वं ततः प्राप्तः पूर्वकर्मविपाकतः ।
पुत्रो न जायते देवि ! कन्यका विविधास्तथा ॥१२॥

हे देवि ! अब पूर्व कर्म विपाक से मनुष्य शरीर को पाया किन्तु उसे पुत्र नहीं होता केवल कन्या ही पैदा होती हैं ॥१२॥

मृतवत्सा भवेन्नारी रोगाश्च विविधाः प्रिये ! ।

शान्ति तस्य प्रवक्ष्यामि यतः पुत्रमवाप्स्यते ॥१३॥

हे प्रिये ! उसकी स्त्री मृतवत्सा [अर्थात् सन्तान नहीं जीती] है तथा नाना भाँतिके रोग हुआ करतेहैं, अब उसके शान्ति को कहता हूँ जिससे कि पुत्र प्राप्त हो ॥ १३ ॥

गायत्रीलक्षजाप्येन त्र्यम्बकेण तथा प्रिये ! ।
होमं च कारयामास षडंशं दानमेव च ॥१४॥

हे प्रिये ! गायत्री मन्त्रका और त्र्यम्बकमन्त्रका एकलाखजप करावेउसकेदशमांश [दशहजार] हवन और षष्ठांशदान करे ॥१४॥

दशवर्णाश्च गा दद्याद्विधिवद् ब्राह्मणाय वै ।
भोजयेच्छतसंख्यं च ब्राह्मणं वेदपारगम् ॥१५॥

और दश वर्ण वाली गौवोंका विधि विधान सेकर्मिष्ठब्राह्मण को दान दे तथा सौ ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ १५ ॥

एवंकृतेन भो देवि ! पुत्रश्चैव प्रजायते ।
रोगाणां च निवृत्तिः स्यात् पूर्वपापक्षयो भवेत् ॥१६॥

हेदेवि !इस तरहके विधि विधानके करनेसे पुत्रकी प्राप्तिऔर रोगोंकीनिवृत्ति तथाजन्मान्तरकेकिएहुए दोषोंकाक्षयहोताहै॥१६॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसम्वादे कृत्तिकानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्त-कथनं नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥१३॥

तेरहवां अध्याय समाप्त ।

अथ चतुर्दशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

तृतीयं तस्य वै देवि ! चरणं वदतः शृणु ।
कान्यकुब्जकुले कश्चिन्नगरे सूर्यसंज्ञके ॥ १ ॥

उद्योतशर्मा विख्यातस्तस्य स्त्री गिरिजाभवत्।
वेदपाठरतो नित्यं दारिद्र्येणैव पीडितः ॥ २ ॥
कर्कशा भामिनी तस्य निष्ठुरं वदती स्मृता ।
एकदा सूर्यग्रहणे तैलकारस्तदागतः ॥ ३ ॥

शिवजी बोले-हे देवि! अब कृत्तिका नक्षत्र के तृतीय चरण का फल कहता हूँ उसे सुनो, सूर्य पुर नामक नगर में कोई एक कान्यकुब्ज उद्योत शर्मा नामका ब्राह्मण था और गिरिजा नाम की उसकी स्त्री थी। वह नित्य वेदपाठ करनेमें रत और दरिद्रता से पीड़ित रहता था, उसकी स्त्री सदैव निष्ठुर वचन बोला करती थी, एक दिन सूर्यग्रहण के समय कोई तेली आया ॥ १-३ ॥

गङ्गामध्ये ततो दानं तस्मै विप्राय वै शिवे!।
प्रददौ लक्षसंख्यां वै स्वर्णमुद्रां तु दक्षिणाम् ॥ ४ ॥

हे शिवे! उस ब्राह्मण को गङ्गा के मध्यमें एक लक्ष स्वर्ण मुद्रा [असर्फी] का दान दिया ॥ ४ ॥

प्रतिगृह्य ततो दानं गृहं गत्वा द्विजस्तदा ।
व्ययं करोति स्म तदा भार्यापुत्रेण चैव हि ॥ ५ ॥

उसको लेकर ब्राह्मण अपने घर गया और सपरिवार आनन्दपूर्वक जीवन बिताने लगा ॥ ५ ॥

वेदपाठं ततस्त्यक्त्वा प्रत्यहं ससुखं प्रिये!।
मरणं वृद्धसमये गृहे शय्योपरिस्थिते ॥ ६ ॥

हे प्रिये! वह भोग विलासमें नित्य रत रहने के कारण वेदपाठ कात्याग करदिया और वृद्धावस्थामें घरमें शय्यापरही मृत्युहुई॥६॥

स्वर्णमध्ये च दानं वै न दत्तं गिरिनन्दिनि!।
स गतो नरके घोरे यमराजेन प्रेरितः ॥ ७ ॥

हे पार्वती! लोभके कारण उस सोने में से दान तक कुछ नहीं किया अतः यमराज की प्रेरणासे उसे घोर नरक मिला ॥७॥

भुंक्ते नरकजं दुःखं स्त्रीपुत्रेण संयुतः ।
युगमेकं वरारोहे ! प्रेतत्वं काकतां गतः ॥ ८ ॥

हे वरारोहे ! एक युग तक स्त्री पुत्र सहित नरक रूपी दुःख का भोग किया, फिर प्रेत होकर कौवा की योनि में आया ॥८॥

ततः शृगालयोनिं च मानुषत्वं ततो गतः ।
पूर्वजन्मकृतं कर्म इह लोके प्रभुज्यते ॥ ९ ॥

उसके बाद शृगाल [सियार] की योनि मिली, फिर मनुष्य योनि में जन्म लिया है । कारण कि जन्मान्तर का कियाहुआ कर्म का फल जीव इस लोक मे भोगता है ॥ ९ ॥

पाठयामास वै वेदान् ब्राह्मणेभ्यो वरानने ! ।
तत्सञ्चितफलाद्देवि ! महदैश्वर्यमाप्नुयात् ॥१०॥

हे वरानने ! वह ब्राह्मणों को वेदाध्ययन कराने के कारण उस कर्म के प्रभाव से महान् ऐश्वर्य प्राप्त किया ॥ १० ॥

भार्या मृता ततः पुत्रो द्वितीया च विवाहिता ।
शरीरे बहवो रोगाः सुखं तस्य न जायते ॥११॥

प्रथम स्त्री मरी बादको पुत्र भीमरगया तबदूसरी शादी किया, परन्तु शरीर रोगी होने के कारण उसे सुख नहीं मिलता ॥११॥

वृद्धे सति वरारोहे पुत्रः शत्रुर्भवेदिति ।
मृतवत्सा भवेन्नारी पूर्वजन्मविपाकतः ॥१२॥

हे वरारोहे ! उसे जरायु होने पर उसका लड़का ही शत्रु रूप हो जाय अथवा जन्म के विपाक से स्त्री मृतवत्सा अर्थात् स्त्रीके सन्तान ही न जीवें ॥ १२ ॥

तस्य पुण्यमहं वक्ष्ये ततो रोगो निवर्त्तते ।
पुनः पुत्रो भवेद्देवि ! कन्यका नैव जायते ॥१३॥

हे देवि ! उसके शान्तिउपायोंको कहता हूँजिससे किसबरोग निवृत्त हो जायँ और कन्या न होकर पुत्र ही उत्पन्न हों ॥१३॥

जातवेदादिमंत्रेण जपं वै कारयेत् बुधः।
लक्षत्रयं प्रयत्नेन ततो होमं तिलादिभिः ॥१४॥

'जातवेदसे...' इत्यादि मंत्र का एक लाख जप यत्न वंक करावे और तिल, जव इत्यादि से हवन करावे ॥१४॥

चतुरस्रे शुभे कुण्डे हरिवंशश्रवणं ततः।
भूदानं विधिवत्कुर्याच्छय्यां पात्राय दापयेत् ॥१५॥

चतुष्कोण सुन्दरकुण्ड हवनकाहो, औरहरिवंश पुराणकीकथा सुने,सत्पात्र ब्राह्मणको भूमि दान, शय्यादान विधिवत् करे॥१५॥

एवं कृते न संदेहो रोगनाशो भविष्यति।
पुत्रश्च जायते देवि! नात्र कार्या विचारणा ॥१६॥

हे देवि! इस प्रकार के विधि विधान को विना विचार किये ही करे, क्योंकि इसके करने से अवश्य पुत्रकी प्राप्ति और रोगों का नाश होगा॥ १६॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसम्वादे कृत्तिकानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्त-कथनं नाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥१४॥

चौदहवाँ अध्याय समाप्त॥

—:※:—

अथ पञ्चदशोऽध्यायः।

शिव उवाच।

कान्यकुब्जो द्विजः कश्चिन्नर्मदादक्षिणे तटे।
माहिष्मत्यां वसत्येको द्विजः परमवैष्णवः॥ १॥

शिवजी बोले—नर्मदा नदी के दक्षिणीय तीरपर माहिष्मती नामकी नगरीमें श्रेष्ठ वैष्णव एक कान्यकुब्ज ब्राह्मण रहता

नामतो योधशर्मेति तस्य भार्या तु दानवी।

प्रत्यहं वैश्यवृत्तिस्तु विक्रयं चाकरोत्सदा ॥ २ ॥

योधशर्मा उसका नामथा और दानवी उसकीस्त्रीथी। साधारणतया नित्यप्रतिवैश्यवृत्ति[क्रयविक्रयकाकार्य]किया करताथा॥२॥

तत्र वैश्य उवासैको धनधान्यसमन्वितः।
वैश्यतस्तेन विप्रेण स्वर्णं नीतमृणं बहु ॥
ततो बहुतिथे काले स विप्रो मृत्युमागतः।
ऋणं तस्मै न दत्तं वै वैश्याय तु स्वकर्मके ॥३-४॥

उसका पार्श्ववर्ती धनवान् एक और वैश्य था, जिससे कि उस ब्राह्मण ने कर्जरूप में बहुत सुवर्ण लिया और कालान्तर में उस ब्राह्मण की मृत्युहो गई किन्तु उस [धनिक] वैश्यका लिया हुआ कर्जा [सोना] न दे सका ॥ ३-४ ॥

मरणे सति विप्रस्तु रौरवं नरकं गतः।
वैश्यकर्म कृतं तेन स्वकर्म परिमुच्यते ॥ ५ ॥

वह ब्राह्मण [ऋणी होकर] मरने के बाद रौरव नरक में गया वह अपने कर्मसे च्युत होकर वैश्य वृत्तिको किया था। ५॥

विंशद्वर्षसहस्राणि यमलोके वसत्यसौ ।
नरकान्निःसृतो देवि ! यातो वृषभशूकरौ ॥ ६ ॥

हे देवि ! यह बीस हजार वर्ष यमलोकमें वास किया, वह नरकसे निकलनेके बाद क्रमसे बैल और शूकरकी योनि पाया॥६॥

योनिद्वयफलं भुक्त्वा मनुष्यत्वमवाप्नुयात् ।
धनधान्यसमायुक्तस्तत्पुण्यस्य प्रभावतः ॥ ७ ॥

इन योनियों के कर्मफल भोगनेके बाद फिर मनुष्यशरीर धारण किया और मनुष्य योनि जिस पुण्य के फल से मिली वैसे ही सम्पत्ति से युक्त हुआ ॥ ७ ॥

ऋणसंबन्धतो देवि वैश्यः पुत्रत्वमागतः।
प्रत्यहं तस्य वै द्रव्यं व्ययं कुर्यादिने दिने ॥ ८ ॥

मद्यवेश्याप्रदानेन धनं सर्वं व्ययं कृतम् ।
यदा पुत्रः समुत्पन्नो युवा तस्य भवेत्प्रिये ॥ ९ ॥
तदा मृत्युमवाप्नोति शोकं दत्त्वा तयोस्तदा ।
पुनः पुत्रो न जातो वै पूर्वजन्मविपाकतः ॥१०॥

हे देवि ! पूर्वऋणसम्बन्ध से वह वैश्य इसके यहाँ पुत्ररूप में जन्म लिया और इसके धन को कुमार्ग द्वारा नित्य खर्च करने लगा तथा समस्त सम्पत्ति खर्च डाला। और जब युवावस्था को प्राप्त हुआ तो मरगया जिससे कि उन दोनों [माता-पिता] को अतिशय दुःख हुआ, फिर इसके बाद पूर्व कर्म के प्रभाव से दूसरा पुत्र नहीं उत्पन्न हुआ ॥ ८—१० ॥

प्रायश्चित्तं प्रवक्ष्यामि पूर्वपापविशुद्धये ।
गायत्रीलक्षजाप्येन तदर्थं वाटिका पथि ॥११॥

अब प्राचीन कर्मके शुद्धि के लिये प्रायश्चित्तोपाय कहता हूँ, उसके अर्थ गायत्री मंत्र का एक लक्ष जप और मार्ग में वाटिकादि बनवावे ॥ ११ ॥

कूपं प्रयत्नतः कुर्यात्तडागं विधिपूर्वकम् ।
होमं वै कारयेच्चैव विधिपूर्वं वरानने ! ॥१२॥

हे वरानने ! और यत्न से कुआँ अथवा तालाब बनवावे तथा सम्यक् प्रकार से हवन करे या विप्र द्वारा करावे ॥ १२ ॥

पलपञ्चसुवर्णस्य दानं दद्याद्विशेषतः ।
दशवर्णाः प्रदातव्याः स्वर्णयुक्ताः सहाम्बराः ॥१३॥

और विशेष नियमयह हैकिपाँचपल [बीसतोले] सोनेका दान तथा दश वर्णवाली गौवोंको सोनेऔर वस्त्रोंके सहितदानदेवे ॥१३

भोजयेच्छतविप्रांस्तु यथाशक्ति सदक्षिणान् ।
एवं कृते न सन्देहो रोगनाशो भवेदनु ॥१४॥

फिर सौ ब्राह्मणों को भोजन और यथाशक्ति भूयसीदक्षिणा

देवै, इस तरह के विधान से समस्त दुःखों का नाश होता है ।।१४।।

पुत्राःपौत्रा विवर्द्धन्ते मम वाक्यं न चाऽन्यथा ।।१५।।

और पुत्र-पौत्रों की वृद्धि होती है, यह मेरी वाणी अन्यथा न होगी ॥ १५ ॥

इति कर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसम्वादे कृत्तिकानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्त-कथनं नाम पञ्चदशोऽध्यायः ।।१५।।

पन्द्रहवाँ अध्याय समाप्त ॥

—:(❀):—

अथ षोडशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि ब्रह्मनक्षत्रजं फलम् ।
रोहिण्याः प्रथमे पादे यस्य जन्म च जायते ।। १ ।।

शिवजी कहे—कि अब रोहिणी नक्षत्र के प्रथम चरण में उत्पन्न पुरुषों के शुभाशुभ फलों का वर्णन करता हूँ । १ ॥

तस्य कर्म पुरा देवि ! सञ्चितं सम्ब्रवीम्यहम् ।
अन्तर्वेद्यां द्विजः कश्चिद्भोपनामावसत्प्रिये ! ।। २ ।।

हे प्रिये ! जो प्राचीन सञ्चित कर्म हैं उन्हें सम्यक् प्रकारसे कहता हूँ । अन्तर्वेदी [नदी संगम प्रदेश] में कोई भोप नाम करके द्विज [ब्राह्मण] वास करता रहा ॥ २ ॥

ब्रह्मकर्मविहीनश्च चौरकर्मरतस्सदा ।
सार्द्धं चौरेण भो देवि ! बहु द्रव्यमुपार्जितम् ।। ३ ।।

हे देवि ! वह सर्वदा चोरी करनेमें प्रवृत्त और निज कर्म [ब्राह्मणों के कर्म] से वञ्चित था, वह चोरों के साथ से बहुत द्रव्य पैदा किया ।।

परस्त्रीलम्पटो देवि ! स्वां भार्यां परिमुच्य च ।

एवं बहुगते काले कालवश्यस्ततोऽभवत् ॥ ४ ॥

वह अपनी स्त्री को छोड़कर परस्त्री में प्रेम करता था, इस प्रकार समय बीतने पर काल कराल के मुख में प्रविष्ट हुआ॥४॥

यमः कर्मप्रभावेण नरके नामकर्दमे ।
वासयामास भो देवि ! षष्टिवर्षसहस्रकम् ॥ ५ ॥

हे देवि ! बुरे कर्मका बुराफल होनेके कारण यमराज भगवान् ने 'कर्दम' नामक नरक में साठ हजार वर्ष तक वास कराया ॥५॥

नरकान्निःसृतो देवि ! कुक्कुटत्वं प्रजायते ।
ततो यातो महादेवि ! नरयोनिं च दुर्लभाम् ॥ ६ ॥

बाद को नरक से निकल कर मुर्गे की योनि में, उसके बाद फिर महा कष्ट अर्थात् कठिनता से उपलब्ध होने वाली मनुष्य योनि को प्राप्त किया । ६ ॥

पाण्डुरोगेण संयुक्तः पुत्रो नैव प्रजायते ।
वेश्याः कन्याः प्रजायन्ते पुत्रस्य मरणं भवेत् ॥ ७ ॥

मनुष्य शरीर पाकरके पाण्डु [जलोदर या पिनिश] रोगसे ग्रसित और पुत्रसे वर्जित रहा, पूर्वकी जो वेश्या थी वही पुत्री हुई और जन्मान्तरके कर्म प्रभावसे सन्तान नहीं जीवित रहती थी ॥७॥

तस्योपदानं वक्ष्यामि तत्सर्वं शृणु हे प्रिये ! ।
ॐनमः शिवाय मन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ॥ ८ ॥

हे प्रिये ! उसके प्रतिकारके लिये उपचारोंको कहता हूँ उसे सुनो, "नमः शिवाय" इस मंत्रका एक लाख जप करावे ॥८॥

पार्थिवं तिलपिष्टेन गोमयेन तथा प्रिये ! ।
पूजयामास विधिवद्भक्तियुक्तेन चेतसा ॥ ६ ॥

हे प्रिये ! तिलके पिठी का या गोबरसे पार्थिव [शिवलिङ्ग] बनाकर शान्त चित्त तथा श्रद्धासे विधिवत् पूजन करे ॥ ६ ॥

होमं वै कारयेद्देवि ! षडंशं दक्षिणां ततः ।

आचार्याय सुवर्णं च पूर्वपापविशुद्धये ॥१०॥

और हवन कराकर षष्ठांश अर्थात् छठवाँ भाग दक्षिणा दे और पाप विशुद्ध्यर्थ आचार्य को दक्षिणा में सुवर्ण देवे ॥१०॥

कूपखातं ततो देवि ! वाटिकां चैव कारयेत् ।
एवं कृते न सन्देहो रोगनाशो भवेदनु ॥११॥

हे देवि ! इस प्रकार विधान को करके फिर कुआँ और वाटिका आदि बनवावे इसतरहके विधानसे निःसन्देह रोगोंका नाशहोगा ११

कन्यका न भवेद्देवि ! पुत्रश्चैव प्रजायते ।
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम् ॥१२॥

हे देवि ! और कन्या उत्पन्न न होकर पुत्र ही होगा, तथा मृतवत्सा अर्थात् जिस स्त्री की सन्तति नहीं जीती उसे उत्तम दीर्घजीवि पुत्र होवे ॥ १२ ॥

इति कर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसम्वादे रोहिणीनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्त-कथनं नाम षोडशोऽध्यायः ॥१६॥

सोलहवाँ अध्याय समाप्त ॥

अथ सप्तदशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

द्वितीयचरणं देवि ! रोहिण्याः शृणु विस्तरम् ।
गङ्गाया उत्तरे कूले परं वैमानिकं शुभम् ॥ १ ॥

शिव जी बोले—हे देवि ! अब रोहिणी के द्वितीय चरण में उत्पन्न मनुष्य के शुभाशुभ फलों को सुनो—गंगा के उत्तर तट पर रमणीक वैमानिक नाम करके एक ग्राम था ॥ १ ॥

वासुदेवश्च नाम्ना हि ब्राह्मणो वेदपारगः ।
लीलावती पवित्रा च तस्य पत्नी शुभा तथा ॥ २ ॥

उस नगरमें वासुदेव शर्मा नामक वेदको जानने वाला एक ब्राह्मणथा और लीलावती नामकी पवित्रा सुन्दरीउसकी स्त्रीथी॥२॥

युवती रूपसम्पन्ना स्वैरिणी च सदा प्रिये ! ।
बहुद्रव्यं तया लब्धं परपुंसः प्रसङ्गतः ॥ ३ ॥

हे प्रिये ! वह रूप यौवन से सम्पन्न तथा स्वेच्छा चारिणी थी, सर्वदा अपने इच्छानुसार घूमने के कारण पर पुरुष प्रसङ्गमें रत हो गयी और उसके द्वारा बहुत द्रव्य प्राप्त किया ॥ ३ ॥

पापादुपार्जितं द्रव्यं भुज्यते पतिना सह ।
गङ्गायां मरणं तस्य विप्रस्य भार्यया सह ॥ ४ ॥

उस कुमार्ग द्वारा उपार्जित धन का दम्पति (स्त्री-पुरुष) आनन्द पूर्वक भोगते हुए अन्तमें गङ्गा तट पर शरीर का दोनों ने त्याग किया अर्थात् मर गये ॥ ४ ॥

स्वर्गवासी हि दम्पत्योः षष्टिवर्षसहस्रकम् ।
ततः पुण्यक्षय जाते मर्त्यलोके वरानने ! ॥ ५ ॥

हे सुमुखि ! मरनेके बाददम्पति [स्त्री-पुरुष] साठहजारवर्षस्वर्ग सुखभोगकिये,फिरजब पुण्यक्षय हुआ तबमर्त्य लोकमें जन्मलिये॥५

धनधान्यसमायुक्ते धर्मे मतिरथाधिका ।
पुत्राश्च बहवस्तेषां मरणं चैव जायते ॥ ६ ॥

और धन धान्य से सम्पन्न सदा धर्म में रुचि रखने वाले हुए, तथा बहुत पुत्र भी हुए किन्तु जीवित एक भी न रहे ॥६॥

कन्यका विविधास्तासां मृत्युश्चैव प्रजायते ।
पुनश्च तस्य हानिश्च बहुरोगः प्रजायते ॥ ७ ॥

कई एक कन्यायेंभी उत्पन्न हुई किन्तुवे भी मरतीगई सन्तान हानि तो हुआ ही साथ ही अनेक रोग भी उत्पन्न हो गये ॥ ७ ॥

तस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि यत्कृतं पूर्वजन्मनि ।
त्र्यम्बकेति च मन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ॥ ८ ॥

जो पूर्वजन्म में कर्म किया उसका फल मिला अब उसके शान्ति के विधान को कहता हूँ। त्र्यम्बक [मृत्युञ्जय] मन्त्र का जप एक लाख करावे ॥ ८ ॥

देवस्य प्रतिमां कृत्वा पूजयेच्चैव शास्त्रतः ।
सुवर्णस्य शिवं कुर्यात् पलपञ्चप्रमाणकम् ॥ ९ ॥

शङ्करकी प्रतिमा (मूर्ति) बनाय शास्त्रोक्त रीतिसे पूजन करे वह प्रतिमा पाँच पल सुवर्ण (सोने) की बनवानी चाहिये ॥९॥

धूपैर्दीपैश्च नैवेद्यैर्मन्त्रेणाऽनेन पजयेत् ।

धूप, दीप, नैवेद्य [भोग के लिये फलादि] से नीचे लिखित मन्त्रों द्वारा प्रतिमा स्थापित कर पूजन करे ॥

ॐ हौं हीं जूँ सः हराय नमः। इति प्रतिमास्थापनं रौप्यपात्रे। ॐ हौं हीं जूँ सः महेश्वराय नमः इति धूपम्। ॐ हौं हीं जूँ सः पिनाकधृते नमः इति प्रतिमां संस्पृश्यावाहनम् ।

आवाहये महादेवं देवदेव सनातन ! ।
इमां पूजां गृहाण त्वं मम पापं व्यपोहतु ॥१०॥

हे देव-देव ! [हे शिव] देवताओं में श्रेष्ठ सनातन [आद्यन्त पर्यन्त याने सर्वदा स्थित रहनेवाले] आप इस पूजा को स्वीकार करें और मेरे पापों का नाश करें--इस प्रकार महादेवजी का आवाहन कर प्रार्थना करे ॥ १० ॥

ॐ हौं हीं जूँ सः यँ रँ लँ वँ शँ षँ सँ हँ त्तँ सोऽहं शङ्करस्य सर्वेन्द्रिय-वाङ्-मनश्चक्षुः-श्रोत्र-जिह्वा-घ्राणा इहागत्य, इह जीवस्थितिं सुखं चिरं तिष्ठन्तु। इति प्राणप्रतिष्ठां विधाय, शिवं ध्यायन् पूजयेत्। ॐ हौं हीं जूँ सः पशुपतये नमः-इति पञ्चामृतेन स्नानम् ।

ॐ हौं ह्रीं जूँ सः शिवाय नमः-इति चन्दनादिभिः पूजनम् । ॐ हौं ह्रीं जूँ सः महादेवाय नमः—इति विसर्जनम् ।

इस प्रकार प्राणप्रतिष्ठा, ध्यान, पूजन और विसर्जन करे ।

गोदानं च ततः कुर्यात् कृष्णां च कपिलां ततः ।
विप्राय: वेदविदुषे सुवर्णं दक्षिणां ततः ॥११॥
प्रदक्षिणां ततः कुर्याद्विप्रस्येशानरूपिणः ।
शतसंख्यद्विजांश्चैव भोजयित्वा विसर्जयेत् ॥१२॥

फिर कृष्णा [काली] अथवा कपिला गाय वेद के विद्वान् विप्र [ब्राह्मण] को स्वर्ण [सोना] दक्षिणा के साथ दे । और ईशान रूपी अर्थात् शङ्कर स्वरूप विप्र की प्रदक्षिणा करे, तथा सौ ब्राह्मणों को सम्मान पूर्वक भोजन करावे ॥ ११-१२ ॥

प्रयागे मकरे माघे पत्न्या सह वरानने ! ।
स्नानं कुर्याच्च भो देवि ! व्रतमेकादशीं चरेत् ॥१३॥

हे वरानने ! मकर के सूर्य में माघमास में प्रयाग तीर्थ में सपत्नीक जाकर स्नान करे तथा एकादशी व्रत को करे ॥ १३ ॥

एवं कृते न सन्देहो रोगनाशश्च जायते ।
पुत्रं चापि लभेद्देवि ! चिरञ्जीविनमुत्तमम् ॥१४॥

हे प्रिये ! इस तरह केनियमोंका पालन करनेवाला पुरुष निश्चय ही रोगादिकों से निवृत्त होकर चिरञ्जीवी पुत्र लाभ करता है ॥१४॥

यद्येवं च प्रकुरुते सप्तजन्म स-पुत्रकः ॥१५॥

यदि बिना विचार किये ही अर्थात् संशय रहित होकर करने वाला सात जन्म पर्यन्त पुत्र सुख को पाता है ॥ १५ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-हरसम्वादे रोहिणीनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्त-कथनं नाम सप्तदशोऽध्यायः ॥१७॥

सत्रहवाँ अध्याय समाप्त ॥ १७ ॥

अथाऽष्टादशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

गोमत्या उत्तरे कूले क्रोशद्वयप्रमाणतः ।
विष्णुदासेति विख्यातो देवीपुत्रो वरानने ! ॥१॥

शिवजी बोले—हे वरानने! गोमती नदी के उत्तरीय तीरसे दो कोस दूरी पर देवीपुत्र तथा विष्णुदास नाम करके विख्यात एक मनुष्य था ॥ १ ॥

शङ्करे वै पुरे रम्ये तस्य भार्या च सुन्दरी ।
कर्कशा कुलटा सा वै पतिविद्वेषकारिणी ॥२॥

वह अच्छी शिवपुरी में जन्म लियाथा तथा उसकी स्त्रीसुन्दरी औरकर्कशा एवंपुंश्चलीथी। वह अपनेपतिसेनित्य झगड़नेवालीथी२।

शुश्रूषां कुरुते नैव श्वश्र्वोश्चैव वरानने ! ।
स्वधर्मनिरतो नित्यं शिवभक्तिपरायणः ॥३॥

हे वरानने ! वह अपने सास-श्वसुर की सुश्रूषा नहीं करती थी, तथा विष्णुदास अपने धर्म में दृढ़ सङ्कल्प तथा नित्य शिव भक्ति में प्रेम रखने वाला था ॥ ३ ॥

कृषिं वै सोऽकरोच्चैव विप्राणां चैव सेवकः ।
पित्रोश्च परमो दासः सदा च प्रियभाषणः ॥४॥

वह कृषि करता हुआ ब्राह्मणोंका परम सेवक तथा सदैव प्रिय बोलनेवाला माता-पिता का परमभक्त था ॥ ४ ॥

एतस्मिन्नगरे देवि ! व्रती कश्चित्समागतः ।
भिक्षार्थमागतो द्वारे तथा भिक्षां ददे न च ॥५॥

हे देवि ! कोई ब्रह्मचारी इस नगर मेंभिक्षाके लिए विष्णुदासके दरवाजेपरआया किन्तुउसकीस्त्रीने भिक्षुकको भिक्षा नहीं दिया ॥५॥

अपभ्रंशमवोचत्सा भिक्षुकं प्रति सुन्दरी ।
विष्णुदासो गृहे नाऽऽसीत्तद्दिने कुत्रचिद्गतः ॥६॥

वह सुन्दरी (स्त्री) उस भिक्षुक ब्रह्मचारी को कटु वचनों द्वारा तिरस्कार करदी। उस दिन विष्णुदास घर पर उपस्थित नहीं था, कहीं कार्यवश चला गया था ॥ ६ ॥

एवं बहुगते काले तस्य मृत्युर्बभूव ह ।
भक्तत्वान्मम भो देवि ! यज्ञलोके गतः स वै ॥ ७ ॥

हे देवि ! इस प्रकार बहुत दिन बीत जाने के बाद उस [विष्णुदास] को मृत्यु हो गई। वह मेरा परमभक्त था अतः उसका यज्ञलोक में वास हुआ ॥ ७ ॥

त्रिंशद्वर्षसहस्राणि यज्ञेण सह भोगवान् ।
तस्य भार्या मृता क्रूरा श्वश्रूणां दुःखदायिनी ॥ ८ ॥

तीस हजार वर्ष तक उस यज्ञलोक में भोग किया, पुनः सास-श्वसुरों को कष्ट देनेवाली उसकी स्त्री की मृत्यु हो गई ॥८॥

सा गता नरके घोरे रौरवे नाम्नि भामिनि ! ।
भुक्त्वा नरकजं दुखं पुनर्व्याघ्री बभूव ह ॥ ९ ॥

हे भामिनि ! उस (स्त्री) का रौरव नामक नरकमें वास हुआ तथा नरक-यातना भोगने के बाद व्याघ्रीकी योनिमें उत्पन्नहुई ॥९॥

पुनः शृगाली वै जाता मानुषी च ततोऽभवत् ।
पुनर्विवाहिता सा वै मर्त्यलोके वरानने ! ॥१०॥

हे वरानने ! उसके बाद फिर शृगाली [सियार की योनि में] उत्पन्न हुई। उसके बाद मर्त्यलोक में फिर मनुष्य शरीर पायी, वही इसके साथ फिर विवाही गई ॥ १० ॥

वन्ध्या चैव विशालाक्षि! पूर्वजन्मविपाकतः ।
रोगी बहुभवेद्देवि ! सुखं नैवोपजायते ॥ ११ ॥

हे विशालाक्षि ! वह जन्मान्तर में जैसा कर्म की थी, उसके फल स्वरूपमें वन्ध्या हुई और हे देवि ! अनेक व्याधियों के कारण कभी सुखी नहीं रही ॥ ११ ॥

तस्याः पुण्यं प्रवक्ष्यामि पूर्वपापप्रणाशनम् ।
स्वपतिं प्रत्यहं माघे स्नापयेदुष्णवारिणा ॥१२॥

अब उसके पूर्वजन्म कृत पापों को नष्ट करनेवाले पुण्य को कहता हूँ। वह अपने पति को प्रतिदिन गरमाये हुए पानी से माघ में स्नान कराये ॥ १२ ॥

स्वश्रूचरणयोः प्रातर्नमस्कुर्यात् प्रयत्नतः ।
अलाबुं नैव खादेत्तु षोडशाब्दप्रमाणतः ॥१३॥

तथा नित्य प्रातःकाल उठकर अपने सास को नमस्कार करे और इसके बाद नित्य क्रियायें कर अपनी गृहस्थी का कार्य करते हुए सोलह वर्ष पर्यन्त लौकी को न खाये ॥ १३ ॥

माघे नियमतो देवि ! पतिना सह सुव्रते ! ।
स्नानं प्रतिदिनं कुर्याद्दीपं दद्याद्यथाविधि ॥१४॥

हे देवि ! माघ मास में नित्य अपने पति के साथ में स्नान करे तथा विधिवत् आकाश में दीपदान करे ॥ १४ ॥

ततः कृत्वा सुवर्णस्य वृक्षं वै द्विपलस्य च ।
रौप्यां दशपलां देवि ! वेदीं शुभ्रां च कारयेत् ॥१५॥

फिर हे देवि ! दोपल सोने (आठ तोले सोने) का वृक्ष बनवा कर तथा दश पल (४० भर) चाँदी की सुन्दर वेदी बनावे ॥१५॥

वृक्षं तस्यां च संस्थाप्य कल्पवृक्षस्वरूपिणम् ।
पूजयित्वा ततो देवं शंख-चक्र-गदाधरम् ॥१६॥

और उस कल्पवृक्ष रूपी वृक्ष को वेदी पर स्थापन करे, तथा उसके बाद शंख, चक्र, गदा को धारण करनेवाले विष्णु भगवान् का पूजन करे ॥ १६ ॥

सगणं देवदेवेशं वृषकेतुं वरप्रदम् ।
ततो वै पूजयेद्देवि ! विधिवच्चारुरूपिणम् ॥१७॥

हे देवि ! उसके बाद देव-शिरोमणि वरदायक शङ्कर जी का गणों के सहित विधिवत् पूजन करे ॥ १७ ॥

वस्त्र-काञ्चन-केयूरैः कुण्डलाभ्यां विशेषतः ।
तद् वृक्षं वेदिकायुक्तं तस्मै विप्राय दापयेत् ॥१८॥

वस्त्र, गहने और कुण्डलों से अलंकृत वृक्ष को वेदी सहित उस (आचार्य) ब्राह्मण को देवे ॥ १८ ॥

अन्यान् विप्रान् वरारोहे ! भोजयेद्विविधै रसैः ।
पायसैर्मोदकैः शुभ्रैः षट्षष्टिप्रमितान् प्रिये ! ॥१९॥

हे प्रिये ! और छाछठ ब्राह्मणों को सुन्दर सुस्वादु मिष्ठान्न तथा तरह-तरह के रसों से युक्त भोजन करावे ॥ १९ ॥

ततो गां कपिलां दद्यात् स्वर्णशृङ्गीं स-नूपुराम् ।
सप्तम्यां रवियुक्तायां व्रतं कुर्यान्मम प्रिये ! ॥२०॥

हे प्रियतमे ! इसके बाद सोने से मढ़ी हुई सींघ वाली नूपुरादि (पैर में घुघुरू वगैरह) से सुशोभित कर कपिला गौ को दान दे, तथा रवियुक्ता सप्तमी में मेरा व्रत करे ॥ २० ॥

गोपालस्य च मन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ।
हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं तथा ॥२१॥

और गोपाल सन्तान मन्त्र का एक लाख जप तथा उसके दशांश अर्थात् दशहजार आहुति (हवन) उसके दशांश तर्पण और मार्जन करावे ॥ २१ ॥

एवं कृते न सन्देहः शीघ्रं पुत्रमवाप्नुयात् ।
कन्यका नैव जायन्ते रोगश्चैव निवर्त्तते ॥२२॥

इस विधान को करने से निःसन्देह शीघ्र पुत्रोत्पत्ति होतीहै, और कन्या नहीं होती तथा रोग भी निवृत्त हो जाते हैं ॥२२॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसम्वादे
रोहिणीनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं
नामाऽष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

अठारहवाँ अध्याय समाप्त ॥ १८ ॥

अथैकोनविंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

रोहिण्याश्चरणं देवि ! चतुर्थं साम्प्रतं शृणु ।
सत्कृतं सञ्चितं पूर्वमिह जन्मनि तत्फलम् ॥ १ ॥

शिवजी बोले—हे देवि ! अब रोहिणी नक्षत्रके चौथे चरण में उत्पन्न मनुष्य के उन फलों को सुनो, जो कि जन्मान्तर का किया हुआ इस जन्म में भोगना पड़ता है ॥ १ ॥

बुद्धिशर्मा द्विजः कश्चिदन्तर्वेद्यां बभूव ह ।
पुरोहितो महाभ्रष्टः परपाके सदा रतः ॥ २ ॥

किसी अन्तर प्रदेश में बुद्धिशर्मा नामक द्विज (ब्राह्मण) हुआ था, जो कि पुरोहिती कर्म (यजमानीवृत्ति) करनेवाला पतित और परपाक (रसोइयादारी) करता था ॥ २ ॥

भार्या पररता तस्य चञ्चला चपला सदा ।
धनं च सञ्चितं तेन प्रतिग्रहप्रसङ्गतः ॥ ३ ॥

और उसकीस्त्रीचंचलातथा चपला और परपुरुपरता(जारिणी) थी। वह (विप्र) सदैव प्रतिग्रह (दान) के द्वारा धन संचय किया॥३॥

मरणं तस्य वै जातं पश्चाद्भार्या मृता तु सा ।
गतोऽसौ नरके घोरे पूर्वजन्मविपाकतः ॥ ४ ॥

प्रथम उस ब्राह्मण की मृत्यु हुई और बादको उसकी स्त्री मरी। वे (स्त्री-पुरुष) दोनों पूर्वजन्मकृत कर्मके प्रभावसे घोर नरकमेंगये॥४॥

युगमेकं वरारोहे ! भुक्त्वा नरकयातनाम् ।
वृषयोनिं च सम्प्राप्तो रासभत्वं ततोऽलभत् ॥ ५ ॥

हे वरारोहे ! उस नरक में एक युगतक उसकी यातनायें भोग कर पशु (बैल) की योनि पाया,उसके बाद गदहे की योनि मेंआया५

मानुषत्वं पुनर्याति मध्यदेशे वरानने ! ।

अपुत्रता भवेद्देवि ! कन्यका चैव जायते ॥ ६ ॥

हे वरानने ! उसके बाद फिर मध्यदेश में मनुष्यका शरीर पाया और पूर्वकर्म विपाकसे इसे केवल कन्या ही होती हैं ॥६॥

शरीरे रोगमुत्पन्नं सुखं नैव प्रजायते ।
प्रायश्चित्तं ततो देवि ! प्रवक्ष्यामि वरानने ! ॥ ७ ॥

हे वरानने ! और शरीर में रोग उत्पन्न हो जानेसे सुख भी नहीं मिलता । हे देवि ! अब इसके प्रायश्चित्त को कहता हूँ ॥७॥

आकृष्णेति जपेन्मन्त्रं लक्षं वै विधिवत् प्रिये ।
होमं कुर्यात् प्रयत्नेन तिला-ऽऽज्य मधुना सह ॥ ८ ॥

हे प्रिये ! "आकृष्णेन रजसा वर्तमानो" इस सूर्य मंत्र का विधिवत् एक लाख जप तथा तिल, घी, मधु के सहित हवन करावे ८

कुण्डे वै वर्तुलाकारे दशांशं तर्पणं तथा ।
मार्जनं तु विशेषेण ततो ब्राह्मणभोजनम् ॥ ९ ॥

और हवन के लिये वर्तुलाकार [गोलाकर] कुण्ड बनावे, उसके दशांश तर्पण तथामार्जनउसके बाद ब्राह्मणभोजन करावे॥९॥

दशवर्णा प्रदातव्या गुडधेनुस्तथा प्रिये ! ।
शय्यां दद्यात् प्रयत्नेन विधिवद् ब्राह्मणाय च ॥१०॥

हे प्रिये ! दशवर्ण वाली गौओं का दान गुड़के सहित करे और शय्यादान विधिवत् अच्छे ब्राह्मण को देवे ॥१०॥

भोजयेद्‌ब्राह्मणाञ्छुद्धान् वेदपाठरतान् प्रिये ! ।
सप्तसप्ततिसङ्ख्यान् वै दीक्षिताञ्छुद्धमानसान् ॥११॥

शुद्ध, नित्य वेद पाठको करनेवाले और अच्छे ढंग से यज्ञादिकों को कराने वाले ऐसे ७७ ब्राह्मणों को खिलावे ॥११॥

प्रयागे माघमासे वै प्रातः स्नानं स-भार्यया ।
एवं कृते न सन्देहः पुत्रस्तस्य प्रजायते ॥१२॥

और माघ महीने में प्रयाग में जाकर स्त्री सहित प्रातःकाल

स्नान करे। ऐसा करने से पुत्रोत्पत्ति होती है—इसमें संदेह नहीं ॥१२॥

रोगः प्रमुच्यते तस्य वन्ध्यात्वं च प्रणश्यति ।
मृतवत्सा लभेत् पुत्रं कन्यका नैव जायते ॥१३॥

उसके रोग दूर होते हैं और वन्ध्यात्व [बाँझपन] दोष छूट जाताहै, तथा पुत्री न होकर मृतवत्साको भी पुत्रही उत्पन्न होताहै।१३।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे रोहिणीनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्त-कथनं नामैकोनविंशोऽध्यायः ॥१९॥

उन्नीसवाँ अध्याय समाप्त ॥१९॥

अथ विंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अथ वक्ष्ये महादेवि ! चन्द्रनक्षत्रजं फलम् ।
यत्कृतं मानुषैः पूर्वं तच्छृणुष्व वरानने ॥ १ ॥

शिवजी बोले कि—हे वरानने । अब मृगशिरा नक्षत्र में उत्पन्न मनुष्यके पूर्व जन्म के कियेहुए कर्म का फल कहते हैं—उसे सुनो ॥१॥

मध्यदेशे पुरे शुभ्रे वसत्येको द्विजः खलु ।
ब्रह्मकर्मरतो नित्यं वेदवेदाङ्गपारगः ॥ २ ॥

वेद—वेदाङ्ग में प्रवीण तथा ब्रह्मकर्म में सदा निरत रहने वाला मध्य देशीय अच्छेनगर में एक ब्राह्मण रहता था ॥ २ ॥

प्रत्यहं पाठयामास चतुर्वेदान् स-विस्तरान् ।
वेदशर्मा द्विजः ख्यातस्तस्य पत्नी सुशीलिका ॥३॥

वह नित्य चारों वेदों को अच्छे ढंग से पढ़ाया करता था, तथा वेदशर्मा नाम करके प्रसिद्ध था और सुशीला नामकी उसकी स्त्री थी ॥ ३ ॥

प्रत्यहं पाठयेद्वेदं जीविकार्थं वरानने ! ।

लोहकारस्य मरणं तत्पुरेऽभूद्वरानने ! ॥४॥

हे वरानने ! वह जीवनवृत्ति के लिये नित्य वेदको पढ़ाता था, दैव संयोग से उस नगर में एक लोहार की मृत्यु हो गयी ॥४॥

न दत्तं तस्य वै स्वर्णं लोहकारस्य संस्थितम् ।
तत्स्वर्णं प्रत्यहं देवि ! बुभोज सह भार्यया ॥५॥

हे देवि ! उस लोहार का लिया हुआ सोना उसने (ब्राह्मणने) नहीं दिया और उसे नित्य दोनों (स्त्री-पुरुष) खर्च करते थे ॥५॥

एवं बहुगते काले मरणं ब्राह्मणस्य वै ।
सूर्य लोकेऽभवद्देवि ! यतः सूर्यस्य सेवकः ॥६॥

इस प्रकार बहुत दिन बीतने पर ब्राह्मण की मृत्यु हो गयी । सूर्य का भक्त होने के कारण वह (सूर्य) लोक को पाया ॥६॥

विंशद्वर्षसहस्राणि सूर्यलोकेऽवसत् प्रिये ! ।
ततः पुण्यक्षये जाते मर्त्यलोके च मानवः ॥७॥

हे प्रियतमे ! बीस हजार वर्ष वह सूर्य लोक में वास कर फिर पुण्यक्षीण होनेपर मर्त्यलोक में मनुष्य शरीर धारण किया ॥७॥

पुत्रकन्याविहीनस्तु धनधान्यसमन्वितः ।
लोहकारस्य स्वर्णं हि गृहीतं नैव दत्तवान् ॥८॥

इसने जन्मान्तर में जो लोहार का सुवर्ण लेकर नहीं दिया था उस पाप के फल से पुत्र कन्यासे रहित किन्तु धन-धान्यसे युक्त हुआ ॥ ८ ॥

तेन कर्म विपाकेन लोहकारः सुतोऽभवत् ।
प्रीतिमांश्चैव सर्वेषां पितृमातृप्रियङ्कर ॥९॥

उस ऋण के सम्बन्धसे वह लोहार इसका पुत्र हुआ, वह सबसे प्रेम करनेवाला तथा माता पिता का परम प्रिय हुआ ॥९॥

युवारूपसमापन्नस्तदा मृत्युर्भवेदनु ।
पुनः पुत्रस्य चाऽभावः कन्या चैव प्रजायते ॥१०॥

और वह जब युवा अवस्था को प्राप्त हुआ तो उसकी मृत्यु हो गयी, फिर उसके बाद कोई पुत्र नहीं हुआ केवल कन्याही उत्पन्न हुई ॥१०॥

तत्पापस्य विशुद्ध्यर्थं प्रायश्चित्तमतः शृणु ।
गायत्रीलक्षजाप्येन दुर्गायाः पूजनेन च ॥११॥
दशवर्णप्रदानेन भूमिदानेन पार्वति ! ।
सर्वं पापं क्षयं याति पूर्वजन्मसमुद्भवम् ॥१२॥

हे पार्वती ! उस पाप की शुद्धि के लिये अब प्रायश्चित्त को सुनो । गायत्रीमंत्र का एक लाख जप, दुर्गापाठ, दशवर्णा गौओं का दान तथा भूमिका दान करे, तब जन्मान्तर कृत सब पाप नष्ट होते हैं । ॥ ११-१२ ॥

गयाश्राद्धं प्रयत्नेन तदर्थं नियतः प्रिये ! ।
प्रयागे मकरे मासि स्नानं कुर्यात् प्रयत्नतः ॥१३॥

और उसके लिये नियम पूर्वक गयाश्राद्ध और प्रयाग में जाकर माघ मासमें विधिवत् प्रातः स्नान करे ॥ १३ ॥

ततः पापं क्षयं याति पुनः पुत्रश्च जीवति ।
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नाऽत्र कार्या विचारणा ॥१४॥

इस बताये हुए नियम को बिना विचारे ही क्योंकि ऐसा करने से पापों का नाश और चिरजीवी पुत्रोत्पत्ति तथा रोग दूर होते हैं ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे मृगशिरानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम विंशोऽध्यायः ॥ २० ॥

बीसवाँ अध्याय समाप्त ॥ २० ॥

———

अथ एकविंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

कान्यकुब्जे शुभे देशे कश्चिच्च नन्दने पुरे ।
बोधशर्मा द्विजश्चाऽऽसीत् भिक्षुवृत्तिस्तु निर्धनः ।१

शिवजी बोले—कि कान्यकुब्ज देश में अच्छे नन्दनपुर नामक नगर में एक बोधशर्मा नामक भिखारी ब्राह्मण था ॥ १ ॥

परान्नं भुज्यते नित्यं परप्रेष्यरतः सदा ।
तस्य पत्नी समाख्याता बाधमा नाम वै पुरा ॥२॥

वह सर्वदा सेवावृत्ति से उपार्जन करके नित्य उसी अन्नको खाता था, और 'बाधमा' नामकी उसकी स्त्री थी ॥ २ ॥

जन्मतो मरणं यावत् परान्नं भुज्यते च वै ।
नरके पतनं तेन तयोर्जातं प्रतिग्रहात् ॥ ३ ॥

उसने आजन्म दूसरे ही का अन्न खाया, इस कारण से अर्थात् उस प्रतिग्रह से दोनों दम्पति को नरकवास हुआ ॥ ३ ॥

बहुवर्षसहस्राणि प्रवासो नरकेऽभवत ।
नरकान्निःसृतो देवि ! काकश्चैव मृगोऽभवत् ॥ ४ ॥

हे देवि ! कई हजारवर्ष नरक वास होने के बाद उसे कौआ की योनि मिली, फिर उसके बाद मृगयोनि में आया ॥ ४ ॥

पुनर्वै मेषयोनिश्च पूर्वकर्मविपाकतः ।
ततो वै मानुषो जातो मध्यदेशे वरानने ! ॥ ५ ॥

हे वरानने ! पुनः पूर्वजन्मकृतकर्म द्वारा भेंड़की योनि मिली, उसके बाद अब मध्य देशमें मनुष्य शरीर पाया है ॥ ५ ॥

रोगवान्नृत्यशीलश्च पुत्र-कन्याविवर्जितः ।
परान्नं प्रत्यहं भुङ्क्ते श्राद्धं नैव कृतं पुरा ॥ ६ ॥

'निकटे' इति च पाठान्तरम् ।

रोगी तथा नृत्य कला को जाननेवाला सन्तान रहित हुआ और सर्वदा दूसरे का अन्न खाया किन्तु श्राद्ध कभी नहीं किया।६।

अतो वंशस्य वै छेदः फलञ्चैव तु पूर्वजम् ।
शान्तिं तस्य प्रवक्ष्यामि पूर्वपापक्षयस्ततः ॥ ७ ॥

अतः पूर्वजन्म के दोष से इसके कुल का नाश होगया, इसकी शान्ति कहता हूँ—जिससे कि पूर्वके सब तरह के पाप समूल नष्ट हों ॥ ७ ॥

गायत्री जातवेदाभ्यां द्विलक्षं जापयेच्छिवे ! ।
ततः पापविशुद्धिः स्याद्दशांशहवनं यदा ॥ ८ ॥

हे शिवे ! गायत्री मंत्र का और "जातवेदसे" इस मंत्र का दो लक्ष जप कराना चाहिये तथा दशांश हवन कराने से पाप की शुद्धि होती है ॥ ८ ॥

तर्पणं मार्जनं देवि ! ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः ।
शतसंख्यामिताञ्छुद्धान् गृहस्थानतिभक्तितः ॥ ९ ॥

हे देवि ! फिर तर्पण और मार्जन करे तथा शुद्ध गृहस्थ ऐसे सौ ब्राह्मणों को श्रद्धा पूर्वक भोजन करावे ॥ ९ ॥

वृषमेकं प्रदद्यात्तु नीलवर्णं विभूषितम् ।
एवं कृते न सन्देहो रोगनाशो भवेद् ध्रुवम् ।
पुत्रस्तु जायते देवि ! वन्ध्यात्वं च प्रणश्यति ॥१०॥

पुत्र कामना तथा रोग निवृत्ति के लिये श्याम वर्ण वाले बैल को अलंकृत कर शुद्धब्राह्मण को दान दे। ऐसा करने पर वन्ध्यापन दोष नष्ट हो पुत्र उत्पन्न होता है ॥ १० ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसम्वादे मृगशिरानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित-कथनं नामैकविंशतितमोऽध्यायः ॥ २१ ॥

इक्कीसवाँ अध्याय समाप्त ॥ २१ ॥

अथ द्वाविंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

नर्मदादक्षिणे तीरे पुरीका नाम वै पुरी ।
तस्यां पुर्यां विशालाक्षि! कुलालो धनवानपि ॥१॥

शिवजी बोले-हे विशालाक्षि! नर्मदा नदी के दक्षिण तट पर स्थित पुरीका नाम की नगरी थी, उसमें एक धनिक कुम्हार रहता था ॥१॥

कुलालकर्मतो देवि! बहुद्रव्यमुपार्जितम् ।
कर्मचन्द्र इति ख्यातस्तस्य पत्नी च देवकी ॥२॥

हे देवि! उस कुम्हारनेअपने कर्मसेअर्थात् मिट्टीकेपात्रद्वाराअधिक द्रव्य पैदा किया, उसकानाम कर्मचन्द्रतथा स्त्रीकानाम देवकीथा॥२॥

स्वकर्मनिरतो नित्यं पात्रं कृत्वा दिने दिने ।
एवं सर्वं वयो जातं वृद्धत्वं च ततोऽभवत् ॥३॥

वह नित्य प्रति मिट्टी के पात्र (घड़ा आदिको) बनाया करता था । इसी कार्य को करते करते उसकी समस्त आयु बीत चली और वृद्धावस्था आ गयी ॥ ३ ॥

वृद्धे जाते तदा देवि! दारिद्र्यत्वं प्रजायते ।
सूर्पकारस्य वै द्रव्यं व्यवहारे गृहीतवान् ॥४॥

हे देवि! उसे वृद्ध होते ही दरिद्रता ने आ घेरा अर्थात् निर्धन हो गया, तब उसने सूर्पकार (घरकार) से निर्वाह के लिये कुछ द्रव्य लिया ॥ ४ ॥

शतसंख्यामितं स्वर्णं व्ययं सर्वं कृतं शिवे! ।
कुलालस्याऽभवन्मृत्युः पत्नी तस्य मृता पुरा ॥५॥

हे शिवे! उसमें से सौ सुवर्णमुद्रा (असर्फी) जो लिया था उसे व्यय कर दिया, इसके बाद उसकी मृत्यु हो गई तथा उसकी स्त्री पहले ही मर चुकी थी ॥ ५ ॥

नर्मदायां महादेवि ! तावुभौ मृत्युमापतुः ।
तत्तीर्थस्य फलाद्देवि ! स्वर्गलोकं गतावुभौ ॥६॥

हे महादेवि ! नर्मदा नदीके तीर पर मृत्यु होने के कारण उन दोनों को स्वर्ग लोक की प्राप्ति हुई ॥ ६ ॥

बहुवर्षसहस्राणि ताभ्यां भुक्तं फलं शुभम् ।
ततः पुण्यक्षये जाते मृत्युलोके च जायते ॥७॥

दोनोंने स्वर्गमें जब तक पुण्य रहा तब तक उत्तम फल भोग किया, फिर पुण्य नष्ट होने पर मर्त्यलोक में जन्म लिया ॥ ७ ॥

मानुषेऽपि शुभं जन्म धन-धान्यसमन्वितः ।
पुनर्विवाहिता नारी पूर्वजन्मप्रसङ्गतः ॥८॥

मृत्युलोक में भी उत्तम धनिक कुल में जन्म हुआ और वही स्त्री पूर्व जन्म के प्रसङ्ग से इसके साथ फिर विवाही गयी ॥ ८ ॥

ऋणसम्बन्धतो देवि! पुत्रो जातस्तदा शिवे! ।
सूपकारो महादेवि ! वैरुद्धयं बालतः कृतम् ॥९॥

हे शिवे ! ऋण सम्बन्धसे वह (जिसका द्रव्यलियाथा) धरकार इसकी सन्तान होकर बचपन ही से मन चले कार्य करने लगा ॥९॥

प्रत्यहं वसु यल्लब्धं तत्सर्वं च व्ययं तथा ।
द्यूतवेश्याप्रदानेन धनं सर्वं व्ययं गतम् ॥१०॥

और प्रति दिन जो द्रव्य वह पाया उसे जुआ और वेश्यागमन में व्यय करता हुआ सब द्रव्य खर्च कर डाला ॥ १० ॥

युवा जातो यदा देवि पुत्रकन्यासमन्वितः ।
मरणं तस्य वै जात पुनः पुत्रो न जायते ॥११॥

हे देवि ! जब वह युवा अवस्था को प्राप्त हुआ तथा सन्तानें हुई तो वह मरगया फिर इसके बाद कोई पुत्र न हुआ ॥ ११ ॥

अथ शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु सर्वं वरानने ! ।
गायत्रीलक्षजाप्येन त्र्यम्बकेन तथा प्रिये ! ॥१२॥

हे प्रिये ! अब इसकी शान्ति कहता हूँ—उसे सुनो। गायत्री मंत्र का और "त्र्यम्बकं यजामहे" इस मंत्र का एक लाख जप करावे तो शान्ति हो ॥ १२ ॥

कर्तव्यं कुण्डमुच्चैस्तु त्रिकोणं विधिवत्प्रिये !।
होमं च कारयेद्देवि ! दशांशं तर्पणं ततः ॥१३॥

हे प्रिये ! फिर उच्च वेदिकाकार त्रिकोण कुण्ड विधिवत् बनाकर जप का दशांश होम और तर्पण करे ॥ १३ ॥

ततो वै कपिलां दद्याद्धेमश्रृङ्गीं सहाम्बराम् ।
एवं कृत्वा वरारोहे ! पुनः पुत्रः प्रजायते ॥१४॥

पुनः सोनेसे मढ़ीहुई सींगवाली तथा वस्त्रादि सहितकपिलागौदान दे, ऐसा विधान करनेसे हे वरारोहे ! फिर पुत्रकी प्राप्ति होगी ॥१४॥

सूर्पकारस्य प्रतिमां पलसप्तदशस्य तु ।
सुवर्णस्यैव भो देवि ! रचितां वस्त्रच्छादिताम् ॥१५॥
सूर्पं रौप्यस्य वै कुर्यात् पलषष्टिप्रमाणतः ।
प्रदद्याद्वेदविदुषे ब्राह्मणाय सुतेजसे ॥१६॥

हे देवि ! सत्रह पल सुवर्ण अर्थात् पचासी तोले सोनेकी सूर्पकार (धरकार) की प्रतिमा बनवाकर उसको वस्त्रसे आच्छादित करे तथा साठपल चाँदी का सूप बनवावे और इन वस्तुओं को कर्मनिष्ठ वेदज्ञ ब्राह्मण को दान देवे ॥ १५-१६ ॥

तस्योद्देशेन भो देवि ! ऋणबन्धात् प्रमुच्यते ।
पुत्रश्च जायते देवि ! नाऽत्रकार्या विचारणा ॥१७॥

हे देवि ! यह दान उसके (धरकारके) उद्देश्यसे करे जिससेकिपहिले के ऋणबन्धनसे मुक्त होकर पुत्र प्राप्तहो—इसमें संशय नहीं॥१७॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे मृगशिरानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥

बाईसवाँ अध्याय समाप्त॥२२॥

अथ त्रयोविंशोऽध्यायः

शिव उवाच

अथ वक्ष्याम्यहं देवि ! चतुर्थचरणं तथा ।
मृगशिरो नाम नक्षत्रं तस्य पूर्वं च सञ्चितम् ॥ १ ॥

शिवजी बोले—कि हे देवि ! अब मृगशिरा नक्षत्र के चतुर्थ चरणमें उत्पन्न मनुष्यों के पूर्व संचित कर्म को कहता हूँ ॥ १ ॥

अवन्तीपुरतो देवि ! दक्षिणे क्रोशपञ्चके ।
पुरं तत्रैव विख्यातं केशवं नाम शोभनम् ॥ २ ॥

हे देवि ! अवन्तिका (उज्जैनपुरी) से दक्षिण तरफ पाँच कोश के अन्तर पर उत्तम केशवपुर नाम का एक ग्राम है ॥ २ ॥

वसत्येको हि देवेशि ! ब्राह्मणो वेदपारगः ।
किशोरशर्मा विख्यातो मृतगेहे प्रभुज्यते ॥३॥

हे देवेशि ! वहाँ पर किशोर शर्मा नाम करके अच्छा ज्ञान रखने वाला एक ब्राह्मण था । परन्तु वह श्राद्ध अन्नाहारी था ॥३॥

कष्टेनैव महादेवि ! व्ययं कुर्याद्दिने दिने ।
धनं च बहुधा कृत्वा पुण्यकार्यं न कारयेत् ॥४॥

हे महादेवि ! वह कार्पण्यतासे बहुत धन इकट्ठा किया उसे खर्च करने में अति कष्ट होता था इसलिये धर्मार्थ में कुछ भी व्यय नहीं किया ॥ ४ ॥

ततो भ्रातुः कनिष्ठस्य भागं नैव ददौ च सः ।
त्रिकोटिप्रमितं द्रव्यं स्वगृहे चैव सञ्चितम् ॥५॥

यहाँ तक की अपने कनिष्ठ (छोटे) भाईकाभी हिस्सा वह नहीं दियातथात्रिकोटि(तीन करोड़) जोद्रव्य थावहभी अपनेहीले लिया५

द्रव्यस्यैव विभागाय मरणं ब्राह्मणोपरि ।
कृतं भ्रात्रा कनिष्ठेन द्रव्यं तस्मै न दत्तवान् ॥६॥

उसके छोटे भाईने भाग (हिस्से) के लिए उसके ऊपर आत्महत्या कर डाली किन्तु फिर भी उसे धन नहीं दिया ॥६॥

एवं बहुतिथे काले किशोरः स मृतस्तु वै ।
गतो वै नरके घोरे युगमेकोनविंशतिम् ॥७॥

इस प्रकार बहुत काल गत होजाने पर उस किशोरशर्मा की मृत्यु हो गयी और वह अपने कर्म के प्रभाव से कठिन नरक में उन्नीस युगों तक कष्ट भोगता रहा ॥ ७ ॥

पुनः कर्मवशाद्देवि ! गर्दभत्वं च जायते ।
वृषयोनिस्ततो जातो मानुषत्वं भवेत्पुनः ॥८॥

देवि ! उसके बाद अर्थात् नरक वास की अवधि समाप्त हो जाने पर वह गधे की योनि पाया फिर उसके बाद बैल की योनि और अब मनुष्य शरीर पाया है ॥ ८ ॥

मध्यदेशे वरारोहे ! पुत्रो नैव प्रजायते ।
कन्यका बहवो गर्भा विनश्यन्ति वरानने ! ॥९॥

हेवरानने!वहमध्यदेशमें उत्पन्नहुआ हैपरन्तुउसेपुत्र नहींहोता केवलकन्यायेंहोतीहैं,औरबहुधागर्भ भीखण्डितहोजाया करताहै।९।

पूर्वजन्मकृतं कर्म भुज्यते देवि ! मानवैः ।
इह लोके वरारोहे ! पुण्यं पापमनूनकम् ॥१०॥

हे देवि ! मनुष्यके किए हुए पूर्वजन्मके कर्म (पुण्य या पाप) इस लोकमें (जिसमें जन्म लिया हो) भोगने पड़तेहैं * ॥१०॥

भ्रातुस्तस्य कनिष्ठस्य मरणं पूर्वजन्मनि ।
तदुद्देशेन भोदेवि ! तस्माद् रोगं च जायते॥११॥

हे देवि ! उसका छोटा भाई जो कि जन्मान्तर में अपने भाग के धन के लिए शरीर का त्याग किया था उसी दोष के कारण उसे रोग होता है ॥ ११ ॥

* नाभुक्तं क्षीयते कर्म कल्पकोटिशतैरपि ।

तस्य पापस्य शुद्धिं च शृणु देवि ! प्रयत्नतः ।
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ॥१२॥

हे देवि ! अब उसके पाप की शुद्धि के लिये यत्न कहता हूँ उसे सुनो—गायत्री मन्त्रका एक लाख जप करावे ॥१२॥

गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ।
गायत्रीजातवेदेन त्र्यम्बकेन तथैव च ॥१३॥
लक्षत्रयं जपं चैव दशवर्णाः प्रदापयेत् ।
हवनं विधिवत् कुर्यात् तर्पणं मार्जनं तथा ॥१४॥

और गृह के षष्ठांश भाग द्रव्य को धर्मार्थ व्यय करे तथा गायत्री मन्त्र या 'जातवेदसे' या 'त्र्यम्बकं यजामहे' इस मन्त्र का जप तीन लाख करावे और दशवर्णा गौवोंका दान कर्मनिष्ठ ब्राह्मणों को दे, साथ ही विधिवत् हवन, तर्पण और मार्जन भी करे ॥१३-१४

सौवर्णस्य वरारोहे ! सूर्यं कुर्यात प्रयत्नतः ।
पञ्चपञ्चप्रमाणेन द्विगुणं चन्द्रमेव च ॥१५॥

हे वारारोहे ! पाँच पल (पचीस तोले)सोनेसे सूर्यकी प्रतिमा और दशपल (पचास तोले) सोने से चन्द्रमा की मूर्ति बनवावे ॥१५॥

रौप्यस्यैव प्रकुर्यात्तु यथाशास्त्रं प्रपूजयेत् ।
मन्त्रेणाऽनेन भो देवि ! दद्याद्विप्राय तद्द्वयम् ॥१६॥

हे देवि ! अथवा चन्द्रमाकी प्रतिमा चाँदी की बनवाकर नीचे लिखे शास्त्र विहित नियमानुसार विधिवत् सूर्य चन्द्र मन्त्रों द्वारा पूजन कर, दोनों प्रतिमायें ब्राह्मण को दे देवे ॥ १६ ॥

"ॐ ह्रीं मार्तण्डाय स्वाहा"

यह सूर्य का मन्त्र है ।

सूर्यदेव ! महाभाग ! त्रैलोक्यतिमिरापह ! ।
मम पूर्वकृतं पापं क्षम्यतां परमेश्वर ! ॥१७॥

हे सूर्यदेव ! महाभाग ! आप तीनों लोकों के अन्धकार को नाश करने वाले हैं। हे परमेश्वर ! (जगत् के स्वामी) मेरे जन्मान्तर कृत दुष्कर्मों का शमन करें ॥ १७ ॥

"ॐ सोमाय स्वाहा"

यह चन्द्रमा का मंत्र है।

ॐ सौम्यरूप ! महाभाग ! मन्त्रराज ! द्विजोत्तम ! ।
पूर्वजन्मकृतं पापमोषधीश ! क्षमस्व मे ॥१८॥

हे सौम्यरूप ! [दर्शनीय] हे महादेव ! हे मन्त्रराज ! हे द्विजोत्तम तथा हे औषधियों के स्वामी ! मैं पूर्वजन्म कृत अपराधों के शमनार्थ आप से क्षमा चाहता हूँ ॥ १८ ॥

ततश्च ब्राह्मणान्पूज्य भोजयित्वा विसर्जयेत् ।
एवं कृते न सन्देहो विद्वान् पुत्रोऽभिजायते ॥१९॥
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥२०॥

इसके बाद ब्राह्मणोंका पूजन करके श्रद्धा से भोजन कराकर सत्कार के साथ उनको विदा करे इस प्रकार के नियम से उत्तम सन्तान की प्राप्ति और समस्त रोगों का नाश निसन्देह होता है ॥ १९–२० ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसम्वादे मृगशिरानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्त-कथनं नाम त्रयोविंशोऽध्यायः ॥२३॥

तेईसवाँ अध्याय समाप्त ॥ २३ ॥

अथ चतुर्विंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अथाऽतः सम्प्रवक्ष्यामि रौद्रनक्षत्रजं फलम् ।
येन कर्मविपाकेन मृत्युलोके च भुज्यते ॥ १ ॥

शिवजी बोले—अब आर्द्रा नक्षत्र में उत्पन्न मनुष्य जिस कर्म के द्वारा मृत्युलोक में फल भोगते हैं उसे मैं सम्यक् प्रकार से कहता हूँ ॥ १ ॥

अवन्तिपुर्यां भो देवि ! रङ्गकारश्च तिष्ठति ।
वस्त्राणि रङ्गयन्नित्यं स्वधर्मं पालयेत् सदा ॥ २ ॥

हे देवि ! अवन्तिपुरी [उज्जैनी] नामकी नगरी में एक रंगकार [रंगरेज] अपने व्यवसाय में निरत तथा स्वधर्म पालन में सदा तत्पर वहाँ निवास करता था ॥ २ ॥

कुबेर इति तन्नाम लीलानाम्नी च तत्प्रिया ।
पतिव्रता च सा देवि ! रङ्गकारश्च तां त्यजन् ॥ ३ ॥

उसका नाम कुबेर था तथा उसके स्त्रीका नाम लीलाथा, उसने अपने पतिव्रता पत्नीका किसीकारण वश परित्याग कर दिया॥३॥

ब्राह्मणीं रमते चैकां पापप्रीतिं समुद्वहन् ।
त्यक्त्वा पतिव्रतां भार्यां ब्राह्मणीं प्रीतितोऽभजत्॥४॥

ऐसा करने के बाद वह एक ब्राह्मणी के साथ प्रेमालाप करते हुए दुष्कर्म में प्रवृत्त हो विचरने लगा ॥ ४ ॥

द्रव्यं च सञ्चितं तेन रङ्गकारेण वै शिवे ! ।
भूमिमध्ये च तद्द्रव्यं कृतं तेन च सुन्दरि ! ॥ ५ ॥

हे शिवे ! उसके रंगरेज के पास जितना उपार्जित द्रव्य था सब उसने जमीन में गाड़ दिया ॥ ५ ॥

किञ्चिद्दानं कृतं तेन गङ्गायमुनसङ्गमे ।
मरणं तस्य वै जातं सा च भार्या विवाहिता ॥ ६ ॥

तथा उसने कुछ धन में से गङ्गा और जमुना के संगम स्थानपर दान भी किया। बादको दोनों (स्त्री-पुरुष) की मृत्यु हो गयी ॥६॥

तत्पुरे च सती जाता लीलानाम पतिव्रता ।
सत्यलोकं गतः सोऽपि लक्षद्वयमितं प्रिये ! ॥ ७ ॥

हे प्रिये! उसकी स्त्रीजो लीला नामकी थी वह अपने सतीत्वके प्रभाव से उसी-नगर में सती हुई और उसके पुण्य से उसका पति (रंगकार) भी दो लाख वर्ष तक स्वर्ग सुख भोग किया ॥ ७ ॥

पुनः पुण्यक्षये जाते मनुष्योऽभूत्तदा शिवे! ।
मध्यलोके च विख्यातो धन-धान्यसमन्वितः ॥ ८ ॥

हे शिवे! बादको जब पुण्य नष्ट हुआ तो वह धन-धान्यसे युक्त और विख्यात मर्त्यलोक से मनुष्य शरीर पाया ॥ ८ ॥

पुत्राश्च बहवो जाताःकोऽपि तेषु न जीवति ।
शरीर च ज्वरोत्पत्तिः खञ्जत्वं चरणे तथा ॥ ९ ॥

तथा इसे बहुत पुत्र भी उत्पन्न हुए किन्तु जीवित एक भी न रहे और शरीर सदैव ज्वर से पीड़ित रहता तथा पैर से लँगड़ा हो गया ॥ ९ ॥

ब्राह्मणीगमनं देवि! पूर्वजन्मनि वै कृतम् ।
तेन पापेन भो देवि! पुत्रस्तस्य न जीवति ॥१०॥

हे देवि! पूर्वजन्म में इसने जो कि ब्राह्मणी के साथ रमण किया था उस दुष्कर्म से इसकी सन्तान जीवित नहीं रहती ॥१०॥

अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि तां शृणुष्व वरानने! ।
दशायुतं जपेद्देवि! गायत्रीं वेदमातरम् ॥११॥

हे शुभगे! अब उसकी शान्ति कहता हूँ, उसे सुनो जो गायत्री वेद माता कही जाती हैं उस मंत्रका दसहजार जप करावे ॥११॥

हवनं तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा ।
षडंशं चैव दानं वै दद्याद्वेदविदे शिवे! ॥१२॥

और उसके दशमांश अर्थात् एक हजार आहुति (हवन) सतिल तर्पण और मार्जन कराकर षष्ठांश (छठाँ भाग) धन का वेद जानने वाले ब्राह्मण को दान दे ॥ १२ ॥

ब्राह्मणान् भोजयेत् पश्चाच्छर्करापायसेन च ।

गामेकां विधिवद्दद्याद्धेमवर्णां सुभूषिताम् ॥१३॥

सब कृत्य के बाद मिष्ठान्न [खीर आदि] मधुर सुस्वादु भोज्य पदार्थों का ब्राह्मणों को भोजन करावे तथा पीले रंग की गाय को अलंकृत कर दान करे ॥ १३ ॥

एवं कृते न सन्देहो बहुपुत्रश्च जायते ।
रोगस्यैव विमुक्तिः स्यान्नाऽत्र कार्या विचारणा॥१४॥

इस प्रकार विहित कर्मों को करने वाले निःसन्देह सन्तति लाभ कर रोग से मुक्त हो जाते हैं ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसम्वादे रौद्रनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥

चौबीसवाँ अध्याय समाप्त ॥ २४ ॥

अथ पञ्चविंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

शृणु देवि ! वरारोहे ! नृणां वै पूर्वजन्मनि ।
यत्कृतेन महाघोरे नरके परिपच्यते ॥ १ ॥

शिव जी कहे—कि हे देवि ! मनुष्यों को जन्मान्तरके जिन कर्मोंके द्वारा महाघोर नरक भोगना पड़ता है—उसे सुनो ॥ १ ॥

अवन्त्या पश्चिमे द्वारे वैश्यो वसति भाग्यवान् ।
धन-धान्यसमायुक्तः स्वधर्मनिरतः सदा ॥ २ ॥

अवन्तिका [उज्जैनी] नगरी के पश्चिम द्वार की तरफ धन-धान्य से परिपूर्ण तथा स्वधर्म में सदैव निहित चित्त वाला एक भाग्यवान् वैश्य निवास करता था ॥ २ ॥

एवमर्द्धं वयो जातं दरिद्रत्वं ततोऽभवत् ।
व्ययाऽर्थं वै ततो देवि ! विप्रस्वर्णं गृहीतवान् ॥ ३ ॥

हे देवि! संयोग वश उसकी आधी अवस्था व्यतीत होते ही दरिद्रताने घेरा और दरिद्र हो जाने पर उसने निज व्यय के लिये किसी ब्राह्मण से सोना (द्रव्य ऋण) लिया॥ ३॥

पलविंशप्रमाणं तद्व्ययं जातं वरानने!।
ततो वैश्यस्य मृत्युर्वै भार्यया सहितोऽभवत्॥ ४॥

हे वरानने! उसने बीस पल[८० तोले]सोनाजो लियाथा उसे खर्च कर दिया और बाद को दोनों [स्त्री-पुरुष]की मृत्युहो गयी॥४॥

स्वर्गं जातं ततो देवि! नर्मदामरणादपि।
षष्टिवर्षसहस्राणि स्वर्गस्यैव फलं शुभम्॥ ५॥

हे देवि! परन्तु नर्मदा नदीके निकट मृत्यु होनेके कारणस्वर्ग वास हुआ और वहाँ साठ हजार वर्ष तक स्वर्ग सुख भोग किये॥५॥

भुक्तं बहुविधं देवि! भार्यया सहितेन वै।
ततः पुण्यक्षये जाते पुनर्मर्त्यौ बभूवतुः॥ ६॥

हे देवि! इस प्रकार बहुत दिन बीतजाने पर जब पुण्य नष्ट हुआ तो दोनों मर्त्यलोक में आकर मनुष्य शरीर पाये॥ ६॥

धन-धान्यसमायुक्तौ पुत्रकन्याविवर्जितौ।
रुग्णौ दुर्बलगात्रौ च पूर्वकर्मफलेन तु॥ ७॥

पूर्व जन्म कृत कर्मके प्रभाव से वे दोनों धन-धान्यसे युक्त होते हुए भी सन्तान रहित और रुग्ण तथा कृश शरीर वाले हुए॥ ७॥

ऋणसम्बन्धतो देवि! विप्रः पुत्रोऽभवत्तदा।
ऋणं यावत्प्रमाणं वै गृहीतं पूर्वजन्मनि॥ ८॥

हे देवि! जिस ब्राह्मण का इसने पूर्व जन्म में ऋण लिया था उसके सम्बन्ध से वह इसका पुत्र हुआ जितना ऋण था॥८॥

तावन्मात्रं गृहीत्वा तु ततो वै मरणं भवेत्।
पुनः पुत्रो न तस्यैव विंशद्वर्षे गते सति॥ ९॥

और वह उतने प्रमाण धनको लेकर अर्थात् अपनेप्रति व्ययकरके शरीरत्याग दिया और बीसवर्ष पर्यन्त कोई दूसरा पुत्रनहीं हुआ॥९॥

तस्य दानं शृणुष्वादौ पूर्वपापक्षयो यतः ।
गृहवित्ताष्टमं भागं ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥ १० ॥

प्रथमउसके दान (प्रतिकार) को सुनो जिससेकि पूर्वजन्मकृतपाप नष्टहोजाय इसकेलिये अपनेधनका आठवाँभाग ब्राह्मणकोदानकरे १०

स्वर्णपञ्चपलेनैव पुष्पं च मकराकृतिम् ।
प्रदद्याद्वेदविदुषे पूर्वपापक्षयो भवेत् ॥ ११ ॥

तथा पाँचपल*(बीसतोले) सोनेका मकरके आकार का कुण्डल बनाकर प्राचीन पापनिवृत्तिके लिये कर्मिष्ठवेदज्ञ ब्राह्मणकोदानदे ११

गायत्र्याश्च जपं कुर्याल्लक्षमेकं वरानने ! ।
होमं च तद्दशांशेन मार्जनं च तथाविधम् ॥ १२ ॥

हे वरानने ! गायत्री मन्त्रका एक लाख जप, उसके दशांश हवन और मार्जन करावे ॥ १२ ॥

गामेकां स्वर्णशृङ्गीं च वत्स-वस्त्रविभूषिताम् ।
दद्याद्वेदविदे देवि ! ब्राह्मणाय तदा भवेत् ॥१३॥

हे देवि ! ब्यायी हुई गाय सोने से मढ़ी हुई सींघ वाली, वस्त्र के साथ विभूषित कर वेदज्ञ ब्राह्मण को दान देवे ॥ १३ ॥

पुनः पुत्रः प्रसूयेत नाऽत्र कार्या विचारणा ॥१४॥

इस विधान को करे तो पुत्र उत्पन्न हो इसमें विचार नहीं करना चाहिये ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे
रौद्रनक्षत्रस्य द्वितीयचरण प्रायश्चित्तकथनं
नाम पञ्चविंशोऽध्यायः ॥ २५ ॥

पच्चीसवाँ अध्याय समाप्त ॥२५॥

---

* वराटकानां दशकं द्वयं यत् सा काकिणी ताश्च पणश्चतस्रः ।

अथ षड्विंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच

अवन्ती नगरी नाम्ना ततः क्रोशद्वयोपरि ।
अग्निकोणे महादेवि ! मङ्गलं नाम वै पुरम् ॥ १ ॥

हे महादेवि ! अवन्ती (उज्जैनी) नाम की नगरी से दो कोश की दूरी पर अग्नि कोण में स्थित मङ्गल नामक गाँव था ॥ १ ॥

तस्मिन् ग्रामे वसत्येको ब्राह्मणो द्यूततत्परः ।
अन्ये तु बहवस्तत्र वसन्ति सुद्विजोत्तमाः ॥ २ ॥

उस गाँवमें द्यूत (जूवा) कार्यमें निरत एक ब्राह्मण निवास करता था और वहाँ परबहु संख्यक दूसरे श्रेष्ठ ब्राह्मण भी बसतेथे॥२॥

मद्यपानरतो नित्यं चौरविद्यासु तत्परः ।
परस्त्रीलम्पटो देवि ! वेश्यायां निरतः सदा ॥ ३ ॥

हे देवि ! वह (जुवाड़ी ब्राह्मण) प्रति दिन मद्यपान, चोरीकरने में निरत पर-स्त्री गमन करनेवाला और वेश्यागामी था ॥ ३ ॥

प्रत्यहं स च भो देवि ! द्विजरूपो नराधमः ।
चौरत्वाद् द्रव्यमुत्पाद्य नैव दानं समाचरेत् ॥ ४ ॥

तथा हे देवि ! वह पतित ब्राह्मण नित्य चोरी करके धन को एकत्रित किया करता था परन्तु दान कभी नहीं करता था ॥४॥

एवं बहुदिने याते तस्य मृत्युर्बभूव ह ।
नरके पातयामास यमदूतो यमाज्ञया ॥ ५ ॥

इस प्रकार बहुत समय बीत जानेपर जबउसकी मृत्युहो गयीतो यमराजकी आज्ञासे उनके दूतोंनेउसे नरकमें लेजाकर डालदिया॥५॥

सप्ततिर्वै सहस्राणि रौरवे परिपच्यते ।
महाकष्टं लभेद्देवि ! कृमिसूचीमुखादिभिः ॥ ६ ॥

हे देवि ! वह रौरव नरक में सत्तर हजार वर्ष तक कष्ट

भोगता रहा, तथा सूई के ऐसे मुख वाले कृमियों द्वारा संतप्त होकर महान् कष्ट को पाया ॥ ६ ॥

पुनः कर्मवशाद्देवि ! नरकान्निर्गतो यदा ।
विडाल-काक-योनिं च तदा प्राप्तौ द्वयं हि च ॥ ७ ॥

हे देवि ! पुनः अपने कर्मानुसार नरक यातनायें भोग चुकने के बाद जब नरक से बाहर आया तो बिल्ली की योनि, उसके बाद कौए की योनि में आया ॥ ७ ॥

योनिद्वयफलं भुक्तं मनुष्यत्वं ततो लभेत् ।
मध्यदेशे वरारोहे ! ततः पीडा महत्यपि ॥ ८ ॥

हे वरारोहे ! उन दोनों योनियों के फलों को भोग कर फिर मनुष्य शरीर पाया और बहुत पीडित हुआ ॥ ८ ॥

वंशच्छेदो भवेद्देवि ! पूर्वकर्मविपाकतः ।
तस्योपरि विशालाक्षि ! शान्तिं शृणु वरानने ! ॥ ९ ॥

हे देवि ! पूर्वकर्म विपाक से उसके वंश का नाश हो गया, हे विशालाक्षि ! अब उसकी शान्ति सुनो ॥ ९ ॥

गायत्री-जातवेदाभ्यां त्र्यम्बकेण यथाविधि ।
जपं वै कारयामास हवनं तर्पणं तथा ॥ १० ॥

'गायत्री मन्त्र' 'जातवेदसे' अथवा 'त्र्यम्बकं यजामहे' इन मन्त्रों द्वारा यथाविधि जप, हवन तथा तर्पण करावे ॥ १० ॥

लक्षत्रयं जपेद्देवि ! पूर्वपापविशुद्धये ।
ततो वै पूजयेद्देवि ! तुलसीं विष्णुरूपिणीम् ॥ ११ ॥

पूर्वपाप विशुद्धि के लिये तीन लाख जप कराना चाहिये और विष्णु स्वरूपी तुलसी वृक्ष का भी विधिवत् पूजन करे ॥ ११ ॥

पूजयेद्विविधैश्चाऽन्नैर्धूपनैवेद्य—दीपकैः ।
भूमिदानं ततो देवि यथाशक्ति प्रदापयेत् ॥ १२ ॥

हे देवि ! विविध भाँति के अन्न, धूप, दीप तथा नैवेद्य द्वारा पूजन कर फिर यथाशक्ति भूमि का भी दान करे ॥ १२ ॥

एवं कृते महादेवि ! सर्वरोगक्षयो भवेत् ।
पुत्रश्च जायते देवि ! वन्ध्यात्वं च प्रणश्यति ॥१३॥

इस प्रकार के विहित विधि-विधान को करनेसे समस्त पापनष्ट होकरपुत्र सुखप्राप्तहोता है और वन्ध्यापनदोष भीछूट जाताहै॥१३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे
रौद्रनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं
नाम षड्विंशोऽध्यायः ॥ २६ ॥

छब्बीसवाँ अध्याय समाप्त ॥ २६ ॥

—:❋:—

अथ सप्तविंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अथाऽतः संप्रवक्ष्यामि चतुर्थचरणं शिवे !
कृतं नरेण यद्देवि ! पूर्वजन्मनि किल्विषम् ॥ १ ॥

शिवजी बोले—हे शिवे ! अब आर्द्रा नक्षत्रके चौथे चरणमें उत्पन्न मनुष्य पूर्वजन्ममें जो दुष्कर्म किया है हे देवि ! उसे कहता हूँ ॥१॥

अवन्तिपुर्यामऽवात्सीच्छूद्र एको महाधनः ।
विक्रयं क्रियते छागमेषयोर्गृहवासिनः ॥ २ ॥

अवन्ती (उज्जैन) नामकी पुरी में एक धनिक शूद्र निवास करता था । और वह अपने घर पर ही भेंड़ तथा बकरियों का व्यापार करता था ॥ २ ॥

गजमश्वं तथा रत्नं वस्त्राणि विविधानि च ।
एकदा सूर्यग्रहणं दृष्टं तेन वरानने ! ॥३॥

हेवरानने ! औरहाथी, घोड़ा, रत्न, वस्त्र आदि अनेक प्रकारके वस्तुओंका भी व्यापार करताथा, उसनेएकसमय सूर्यग्रहणकोदेखा

गोसहस्रं कृतं दानं भार्यया सहितेन वै ।
नर्मदायां विशालाक्षि ! स्वर्णवस्त्रयुतं तथा ॥४॥

हे विशालाक्षि ! उस [ग्रहणके] समय उसने स्त्रीकेसाथनर्मदा नदी में सोने तथा वस्त्रोंके सहित एकहजार गौवोंका दानदिया ॥४॥

तत्रैव चाऽभवत् पीडा मृत्युलोकसमुद्भवा ।
स्वर्णकारस्य वै द्रव्यं व्यवहारनिमित्तकम् ॥५॥

पूर्वजन्मार्जितकर्मों द्वाराही मर्त्यलोक में कष्टभोगना पड़ता है—उसने व्यवहार के लिये एक स्वर्णकार [सोनार] से द्रव्य लिया ॥५॥

गृहीतं चैव नो दत्तं ततः शृणु वरानने ।
ततो बहुगते काले शूद्रस्य मरणं ह्यभूत् ॥६॥

हे वरानने ! उसका धन लेकर फिरनहीं दिया, उससेउसको जो फल मिला उसे सुनो, वहुत दिन वीत जाने पर उस शूद्रकी मृत्यु हो गयी ॥६॥

ततोऽसौ नरके घोरे वर्षलक्षद्वयं तथा ।
तत्रैव बहुधा पीडां भुक्त्वा चैव स्वकर्मतः ॥७॥

वह दो लाखवर्ष तक घोर (कठिन) नरक भोग कियाऔर उसने वहाँअपने कर्मानुसार अनेक तरह कीपीड़ायें सहीं ॥ ७ ॥

पुनर्जातो मर्त्यलोके काकश्च महिषो वकः ।
मानुषत्वं ततो देवि ! कुले महति वै शुभे ॥८॥

हे देवि ! फिर उसने मृत्यु लोक में क्रमशः कौए,भैंस, वक (बगला) की योनि पायी,इसके वाद उत्तम कुल में मनुष्य शरीर धारण किया ॥८॥

युवारूपो यदा जातो व्याधिग्रस्ततनुस्तदा ।
देहार्द्धवातरोगश्च पुत्रस्य मरणं ततः ॥९॥

और जब वह युवावस्था का हुआ तो उसका शरीर व्याधि

से पीड़ित हो गया तथा आधे शरीर में वात रोग (लकवा) होगया और पुत्र भी मर गया ॥९॥

स्वर्णकारस्य द्रव्यं वै गृहीतं पूर्वजन्मनि
न दत्तं वै ऋणं देवि ! पुत्रस्य मरणं ततः ॥१०॥

हेदेवि ! उसने पूर्वजन्ममें जो स्वर्णकार [सोनार] का द्रव्य (ऋण) लेकर नहीं दिया था, उस दोष के कारण उसके सन्तान की मृत्यु हो गयी ॥ १० ॥

भार्याद्वयसमायुक्त एका प्रीतिमती भवेत् ।
पूर्वजन्मनि यत्कर्म पुण्यं पापं शरीरतः ॥११॥

उसे दो स्त्रियाँ थीं किन्तु उनमें एकही प्रेम वाली थी तथा पूर्वजन्ममें जोकर्म [पापवा पुण्य] मनुष्य शरीर से होता है ॥११॥

मृत्युलोके मनुष्येण भुज्यते नाऽत्र संशयः ।
अथाऽतः संप्रवक्ष्यामि पापनिग्रहहेतवे ॥१२॥

उसीकर्मका फल मृत्युलोक में मनुष्य को अवश्य भोगना पड़ता है—अब उसके पाप की निवृत्ति के लिये प्रायश्चित्त को कहता हूँ ॥ १२ ॥

गायत्रीलक्षजाप्येन हरिवंशश्रुतेन च ।
रथाऽश्व-वस्त्रदानेन ग्रामदानेन वै तथा ॥१३॥

गायत्री मंत्रका एक लाख और हरिवंशका श्रवण, सवारी, घोड़ा तथा वस्त्र, भूमि (ग्राम) आदि का दान करने से ॥१३॥

तिलधेनुप्रदानेन सर्वपापक्षयो भवेत् ।
स्वर्णमुद्रासहस्रस्य प्रतिमां कारयेत् बुधः ॥१४॥

तिल तथा गायका दान करनेसे समस्त पाप नष्टहो जातेहैं । और एक हजार स्वर्ण मुद्रा (असर्फी) कीप्रतिमा बनवाकर ॥१४॥

पूर्वोक्तेन विधानेन पूजयित्वा प्रदापयेत् ।
पार्थिवं पूजयच्छम्भुं तथा गोमयनिर्मितम् ॥१५॥

यथा कथित विधानसे विधिवत् प्रतिमा का पूजनकरके दान देवे और मिट्टी या गोबरका पार्थिव निर्मित कर पूजन करे ॥१५॥

लक्षत्रयं प्रमाणं च पञ्चगव्येन पूजयेत् ।
पञ्चामृतेन भो देवि ! गोदुग्धेनैव पूजयेत् ॥१६॥

हे देवि ! तीन लाख पार्थिव (शिवलिंग) का पञ्च गव्य से और पञ्चामृत तथा दूध से भी पूजन करे ॥ १६ ॥

तथा च विविधैर्मन्त्रैः षडङ्गैर्वेदसम्भवैः ।
मुच्यतेऽर्द्धाङ्गरोगेण नाऽत्रकार्या विचारणा ॥१७॥

और वेद कथित षडङ्ग मन्त्रों से उनका पूजन करनेसे अर्धाङ्ग (पूर्व कथित) रोग नष्ट हो जायेगा इस में संशय नहीं ॥१७॥

बन्ध्यात्वं प्रशमं याति लभेत्पुत्रं न संशयः ।
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरजीविनमुत्तमम् ॥१८॥

और बन्ध्यापन दोष दूरहोकर निःसंदेह पुत्र सुख प्राप्त होता है और मृतवत्सा अर्थात् जिनकी सन्तान नहीं जीती वह भी चिरंजीवी उत्तम सन्तान सुख प्राप्त करेगा ॥ १८ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे
रौद्रनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं
नाम सप्तविंशोऽध्यायः ॥ २७ ॥

सत्ताईसवाँ अध्याय समाप्त ॥ २७ ॥

अथाष्टाविंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

ये नराश्च परद्रव्यं हरन्ति सततं प्रिये ! ।
ते नरादुःखिता यान्ति रोगेण च प्रपीडिताः ॥१॥

शिवजी ने कहा—हे प्रिये ! जो मनुष्य पराये धनका हरण करते हैं, वे सर्वदा रोग करके दुःखित और पीड़ित रहते हैं ॥१॥

ऋणं यस्य गृहीतं वै तदृणं न ददाति च ।
ऋणसम्बन्धतो देवि ! पुत्रो भवति दारुणः ॥२॥

हे देवि ! जिसका ऋण ले और फिर उसे न दे तो उस ऋण सम्बन्ध से उसे दारुण [दुःखदेनेवाला] पुत्र उत्पन्न होता है ॥२॥

गृहीतमात्रं वै भग्नं धातुभग्नस्तथा नरः ।
कन्याघातात्तु पूर्वं हि फलं भवति तादृशम् ॥३॥

मनुष्य का मिला हुआ सब धन नष्ट हो जाय और धातु क्षीणता रोग हो तो समझना चाहिये कि पूर्व जन्म में कन्या घात दोष से यह फल मिला है ॥ ३ ॥

अवन्तीपुरतो देवि ! ख्यातं चैव सुशोभनम् ।
क्रोशमात्रं ततो देवि ! चोत्तरे नगरे तथा ॥४॥
वसन्तपुरित्याख्याते वसन्ति बहवो जनाः ।
नाम्ना तन्मध्य आभीरो नन्दनो वसति प्रिये ! ॥५॥

हे देवि ! अवन्तिका (उज्जैन) पुरी से उत्तर दिशामें एक कोश की दूरी पर प्रसिद्ध और उत्तम एक वसन्तपुर नामक ग्राम था वहाँ पर बहुत लोग रहते थे जिस में कि एक नन्दन नामका अहीर भी रहता था ॥ ४-५ ॥

तस्य भार्या तु विख्याता नाम्ना वै सुन्दरी प्रिये ! ।
सर्वथा च महादेवि ! कृपणः सह भार्यया ॥ ६ ॥

और उसकी स्त्री सुन्दरी नाम करके प्रसिद्ध थी, हे प्रिये ! वे दोनों बड़े ही कृपण थे ॥ ६ ॥

मित्रं तस्य महादेवि ! ब्राह्मणो वेदपारगः ।
स तिष्ठति पुरीमध्ये धनं तस्य स्थितं बहु ॥ ७ ॥

हे महादेवि ! उसका मित्र वेद को जानने वाला ब्राह्मण जो कि उज्जैन का रहने वाला और धन से सम्पन्न था ॥ ७ ॥

प्रत्यहं च परान्नेन भोजनं कुरुते स तु ।

यदा वृद्धत्वमायातः पुरीं चैव तदाऽत्यजत् ॥ ८ ॥
आगतो मित्रपार्श्वे वै वसन्ते वै पुरे शुभे ।
आभीरेण गृहे वासं मित्रत्वाद्दत्तवान् स्वयम् ॥ ९ ॥

वह हमेशा पराये अन्नको खानेवाला, जब वृद्ध हुआ तो उस नगर को छोड़कर वसन्तपुर में अपने मित्र के यहाँ चला आया और उस अहीरने एक मित्रके नाते उसे अपने गृहमें ही आश्रय दिया ॥८-९॥

बहुकालमवात्सीत्स तत्प्रीत्या सुरसुन्दरि ! ।
आभीरस्तु ततो देवि ! स्वर्णं दृष्ट्वा प्रहर्षितः ॥१०॥

हे देवि ! वह ब्राह्मण उसके प्रेमसे बहुत समय तक निवास किया, तथा अहीरभी उसका स्वर्ण देखकर बहुत हर्षित हुआ ॥१०॥

तस्य स्वर्णं समाहृत्य स्वगृहे स्थापितं तदा ।
ब्राह्मणेन महत्कष्टं कृतं द्रव्यस्य शोकतः ॥ ११ ॥
महाशोकसमायुक्तः काश्यां चैव समागतः ।
शरीरं चापि तत्याज स्वर्णशोकेन वै द्विजः ॥१२॥

और उसके स्वर्ण [सोने] का अपहरण कर अपने घर में छिपा दिया ब्राह्मण उस द्रव्य के शोक से अत्यन्त दुःखित होकर वहाँ से प्रस्थान कर काशी चला आया तथा सोने के शोक से सन्तप्त होकर ब्राह्मण ने शरीर का परित्याग कर दिया ॥११-१२॥

शूद्रेणैव महादेवि ! तस्य स्वर्णं प्रभुज्यते ।
ततो बहुगते काले मरणं तस्य चाऽभवत् ॥१३॥

हे महादेवि ! शूद्र ने बहुत काल तक उसके सोनेका उपभोग किया पुनः उसकी मृत्यु हो गयी ॥ १३ ॥

नरके पातयामासुर्यमदूता यमाज्ञया ।
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥१४॥

मरनेके बाद यमराज की आज्ञासे यमदूतोंने उसे नरकमें डाल दिया और साठ हजार वर्ष तक नरक यातनायें भोग कर ॥ १४ ॥

ततस्तेन तु प्रेतत्वं भुक्तमब्दसहस्त्रकम् ।
उलूकत्वं वरारोहे ! कौशिक्या निकटे ततः ॥१५॥

फिर वह हजार वर्ष पर्यन्त प्रेत योनि में भोग किया उसके बाद फिर कौशिकी नदी के किनारे उलूक (उल्लू) हुआ ॥१५॥

सरय्वा उत्तरे कूले मानुषत्वं ततोऽभवत् ।
मध्यदेशे च भो देवि ! पत्न्या सह वरानने! ॥१६॥

धन-धान्यसमायुक्तो राजसेवासु तत्परः ।
जातः पुनर्वसोर्देवि ! प्रथमे चरणे खलु ॥१७॥

हे देवि ! उस योनि के पश्चात् सरयू नदी के उत्तर तट पर मनुष्य शरीर पाया तथा मध्यदेश में अपनी स्त्री के साथ द्रव्यादि से सम्पन्न राज्य कार्य में नियुक्त होकर उसमें संलग्न रहा वह पुनर्वसु नक्षत्र के प्रथम चरण में उत्पन्न था ॥ १६-१७ ॥

पूर्वजन्मनि भो देवि ! यतो गोशतमदात्सः ।
भूपतित्वं ततो देवि ! धनाढ्यत्वं भवेत् खलु ॥१८॥

वह जन्मान्तर में सौ गौवों का दान किया था अतः बहुत सम्पत्ति से युक्त भूपति (राजा) हुआ ॥ १८ ॥

ब्राह्मणस्य हृतं स्वर्णं स्वयं चौर्येण यत्पुरा ।
तेन पापेन भो देवि ! पुत्रस्य मरणं खलु ॥१९॥

हे देवि ! जो कि पूर्व जन्ममें ब्राह्मण का सुवर्ण चुराया था उस पाप से उसका पुत्र मर गया ॥ १९ ॥

तस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि तत्सर्वं शृणु पार्वति! ।
गृहवित्ताष्टमैर्भागैः पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥२०॥

अब उसकी शान्ति कहता हूँ वह सब सुनो, घर के धन का आठवाँ भाग द्रव्य धर्म कार्य में व्यय करे ॥ २० ॥

गायत्रीजातवेदाभ्यां याः फलेति तथा प्रिये ! ।
लक्षत्रयं जपं कुर्याद्दशांशहवनं ततः ॥२१॥

और गायत्री मन्त्रका या 'जातवेद से' अथवा 'याः फला' इसमें से किसी का तीन लक्ष जप और उसके दशांश हवन करावे ॥२१॥

तर्पणं मार्जनं चैव दशांशः क्रमतस्तथा ।
हरिवंशस्य श्रवणं चण्डिकार्चनमेव च ॥२२॥

दशांश क्रमसे तर्पण और मार्जन कराकर हरिवंश कथा का श्रवण तथा दुर्गादेवी का पूजन करे ॥ २२ ॥

शिवार्चनमशेषेण वापिकां चैव कारयेत् ।
कूपं चैव तडागं च पथि मध्ये च कारयेत् ॥२३॥

और शेष कार्य में शिवार्चन तथा मार्ग में बावली कुआँ और तालाब [पोखरा] आदि बनवावे ॥ २३ ॥

कूष्माण्डं नारिकेलं च पञ्चरत्नसमन्वितम् ।
गंगामध्ये प्रदातव्यं शनौ चाऽश्वत्थपूजनम् ॥२४॥

सफेद कोंहड़ा या नारियल में पञ्चरत्न भरकर गंगा के मध्य में दान करे और शनिवार को पीपल वृक्ष का पूजन करे ॥२४ ॥

पलसप्तदशेनैव प्रतिमां कारयेद् बुधः ।
चतुष्कोणगतां वेदीं रौप्यैर्दशपलान्वितैः ॥२५॥

सत्रह पल [८५तोले] प्रमाण की सोनेकी प्रतिमा बनवावेऔर दशपल प्रमाण चाँदी की चौकोर वेदी निर्माण कराकर ॥ २५ ॥

तन्मध्ये प्रतिमां स्थाप्य सपुत्रस्य द्विजस्य तु ।
पूजां कुर्यात्त वै भक्त्यामन्त्रेणानेन वै शिवे ! ॥२६॥

उस वेदीके ऊपर पुत्र सहित बनायी हुई उस ब्राह्मण की प्रतिमा को स्थापित करके इस मन्त्र द्वारा उसकी श्रद्धा से पूजा करे ॥२६॥

वासुदेवादिदशभिर्मन्त्रैरेभिः पृथक् पृथक् ।
पूजयेत्प्रतिमां तां तु ततो दद्याद् द्विजन्मने ॥२७॥

वासुदेव आदि, क्रम से इन दश मन्त्रों से पृथक्-पृथक् उस प्रतिमा का पूजन कर ब्राह्मण को दान दे देवे ॥ २७ ॥

पूजयेद्देवदेवेशं सर्वपापप्रणुत्तये ।
ततः सम्प्रार्थ्य देवेशं शङ्खचक्रगदाधरम् ॥२८॥

सभी पापोंसे उद्धार होनेकेलियेदेवाधिदेव शंख, चक्र, गदा को धारणकरनेवालेपुरुषोत्तमविष्णुभगवान्‌कापूजनकरप्रार्थनाकरे।२८।

पीताम्बरं चतुर्बाहुं पुण्डरीकनिभेक्षणम् ।
वासुदेवं जगन्नाथं धराधर गुरो ! हरे ! ॥२६॥

हे पीताम्बर को धारण करने वाले चतुर्भुज स्वरूप, कमल के सदृश नेत्र वाले वासुदेव, जगत् के स्वामी पृथ्वी को धारण करने वाले हे गुरो, हे हरे ॥ २६ ॥

मम पूर्वकृतं पापं क्षम्यतां परमेश्वर ! ।
ततो गां कपिलां दद्यात्स्वर्णशृङ्गीं सनूपुराम् ॥३०॥

हेपरमेश्वर ! आप जन्मान्तरकृत मेरेपापोंको क्षमाकरेंइसप्रकार प्रार्थनाकर सोनेसे मढ़ीहुई सींगवाली कपिला गोकादान करे ॥३०॥

विधिवद्वेदविदुषे ब्राह्मणाय तपस्विने ।
दशवर्णास्ततो दद्यात् ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः ॥३१॥

और वेदज्ञ ऐसे तपस्वी ब्राह्मण को दशवर्ण वाली गौवों का दान देवे इसके बाद ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ ३१ ॥

भूमिदानं ततो दद्याद्विप्राय विदुषे ततः ।
एवं कृते न सन्देहः पूर्वपापं विनश्यति ॥३२॥

इसके बाद विद्वान् ब्राह्मण को भूमि दान करे, इस प्रकार के विधानके करनेसे निःसन्देहप्राचीन पापोंका नाश हो जाता ॥३२॥

सन्तानो जायते देवि ! रोगाणां संक्षयस्ततः ।
कन्यका नैव जायन्ते वन्ध्यात्वं च प्रणश्यति ॥३३॥

हे देवि ! तब सन्तान की प्राप्ति और रोगों का नाश हो जाता है तथा कन्यायें नहीं जन्मतीं एवं वन्ध्यादोषभीछूट जाता है ॥३३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे पुनर्वसुनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्त-कथनं नामाष्टाविंशोऽध्यायः ॥२८॥

अट्ठाईसवाँ अध्याय समाप्त ॥ २८ ॥

अथ एकोनत्रिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि यत्कृतं पूर्वजन्मनि ।
अवन्तीपुरतो देवि ! पूर्वे क्रोशप्रमाणतः ॥१॥

शिवजी ने कहा—हे देवि ! अब वह कहता हूँ जो कि पूर्वजन्म में किया है, अवन्तिका [उज्जैन] पुरी से पूर्व की ओर एककोश प्रमाण में विस्तृत ॥ १ ॥

लक्ष्मणस्य पुरं ख्यातं तत्रैव बहवो जनाः ।
वसन्ति वैष्णवाः सर्वे वेदकर्मविचक्षणाः ॥२॥

प्रसिद्ध एक लक्ष्मणपुर है वहाँ पर वेद कर्मों में पारङ्गत अर्थात् वैदिक कर्म को भली भाँति जानने वाले वैष्णव लोग निवास करते थे ॥ २ ॥

स्वर्णकारो वसत्येकः स्वकर्मनिरतः सदा ।
दामोदर इति ख्यातस्तस्य पत्नी प्रभावती ॥३॥

और वहाँ पर एक स्वर्णकार [सोनार] सर्वदा अपने कर्ममें निरत दामोदर नामका तथा उसकी स्त्री प्रभावतीनामकी थी ॥३॥

विष्णुभक्तिरतः शान्तः सज्जनानां च सेवकः ।
पत्नी पतिव्रता तस्य पतिशुश्रूषणे रता ॥४॥

वहपरम विष्णुभक्त शान्त चित्त और साधुओं की सेवा करने वाला था और उसकी स्त्री आज्ञाकारिणी, पतिव्रता थी ॥ ४ ॥

तस्य पुत्रद्वयं जातं गुणज्ञं पितृसेवकम् ।
एका च बल्लवी तत्र निवासाय तदाऽऽगता ॥५॥

उस सोनारकेदोलड़के गुणसे युक्त तथा पिताके सेवक उत्पन्न हुएऔरवहाँपरएकवल्लवी[अहीरजातीय]स्त्रीवसनेकेध्येयसेआयी।५।

पुत्रद्वयसमायुक्ता बहुगोधनसंयुता ।
एको द्यूतरतः पुत्रो द्वितीयश्चौरसम्मतः ॥६॥

उसके पास दो पुत्र और बहुत सी गौवें थीं, परन्तु उसका एक लड़का जुआड़ी तथा दूसरा चोरी में प्रेम रखनेवाला था ॥ ६ ॥

उपार्जितं महिषीस्वं गोधनं बहुधा तथा ।
चौर-द्यूतोपचाराभ्यां धनाढ्यत्वमजायत ॥७॥

उसने चोरी करके बहुत सी महिषी [भैंस] गौवें एकत्रित किया और चोरी तथा जुआके व्यापार से वह धनी हो गया ॥७॥

दुग्धादिकं महादेवि ! भुज्यते प्रत्यहं तथा ।
स्वर्णकारो महाद्रव्यामाभीरीं सर्वसंयुताम् ॥ ८ ॥

हे महादेवि ! नित्य दुग्धादिक पदार्थों को भोगते हुए सर्व वस्तुओं से युक्त उस धनिक अहीरिन को सोनार ॥ ८ ॥

आनीतवान् स्वगेहे तां तदा च वरवर्णिनीम् ।
ततो बहुगते काले महामारीज्वरादिना ॥ ९ ॥

अपने गृह में ले आया। उसके बाद बहुत समय बीत जाने पर महामारी [प्लेग] तथा ज्वर आदि व्याधियों करके ॥ ९ ॥

पुत्राभ्यां सममद्राक्षीद्वल्लव्या मरणं तदा ।
द्रव्यं तस्यास्तदा देवि ! स्वर्णकारो गृहीतवान् ॥१०॥

उस आभीरा [अहीरिन] की पुत्रों सहित मृत्यु हो गयी, तब हे देवि, सोनार ने उसका सब धन ले लिया ॥ १० ॥

भुक्तं द्रव्यं च तत्सर्वं यावत्तिष्ठति भूतले ।
भार्यया सह पुत्राभ्यां महिषीगोधनादिकम् ॥११॥

जितना उसका धन और भैंस गाय आदि थीं उनका आजीवन सपरिवार उपभोग किया ॥ ११ ॥

ततो वयोत्तरे देवि ! मृत्युस्तस्याभवत्किल ।
पत्नी तस्य मृता साध्वी ताभ्यां स्वर्गमभूत्पुरा॥१२॥

हे देवि ! आयु व्यतीत हो जाने पर मरण अवश्यम्भावी है अतः उसकी मृत्यु हो गयी तथा उसकी पति-परायण स्त्री भी मर गयी और दोनों को स्वर्गवास मिला ॥ १२ ॥

पञ्चवर्षसहस्राणि स्वर्गे सुखमजीजनत् ।
पुनः पुण्यक्षये जाते मानुषत्वं भवेद्भुवि ॥१३॥

उस स्वर्गलोक में पाँच हजार वर्ष सुख भोग कर बाद को जब पुण्य क्षय हो गया तब मर्त्य लोक में मनुष्य शरीर पाया॥१३॥

अयोध्यानगराद्देवि ! सरय्वा उत्तरे तटे ।
क्रोशद्वये विशालाक्षि ! पुरे देहलसंज्ञके ॥१४॥

हे देवि ! अयोध्यापुरी से दो कोश की दूरी पर सरयू के उत्तरीय तट पर देहल नामक ग्राम में ॥ १४ ॥

स्वकर्मनिरतः प्राज्ञः स्वविद्यायां विचक्षणः ।
स्वदेशे चैव विख्यातः शत्रूणां च विमर्दनः ॥१५॥

निज कर्म में तत्पर बुद्धिमान् अपनी विद्या में प्रवीण स्वदेश में विख्यात तथा शत्रुओं के मान को मिटाने वाला हुआ॥१५॥

पुनर्विवाहिता पत्नी साध्वी या पूर्वजन्मनि ।
तस्य नेत्रे विशालाक्षि! पूर्वजन्मफलाद्गते ॥१६॥

हे विशालाक्षि ! और जन्मान्तर में जो इसकी पतिव्रता स्त्री थी वही फिर इसके साथ विवाही गयी तथा पूर्व जन्म के संस्कार से इसके नेत्र नष्ट हो गये अर्थात् अन्धा हो गया॥१६॥

बाल्ये चैव तु पुत्रस्य नेत्रं वामं प्रणाशितम् ।
तेन पापेन भो देवि गतं नेत्रद्वयं शिवे ! ॥१७॥

हे देवि ! उसने लड़कपन में ही पुत्र का बायाँ नेत्र नष्ट कर दिया था हे शिवे ! इसलिये उसके दोनों नेत्र नष्ट हो गये ॥१७॥

भक्षितं तस्य तत्स्वर्णं न दत्तं ब्राह्मणाय वै ।
तेन पापेन भो देवि ! मृतः पुत्रो वरःशुभे ! ॥१८॥

और पूर्वजन्म में गृहाश्रित अहीर का सोना उपभोग किया था उसमें से ब्राह्मण को भी नहीं दिया उस पाप से उसके उत्तम पुत्र की मृत्यु हो गई ॥ १८ ॥

मित्रसम्बन्धतः पापात् पुत्रपौत्रद्वयं मृतम् ।
पूर्वजन्मकृतं देवि शुभाशुभफलं तथा ॥१९॥
भुज्यते प्राणिभिः सर्वैस्तथा देवि विशेषतः ।
म्लेच्छसेवारतो नित्यं म्लेच्छस्यव च सङ्गतिः ॥२०॥

हे देवि ! मित्र सम्बन्धी पाप द्वारा पुत्र तथा पौत्र [नाती] इन दोनों की मृत्यु हो गयी तथा जन्मान्तर कृत शुभ वा अशुभ फल समस्त प्राणियों को इस जन्म में भोगने पड़ते हैं, और विशेष करके वह म्लेच्छ की सेवा और संगति में रहता था ॥ १९-२० ॥

कुमार्गतो भवेद्देवि ! मर्त्यलोके जनिर्यदा ।
शान्तिं शृणुमहादेवि ! पूर्वपापप्रणाशिनीम् ॥२१॥

हे देवि ! इसलिये जब मर्त्य लोक में जन्म लिया तब भी कुमार्ग में ही प्रवृत्ति हुई अब उस पूर्व कृत पाप को नाश करने वाली शान्ति को कहता हूँ—सुनो ॥ २१ ॥

गृहवित्ताष्टमैर्भागैः पुण्यकार्यं च कारयेत् ! ।
गायत्रीजातवेदाभ्यां याः फलास्त्र्यम्बकेण वा ॥२२॥
विष्णोरराट्मन्त्रेण जपं वै कारयेत् तथा ।
पञ्चलक्षप्रमाणेन यथा पापं प्रणश्यति ॥२३॥

गृह में जो धन हो उसका अष्टमांश धर्मार्थ में लगावे

और गायत्री मंत्र अथवा "जातवेदसे" "या: फला: "त्र्यम्बकं" यजामहे" "विष्णोरराट्" इन मंत्रों का जप पाँचलक्ष करावे तो समस्त पा नष्ट हों ॥ २२-२३ ॥

होमं वै कारयेद्देवि! दशांशं विधिपूर्वकम् ।
ततो वै तर्पणं कुर्यान्मार्जनं तु विशेषतः ॥२४॥

और उसके दशांश अर्थात् पचास हजार आहुति (हवन) विधिवत् कराकर फिर तर्पण और मार्जन करावे ॥ २४ ॥

प्रतिमां कारयेत्तद्वद्विष्णोश्चैव सदाशिवे ! ॥
अष्टादशपलस्यैव सुवर्णस्य हरिं विभुम् ॥२५॥

हे शिवे ! और अठारह पल [९० तोले] सोने की, विभव को देनेवाले विष्णु भगवान् की प्रतिमा बनवावे ॥ २५ ॥

तद्वदेव शिवस्यैव रजतस्य परं विभुम् ।
प्रतिमां पूजयेद्देवि ! मन्त्रेणाऽनेन सुव्रते ! ॥२६॥

इसी प्रकार अठारह पल चाँदी की शङ्कर जी की प्रतिमा बनवावे तथा आगे लिखे मंत्रों द्वारा इस प्रकार पूजन करे ॥२६॥

ॐ गरुडध्वज ! देवेश ! चराचरगुरो ! हरे ! ।
वासुदेव ! जगन्नाथ ! पूर्वपापं विनाशय ॥२७॥
ॐ नन्दिकेश्वर ! भूतेश ! देवदेव सुरेश्वर ! ।
मम पूजां गृहाण त्वं पूर्वपापं प्रणाशय ॥२८॥

हे गरुडध्वज, देवेश, चराचरों के स्वामी, हे हरे ! वासुदेव, हे जगन्नाथ ! मेरे पूर्व पापों का नाश करें । हे नन्दिकेश्वर, भूतेश, देव श्रेष्ठ, सुरेश्वर ! मेरी पूजा ग्रहण कर पूर्व पापों का शमन करे, इसके बाद इन्द्रादि दशदिक्पालों का पूजन करे ॥ २७-२८॥

ततः इन्द्रादि-दशदिक्पालान् पूजयेत् ।
ॐ इन्द्राय नमः १ ॥ ॐ अग्नये नमः २ ॥
ॐ यमाय नमः ३ ॥ ॐ नैर्ऋतये नमः ४ ॥

ॐ वरुणाय नमः ५ ॥ ॐ वायवे नमः ६ ॥
ॐ कुबेराय नमः ७॥ ॐईशानाय नमः ७॥
ॐ ब्रह्मणे नमः ९ ॥ ॐअनन्ताय नमः १०॥
गन्ध-पुष्पा-ऽक्षतैः सर्वान् पूजयेच्च पृथक् पृथक्।
ततो गां कपिलां देवि ! स्वर्णशृङ्गीं प्रपूजयेत् ॥२९॥

गन्ध, पुष्प, अक्षत सहित पृथक-पृथक् नाम उच्चारण कर सबका पूजन करे और सोने से मढ़ी हुई सींगवाली कपिला गाय का पूजन करे ॥ २९ ॥

मन्त्रेणानेन भो देवि ! सर्वपापहरां शुभाम् ।
ॐनमोभगवत्यै कामेश्वर्यै मम पापं व्यपोहतु स्वाहा ॥
पुरा मम कृतं पापं कामधेनो ! सुरेश्वरि !
कपिले ! त्वं जगन्मातर्मम कार्यं प्रसाधय ॥३०॥

हे देवि ! समस्त पापों को हरण करने वाली ऐसी कपिला गौ का पूजन "ॐ नमो भगवत्यै कामेश्वर्यै मम पापं व्यपोहतु स्वाहा" इस मंत्र से करे और कहे कि हे कामधेनो ! हे सुरेश्वरि हे कपिले, तुम जगत्-माता हो जन्मान्तर के किये हुए मेरे पापों का उन्मूलन कर मेरे कार्य को सिद्ध करो ॥ ३० ॥

ततश्च दद्याद्गां देवि ! ब्राह्मणाय शिवात्मने ।
दशवर्णास्ततो दद्यात् पात्राणि विविधानि च ॥३१॥
वृषभं च ततो देवि ! नीलवर्णं सुसंस्कृतम् ॥
ब्राह्मणाय प्रदद्यात्तु सर्वपापस्य संक्षयः ॥३२॥

हे देवि ! इसके बाद उस गौ को शिवात्मने अर्थात् भस्म धारण करने वाले परम शिवभक्त ब्राह्मण को दे देवे और दशवर्णा गौओं का अनेक प्रकार के पात्रों को दान दे । इसके बाद सुसज्जित किया हुआ नील वर्ण का बैल ब्राह्मण को दे तब समस्त पापों का नाश होवे ॥ ३१-३२ ॥

पूजयेद्विविधैरन्नैः पायसैश्च समोदकैः ।
ब्राह्मणाञ्छत संख्यकान् रुद्रविष्णुस्वरूपिणः ॥३३॥

और रुद्र विष्णुस्वरूप ऐसे सौ ब्राह्मणों को अनेक प्रकारके मिष्ठान्न खीर आदि पदार्थों का भोजन करावे ॥ ३३ ॥

प्रतिमां दापयेत् पश्चाद् ब्राह्मणेभ्यश्च दक्षिणाम् ।
बन्धुभिः सह भुञ्जीत ततो विप्रविसर्जनम् ॥३४॥

तत्पश्चात् उस प्रतिमा को उत्तम ब्राह्मण को दे देवे, फिर अपने बान्धवों के सहित भोजन कर दक्षिणा के सहित उन ब्राह्मणों का विसर्जन करे ॥ ३४ ॥

यथाशक्त्या प्रदद्याद्वै ब्राह्मणेभ्यश्च दक्षिणाम् ।
हरिवंशस्य श्रवणं पार्थिवस्य च पूजनम् ॥३५॥

और यथा शक्ति ब्राह्मणों को दक्षिणा दे तथा हरिवंश कथा का श्रवण करे और पार्थिवार्चन करे ॥ ३५ ॥

भूमिदानं विशेषेण ब्राह्मणाय च दापयेत् ।
एवं कृते वरारोहे ! पूर्वजन्मसमुद्भवम् ॥३६॥

हे वरारोहे ! ब्राह्मणों को भूमि दान देने का विशेष माहात्म्य है, ऐसा करने से पूर्व जन्म का किया हुआ ॥ ३६ ॥

पापं प्रशमयेच्छीघ्रं मम वाक्यं च नाऽन्यथा ।
रोगादिविविधं दुःखं तत्सर्वं विलयं व्रजेत् ॥३७॥

पाप शीघ्र ही नष्ट होता है, यह कहा हुआ मेरा वचन कभी अन्यथा न होगा और रोगादि समस्त दुःख भी तत्काल नष्ट हो जाते हैं ॥ ३७ ॥

वंशवृद्धिर्भवेद्देवि ! नाऽत्र कार्या विचारणा ॥३८॥

और वंश की वृद्धि होने लगती है इसमें बिना विचारे ही करना ॥ ३८ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे पुनर्वसुनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥ २६ ॥

उन्तीसवां अध्याय समाप्त ॥ २६ ॥

अथ त्रिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

पुर्यामवन्तिकायां वै नापितो वसति प्रिये ! ।
स्वकर्मणः परिभ्रष्टः कृषिकर्मरतः सदा ॥ १ ॥

शिवजी ने कहा—कि हे देवि ! अवन्तिका [उज्जैनी] नगरी में एक नाई निवास करता था और वह अपने कर्म से च्युत होकर सदा कृषि कर्म में निरत रहता था ॥ १ ॥

पत्नी तस्य महादेवि ! परपुंसि रता सदा ।
कर्कशा नाम विख्याता दर्दुरा नाम नामतः ॥ २ ॥

और उसकी स्त्री पर पुरुष से प्रेम करनेवाली कर्कशा दर्दुरा नाम की थी ॥ २ ॥

एकस्मिन् दिवसे देवि ! वैश्यो धनसमन्वितः ।
स्वर्णकोटिं च संगृह्य निकटे तस्य चागतः ॥ ३ ॥

हे देवि ! एक दिन कोई एक धनिक वैश्य [बनियां] स्वर्णकोटि अर्थात् करोड़ों रुपयों का स्वर्ण लिये उसके सन्निकट आया ॥३॥

नापितेन ततो देवि ! वैश्यो धनसमन्वितः ।
अर्द्धरात्रे गते काले ततः खड्गेन वै हतः ॥ ४ ॥

हे देवि ! तत्पश्चात् उस नाई ने अर्ध रात्रि को सोते समय उस बनिये का शिर तलवार से काट डाला ॥ ४ ॥

द्रव्यं सर्वं गृहीत्वा तु तां पुरीं च ततस्त्यजन् ।
सर्वं स्वर्णं व्ययीकृत्य न दानं च कृतं क्वचित् ॥ ५ ॥

और वह सम्पत्ति लेकर नगर को त्याग कर चला गया और सब सुवर्ण खर्च हो गया किन्तु उसमेंसे दानादि कुछ नहीं किया॥५॥

एकदा समये देवि ! नापितेन सह स्त्रिया ।
प्रयागे मकरे मासि मासमेकं निरन्तरम् ॥ ६ ॥

हे देवि ! एक समयमें उस नाईने अपनी स्त्रीके साथ प्रयागमें माघके महीनेमें और मकर के सूर्य में निरन्तर एक महीना ॥ ६ ॥

प्रत्यहं क्रियते स्नानं प्रातःकाले सदाशिवे ! ।
गोदानं च कृतं तेन वृषभं स्वर्णभूषितम् ॥ ७ ॥

प्रतिदिन सूर्योदय के पहले स्नान किया और वह गोदान तथा सोने से सुसज्जित एक बैल का भी दान किया ॥ ७ ॥

ततो वै मरणं तस्य नापितस्य सुरेश्वरि ! ।
निर्जले तस्य भो देवि ! चोपले पथिमध्यगे ॥ ८ ॥

उसके बाद उस नाई की मृत्यु कहीं रास्ते में और जलरहित स्थान में पहाड़ के निकट हो गई ॥ ८ ॥

यमदूतैर्महादेवि ! नरके नामकर्दमे ।
क्षिप्तो यमाज्ञया वर्षं सहस्रं षष्टिसम्मितम् ॥ ९ ॥

तब यमदूतों ने यमराज की आज्ञा से कर्दम नाम के नरक में लाकर साठ हजार वर्ष तक रक्खा ॥ ९ ॥

नरकान्निर्गतो देवि! व्याघ्रयोनिस्ततोऽभवत् ।
पुनर्महिषयोनिं च मानुषत्वं ततो गतः ॥१०॥

हे देवि ! नरक से निकल कर क्रमशः व्याघ्र, महिष [भैंस] इन योनियोंमें भोगकर उसके बाद मनुष्य योनिमें जन्म लिया॥१०॥

ऋक्षे पुनर्वसौ देवि ! तृतीयचरणे वरे ।
प्रातः स्नानफलं देवि ! नृपवंशसमुद्भवः ॥११॥

वह पुनर्वसु नक्षत्र के तृतीय चरणमें और पूर्वजन्ममें प्रातःकाल जो प्रयागमें स्नान किया था उसके फलसे राजकुलमें उत्पन्न हुआ।११

मध्यदेशे वरारोहे सरय्वा उत्तरे तटे।
महाधनेन संयुक्तश्चौराणां कर्मकारकः ॥१२॥

हे वरारोहे! वह मध्य देश में सरयू नदी के तीर पर धन से युक्त चोरी करने वाला हुआ ॥ १२ ॥

पत्नी तस्य भवेद् वन्ध्या मृतवत्सा सुतायुता।
कफरोगसमायुक्ता ज्वरेणैव प्रपीडिता ॥१३॥

और उसकी स्त्री वन्ध्याके समान थी क्योंकि सन्तानें होकरमर जाया करती थीं,वह कफरोग युक्त सर्वदा ज्वरसे पीडित रहती थी१३

मित्रस्यैव वधः पूर्वं नापितेन यतः कृतः।
तेन कर्मफलेनैव महारोगसमुद्भवः ॥१४॥

उसने जन्मान्तर में अपने मित्र का वध किया था अतः उस कर्म के प्रभाव से यह कठिन रोग हुआ ॥ १४ ॥

पुत्रोऽपि जायते देवि! तस्य मृत्युर्भवेत्किल।
शान्तिं तस्य प्रवक्ष्यामि शृणु देवि! समासतः ॥१५॥

हे देवि! उसे पुत्र भी हुआ था किन्तु उसकी भी मृत्यु हो गयी, अब उसकी शान्ति संक्षेपतः कहता हूँ सो सुनो ॥ १५ ॥

गायत्रीमूलमन्त्रेण पञ्चलक्षजपो यदा।
तदा पापं क्षयं याति पूर्वजन्मनि यत्कृतम् ॥१६॥

यदि गायत्री मंत्र का पाँच लाख जप करावे तो जो भी पूर्व जन्म में पाप किया है वह सब नष्ट हो जाय ॥ १६ ॥

हरिवंशस्य श्रवणं चण्डीपाठं शिवार्चनम्।
विधिवद्देवि! कर्तव्यं पापं सर्वं विनश्यति ॥१७॥

और हरिवंश का श्रवण, दुर्गापाठ तथा शिवार्चन विधि पूर्वक करे तो सब पाप समूल नष्ट हो जावें ॥ १७ ॥

चतुरस्त्रं ततः कुण्डे होमे चैव तु कारयेत् ।
तिल-धान्यादिभिर्देवि दशांशजपसंख्यया ॥१८॥

इसके बाद चतुरस्त्र [चतुष्कोण] कुण्ड बनाकर उसमें जप के दशांश तिल घी तथा जव आदि से हवन करावे ॥ १८ ॥

वैश्यस्य प्रतिमां देवि ! कारयेद्वै सुवर्णतः ।
पञ्चविंशपलेनैव रचितां च प्रयत्नतः ॥१९॥

हे देवि ! और पचीस पल सुवर्ण द्वारा वैश्यकी बड़े प्रयत्न से रच कर प्रतिमा बनवावे ॥ १९ ॥

ताम्रपात्रे शुभे स्थाप्य पूजयेत् प्रतिमां ततः ।
मन्त्रेणानेन भो देवि ! गन्ध-पुष्पाऽक्षतादिभिः ॥२०

उस मूर्ति को उत्तम ताँबे के पात्र में स्थापित कर गन्ध पुष्पादि से निम्नलिखित मन्त्रों द्वारा पूजन करे ॥ २० ॥

मन्त्रः—ॐ नमस्ते देवदेवेश ! शङ्खचक्रगदाधर ! ।
अज्ञानाद्वा प्रमादाद्वा मया पापं कृतं पुरा ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव ! शरणागतवत्सल ! ॥२१॥
ॐ चक्रधराय नमः, ॐ गोविन्दाय नमः ।
ॐ दामोदराय नमः, ॐ कृष्णाय नमः ।
ॐ हंसाय नमः, ॐ परमहंसाय नमः ।
ॐ अच्युताय नमः, ॐ ॐ हृषीकेशाय नमः ।

हे देवताओं के स्वामी ! शंख, चक्र, गदाको धारण करनेवाले तथा शरण में आये हुए की रक्षा करने वाले मैंने अज्ञान वश या प्रमाद से जन्मान्तर में जो पाप कर्म किया है उसे क्षमा करें ॥२१॥

ॐ चक्रादिनामभिश्चैतैः सर्वदिक्षु प्रपूजयेत् ।
प्रतिमां पूजयित्वा तु तां विप्राय प्रदापयेत् ॥२२॥

"ॐ चक्रधराय नमः" इत्यादि नामों करके आठों दिशाओं में पूजन कर प्रतिमा ब्राह्मण को देवे ॥ २२ ॥

ततो गां कृष्णवर्णां तु ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ।
पञ्चसंख्यामितं देवि ! प्रदद्याद्वै कुटुम्बिने ॥२३॥

और हे देवि ! पाँच कृष्णा गौवों का दान कुटुम्बी ब्राह्मण अर्थात् गृहस्थ ब्राह्मण को देवे ॥ २३ ॥

ब्राह्मणान् भोजयेद्देवि ! यथासंख्यान् वरानने ! !
एवंकृते वरारोहे ! शीघ्रं पुत्रः प्रजायते ॥२४॥

हे वरानने ! फिर यथा संख्या अर्थात् अपनी शक्तिके अनुकूल ब्राह्मण भोजन करावे । इस विधि को करने वाला शीघ्र पुत्र लाभ करता है ॥ २४ ॥

वन्ध्यात्वं नाशयत्याशु सर्वरोगो विनश्यति ॥२५॥

औरशीघ्रहीवन्ध्या दापकेसाथसबरोग भीनष्टहोजातेहैं ॥२५॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे
पुनर्वसुनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं
नाम त्रिंशोऽध्यायः ॥३०॥

तीसवाँ अध्याय समाप्त ॥ ३० ॥

अथ एकत्रिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अवन्त्याः पश्चिमे देवि ! क्रोशमात्रोपरि प्रिये !
कैवर्त्तको वसत्येको नन्दने च पुरे शुभे ॥१॥

शिवजीने कहा—हे देवि !अवन्ती नाम की नगरी सेपश्चिमएक कोशप्रमाणपर नन्दन नामकेग्राममें एककैवर्त्त[मलाह] रहताथा॥१॥

मनोहर इति ख्यातो धनाढ्यो जायते महान् ।
मत्ता यस्याऽभवत्पत्नी पतिशुश्रूषणे रता ॥२॥

वह मनोहर नाम का और धनिक था, उसकी मत्ता नाम की पतिसेवापरायण स्त्री थी ॥ २ ॥

मत्स्यमांसस्य भो देवि! विक्रयं चाऽकरोत् खलु ।
सञ्चितं बहु रत्नञ्च न दानं बहुधाकरोत् ॥३॥

हे देवि! वह मछलियों के मांस को बेचकर उससे बहुत धन एकत्रित कर लिया था परन्तु दान कुछ भी नहीं किया ॥ ३ ॥

एकदा चन्द्रग्रहणे शतस्वर्णयुतं वृषम् ।
अदाद्विप्राय विदुषे भार्यया सह भक्तितः ॥४॥

एकसमय चन्द्रग्रहणमें शतस्वर्ण[सौ असर्फियों] के साथ एक बैल विद्वान् ब्राह्मण को उसने स्त्री के साथ श्रद्धासे दान दिया ॥४॥

ततो मृत्युवशं यातो भार्या तस्य मृता पुरा ।
यमदूतैर्महाघोरे नरके पातितः पुरा ॥५॥

उसकी स्त्री उसके मरनेके पहले ही मर चुकी थी बाद को यम दूतों ने उसे कठिन नरक में लेजाकर डाल दिया ॥ ५ ॥

यमाज्ञया महादेवि ! षष्टिवर्षसहस्रकम् ।
नरकान्निःसृतो देवि ! शृगालो गहने वने ॥६॥

हे देवि! वहयमराजके कथनानुसारसाठहजारवर्षपर्यन्तनरकमें वास कियाऔर उसके बादगहनवनमें शृगाल की योनि पाया ॥६॥

पुनः काको वरारोहे ! ततो भवति मानुषः ।
गुणज्ञो देवताभक्तो वेश्यासुरततत्परः ॥७॥

उसके पश्चात् कौएकी योनि में आया, तब फिर मनुष्यशरीर धारण किया और गुणज्ञ देव-भक्त तथा वेश्यागामी हो गया ॥७॥

रागी सूक्ष्मतनुर्वक्ता ज्ञानवान् सुतवर्जितः ।
तस्य भार्या भवेत्स्थूला कुरूपा कर्कशा तथा ॥ ८ ॥

वह प्रेमी तथा कृश शरीर वाला वक्ता और ज्ञानी तथा

पुत्र हीन हुआ, उसे स्थूल [मोटे] शरीर की कुरूपा तथा क्रूर-स्वभाव वाली स्त्री मिली ॥ ८ ॥

पूर्वजन्मप्रसङ्गाच्च मत्स्यमांसोपभोगिना ।
मासि पुष्पं भवेद्देवि ! गर्भस्य पतनं तथा ॥ ९ ॥

हे देवि ! वह जन्मान्तर के संस्कार से मत्स्य-मांसाहारी हुई और मासिक धर्म तथा उसका गर्भ पात हो जाता था ॥ ९ ॥

तस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि ! सुशोभने ! ।
यत्कृतेन वरारोहे ! शीघ्रं पुत्रमवाप्नुयात् ॥१०॥

हे देवि ! अब उसकी उत्तम शान्ति कहता हूँ वह सुनो, जिसके करने मात्र से ही पुत्र प्राप्त होता है ॥ १० ॥

हरिवंशस्य श्रवणं त्रिवारं च विधानतः ।
गायत्रीमूलमन्त्रेण पञ्चलक्षजपं तथा ॥११॥

विधिवत् हरिवंश का श्रवण तीन आवृति करे और गायत्री मूल मन्त्र का पाँच लाख जप करावे ॥ ११ ॥

दशांशं हवनं देवि ! दशांशं चैव तर्पणम् ।
मार्जनं च विशेषेण दशांशं चैव कारयेत् ॥१२॥

हे देवि! और उसका दशांशहवन, तर्पण तथा मार्जन करावे ॥१२॥

ततो गां कपिलां दद्याद्दशवर्णां ततः प्रिये ! ।
सूर्यस्य प्रतिमां देवि ! स्वर्णैर्दशपणैस्तथा ॥१३॥

हे देवि ! उसके बाद कपिला गौ और दश वर्णा गौओंका भी दान करे तथा दसपण*सुवर्णसे सूर्यकी प्रतिमा निर्माणकराकर।१३।

भूषितं विविधैवस्त्रैः स्वर्णरौप्यविभूषणैः ।
पूजयित्वा विधानेन मन्त्रेणानेन पार्वति ! ॥१४॥

उसे अच्छे वस्त्रों से तथा सोने-चाँदी के आभूषणों से अलंकृत कर आगे बताये हुए मंत्रों द्वारा विधिवत् पूजन करे ॥ १४ ॥

---

* वराटकानां दशकं द्वयं सत् सा काकिणी ताश्च पणश्चतस्र ।

मन्त्रः ॐ त्वंज्योतिःसर्वलोकानां पूज्यस्त्वंसर्वदेहिनाम् ।
पूर्वजन्मकृतं पापं हर मे तिमिरापह ! ॥१५॥

आप सब लोकोंको प्रकाश करनेवाले हैं, तथा सब मनुष्यों द्वारा पूजेजानेवाले हे तमके नाशक!मेरे जन्मान्तर कृत पापोंकानाशकरें १५

(१) ॐ श्री सूर्याय नमः (२) ॐ सवित्रे नमः (३) ॐ साक्षिणे नमः (४) ॐ त्रिगुणात्मने नमः (५) ॐ द्वादशात्मने नमः (६) ॐ केयूरधारिणे नमः । (७) ॐ तीक्ष्णांशुधारिणे नमः (८) ॐ कलाकाष्ठादि-रूपिणे नमः (९) ॐ विष्णवे नमः (१०) ॐ ब्रह्मणे नमः (११) ॐ रुद्राय नमः (१२) ॐ मार्त्तण्डाय नमः ।

ॐ मन्त्रैर्द्वादशभिर्देवि ! पूजयेत्प्रतिमां ततः ।
धूपदीपादिभिश्चैव ताम्बूलैश्च विधानतः ॥१६॥

और पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य तथा ताम्बूलादि वस्तुओं के सहित बारहों मन्त्रों से प्रतिमा का पूजन करे ॥ १६ ॥

पूजितां प्रतिमां दद्याद् ब्राह्मणाय वराय च ।
दासीं दासं धनं धान्यं ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ॥१७॥

उस प्रतिमा को उत्तम ब्राह्मण को दान कर देवे तथा दास-दासियाँ तथा धान्य द्रव्यादि ब्राह्मण को देवे ॥ १७ ॥

अश्वदानं रथं वस्त्रं पात्राणि विविधानि च ।
शय्यादिकं वरारोहे! वित्तशाठ्यं न कारयेत् ॥१८॥

हे वरारोहे ! घोड़ा, रथ, वस्त्र तथा अनेक प्रकारके पात्र, शय्या आदि निष्कपट स्वेच्छामनसे दान करे इसमें कृपणता न करे ॥१८॥

एवं कृते न सन्देहश्चिरं जीविसुतं लभेत् ।
पूर्वजन्मकृतं पापं क्षयं याति न चान्यथा ॥१९॥

ऐसा करने से निःसन्देह दीर्घायु पुत्र की प्राप्ति तथा पूर्वजन्म कृत पाप भी समूल नष्ट हो जाते हैं ॥ १६ ॥

सप्तम्यां रवियुक्तायां व्रतं कुर्यात्सुरेश्वरि ।
पापंव्याधिःक्षयं याति ज्वरः क्वाऽपि न जायते॥२०॥

हे सुरेश्वरि ! और यदि रवियुक्ता सप्तमीका व्रत करे तो समस्त पाप व्याधियों केसहितनष्ट होंऔर उसे कभी ज्वर नहीं आता ॥२०॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे पुनर्वसुनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकत्रिंशोऽध्यायः ॥३१॥

एकतीसवाँ अध्याय समाप्त ॥ ३१ ॥

अथ द्वात्रिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

पापेन जायते व्याधिः पापेनैवासुतो भवेत् !
पापने जायते मूर्खः पापेनैव दरिद्रता ॥१॥

शिवजी ने कहा—मनुष्य को पापही से अनेक प्रकार की व्याधियाँ होती हैं तथा पाप ही से पुत्र रहित होता है और पाप से ही मूर्ख तथा दरिद्र होता है ॥ १ ॥

पूर्वजन्मकृतं यत्तु पापं वा पुण्यमेव वा ।
इह जन्मनि भो देवि ! भुज्यते सर्वदेहिभिः ॥२॥

हे देवि ! जो पूर्वजन्म में कर्म (पाप या पुण्य) किया है वही इस जन्म में प्राणियों को भोगना पड़ता है ॥ २ ॥

पुण्येन जायते विद्या पुण्येन जायते सुतः ।
पुण्येन सुन्दरी नारी पुण्येन लभते श्रियम् ॥३॥

पुण्य ही से विद्या, पुण्य ही से पुत्र और सुन्दर स्त्री की प्राप्ति तथा सम्पत्ति मिलती है ॥ ३ ॥

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि पुष्यनक्षत्रजं फलम् ।
तत्सर्वं शृणु भो देवि ! यत्कृतं पूर्वजन्मनि ॥४॥

हे देवि ! अब पुष्य नक्षत्र के प्रथम चरण में उत्पन्न मनुष्य के शुभाशुभ कर्म जो पूर्व जन्म में किया है उसका फल कहता हूँ, वह सब सुनो ॥ ४ ॥

मध्यदेशे वरारोहे ! धनाढ्यो बल्लवोऽवसत् ।
हंसकेतुरिति ख्यातो भार्या तस्य तु केकयी ॥५॥

मध्य देश में धन से युक्त हंसकेतु नामक एक अहीर रहता था और केकयी नाम की उसकी स्त्री थी ॥ ५ ॥

बहवो वृषभास्तस्य महिष्यो गास्तथा प्रिये ॥
धर्मकर्मरतः शूद्रो विक्रयेद्गोवृषादिकम् ॥६॥

हे प्रिये ! उसके पास बहुत से बैल, गाय तथा भैंसें थीं। वह अपने धर्म-कर्ममें रत हो पशुओंका विक्रय किया करता था ॥६॥

घृततक्रस्य भो देवि ! विक्रयं कुरुते सदा ।
एको वैश्यो धनाढ्यो वै तस्य मित्रं तदाऽभवत् ॥७॥

हे देवि ! वह घी तथा मट्ठा को भी बेचता था, उसकी मित्रता एक धनिक वैश्य के साथ हो गयी ॥ ७ ॥

महाप्रीतिस्तयोर्जाता बहुवर्षप्रमाणतः ।
एकदा तु निशायां वै शूद्रेण वणिकः प्रिये ! ॥८॥

हे प्रिये ! उन दोनों मित्रोंकी मित्रता बहुत दिनों तक चलती रही, एक समय रात को शूद्र ने वैश्य [बनिये] को ॥ ८ ॥

शुभरत्नादिलाभाय कटारेण तदा हतः ।
द्रव्यं सर्वं गृहीतं तु भूमिमध्ये तथा धृतम् ॥९॥

उसके द्रव्यों के लोभवश उसे तलवार से मार डाला और उसका समस्त धन लेजाकर भूमि में गाड़ दिया ॥ ९ ॥

तन्मध्ये तु षडंशस्य व्ययं कुर्याद् दिने दिने ।
बहुवर्षगते काले शूद्रो मृत्युवशोऽभवत् ॥१०॥

और उसमें से षष्ठांश प्रमाण धनको अपने लिये नित्य खर्चता था, इस प्रकार बहुत समय बीत जाने पर उसकी मृत्यु होगयी ॥१०॥

पातयामास घोरे तु यमदूतो यमाज्ञया ।
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥११॥
ततो जातो महादेवि ! राक्षसो गहने वने ।
पुनः श्रृगालयोनिं च मानुषत्वं भवेत्पुनः ॥१२॥

मरने के बाद यमाज्ञा से उनके दूतोंने कठिन नरक में वास दिया और साठ हजार वर्ष उसकी यातनायें भोग कर एक गहन वन में राक्षस हुआ उसके बाद श्रृगाल [सियार] की योनि में आया फिर मनुष्य हुआ ॥ ११-१२ ॥

धन-धान्यसमायुक्तो भार्या जाता तु या पुरा ।
वन्ध्यारोगसमायुक्ता कन्यका चैव जायते ॥१३॥

वहधनादिसे सम्पन्नहुआऔर पूर्वजन्मके संस्कारसेउसकीवही स्त्री फिर हुई, किन्तु बन्ध्या के समान केवल कन्या वाली ही हुई ॥

तस्य रोगो भवेत्पश्चाद्विविधश्च वयोऽन्तरे ।
पूर्वजन्मनि भो देवि ! मित्रश्च निहतं यतः ॥१४॥

हे देवि ! उसे बुढ़ापे में अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न हो गये, पूर्वजन्म में उसने मित्र का जो बध किया था ॥ १४ ॥

तत्पापेन च भो देवि ! पुत्रो नैवोपजायते ।
बहुपुत्रप्रघाती च कम्परोगी प्रजायते ॥१५॥

उस पाप से उसे पुत्र नहीं होता और बहुत पुत्रों को मारने वाला तथा कम्प [वात] रोग हुआ ॥ १५ ॥

तस्य शान्ति प्रवक्ष्यामि श्रृणु देवि ! सुशोभने ।
षडंशं वै ततो दानं विदुषे ब्राह्मणाय च ॥१६॥

हे देवि ! अब उसकी उत्तम शान्ति कहताहूँ, उसे सुनो। अपने धन का छठवाँ भाग विद्वान् ब्राह्मण को दान दे ॥ १६ ॥

गां तथा महिषीं दद्याद्विधिवद्भोजयेद्द्विजान् ! ।
गायत्रीजातवेदाभ्यां द्विलक्षं च जपं ततः ॥१७॥

गाय तथा भैंस दान कर विधिवत् श्रद्धा से ब्राह्मणों को भोजन करावे और गायत्री मंत्र अथवा "जातवेदसे" इस मन्त्र का दो लक्ष जप कराकर ॥ १७ ॥

कुण्डे कोणत्रये चैव होमं वै कारयेत्ततः ।
जपस्यैव दशांशेन हवनादिकमाचरेत् ॥१८॥

त्रिकोण आकार का कुण्ड बनवाकर उसमें जप का दशांश प्रमाण हवन, तर्पण और मार्जन करावे ॥ १८ ॥

ततो वै प्रतिमां कुर्याद्वैश्यस्यैव विधानतः ।
द्वादशेन पलेनैव सुवर्णस्य विशेषतः ॥१६॥

इसके बाद विधिवत् बारह पल [साठ तोले] सुवर्ण की प्रतिमा उस वैश्य की बनवाकर ॥ १६ ॥

पूजयेत्पूर्वजैर्मन्त्रैस्ततो विप्राय दापयेत् ।
एवं कृते न सन्देहः पुत्रो भवति नाऽन्यथा ॥२०॥

पूर्व कथित मन्त्रों द्वारा उस मूर्ति की पूजा करके ब्राह्मण को दे देवे, इस प्रकार के नियम को करने वाला निःसंदेह पुत्र प्राप्त कर सकता है ॥ २० ॥

सर्वरोगः क्षयं याति नात्र कार्या विचारणा ॥२१॥

और सब व्याधियों से मुक्त हो जाता है इसमें विचार न करे ॥२१॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे
पुष्यनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं
नाम द्वात्रिंशोऽध्यायः ॥ ३२ ॥

बत्तीसवाँ अध्याय समाप्त ॥ ३२ ॥

अथ त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि शृणु देवि ! विशेषतः ।
आदौ पापफलं देवि ! भुज्यते देवमानुषैः ॥१॥

शिवजी बोले—कि देवि ! अब वह कहता हूँ जो कि पूर्व के किये हुए का फल देवता और मनुष्य दोनों को भोगने पड़ते हैं—उसे ध्यान से सुनो ॥ १ ॥

पश्चात्पुण्यफलं देवि ! परलोक इहाऽपि वा ।
एकः शिल्पकरो देवि वसते हस्तिनापुरे ॥२॥

हे देवि ! और पीछे के पुण्य फल को इस लोक और दूसरे लोक में भोगते हैं, हस्तिनापुर में एक शिल्पकार निवास करता था ॥२॥

हेमदास इति ख्यातो भार्याद्वयसमन्वितः ।
प्रत्यहं शिल्पकार्यं च करोति व्ययकारणात् ॥३॥

वह हेमदास नाम करके प्रसिद्ध था और उसकी दो स्त्रियाँ थीं वह प्रति दिन अपने जीविका के लिये शिल्प कार्य [कारीगरी] को करता था ॥ ३ ॥

काशीतः पश्चिमे देवि ! स्वकर्मनिरतः सदा ।
अश्वत्थानां च वृक्षाणां छेदनानि चकार सः ॥४॥

हे देवि ! काशी से पश्चिम दिशा में अपने कर्म में प्रवृत्त रह-कर पीपल के वृक्षों का छेदन [काटना] करता था ॥ ४ ॥

एवं बहुगते काले शिल्पकारो मृतः प्रिये ! ।
नरके तस्य पतनं षष्टिवर्षसहस्रकम् ॥ ५ ॥

इस प्रकार उसका बहुत समय बीत गया बाद को जब उसकी मृत्यु हुई तो नरक वास हुआ और साठ हजार वर्ष तक नरक भोग किया ॥ ५ ॥

पत्न्या सह वरारोहे ! यातो योनिं बिडालिकाम् ।
बिडालयोनिं वै भुक्त्वा वृषयोनि ततोऽभवत् ॥६॥

और जब नरक से उद्धार हुआ तो विडाल [बिल्ली] की योनि में जन्म लिया फिर उसके बाद वृषभ [बैल] की योनि प्राप्त किया ॥६॥

पुनः स्यान्मानुषो देवि ! मध्यदेशे सुपूजितः ।
पूर्वजन्मनि वृत्ताणां छेदनं प्रत्यहं कृतम् ॥७॥

फिर उसके बाद मध्यदेश में उत्तम मनुष्य शरीर पाया, जो पूर्व जन्म में पीपल वृत्त का छेदन किया था ॥ ७ ॥

तेन पापेन भो देवि ! पुत्रो नैव प्रजायते ।
कन्यकाश्चैव सञ्जाताः स्त्रिया रोगः सुदारुणः ॥८॥

उस पाप से पुत्र रहित हुआ केवल कन्या ही पैदा होती थीं और उसकी स्त्री रोग से सदा क्लेशित रहा करती थी ॥ ८ ॥

शरीरे महती पीडा रात्रौ निद्रा न लभ्यते ।
कन्यकायाश्च वैधव्यं वृत्तच्छेदनतः प्रिये ! ॥६॥

और शरीर में पीड़ा होनेके कारण रात में नींद भी नहीं आती थी तथा वृत्त छेदन दोष से उसकी कन्यायें विधवा हो गयीं ॥६॥

तस्य शांतिं प्रवक्ष्यामि ततः पापनिवर्त्तनम् ।
चतुर्थांशं तु वै दानं ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ॥१०॥

अब उसकी शान्ति कहता हूँ जिससे कि पाप की निवृत्ति हो, अपने धन का चतुर्थांश ब्राह्मण को दान देवे ॥ १० ॥

दशायुतं जपं कुर्याद्गायत्रीमूलमन्त्रतः ।
पलपञ्चसुवर्णस्य वृत्तं वै कारयेत्ततः ॥११॥

और गायत्री मूल मन्त्र का दश हजार जप करावे तथा पांच पल (पचीस तोले) प्रमाण सुवर्ण का एक वृत्त बनवावे ॥११॥

पूजयित्वा यथान्यायं वृत्तं विप्राय दापयेत् ।
पञ्चधेनुं तथा दद्यात् वृषं चाभरणान्वितम् ॥१२॥

उस सुवर्ण निर्मित वृक्ष का विधि पूर्वक पूजन करके ब्राह्मण को देवे और पांच गौ तथा सुसज्जित एक बैल दान करे ॥ १२ ॥

कूष्माण्डं नारिकेलं च पञ्चरत्नसमन्वितम् ।
गङ्गामध्ये च दातव्यं ततः पापक्षयो भवेत् ॥१३॥

कुष्माण्ड [सफेद कोंहड़ा] अथवा नारियल में पञ्चरत्न भरकर गंगा के मध्य में दान करे तो सब पाप नष्ट होवें ॥१३॥

सर्वव्याधिः क्षयं याति कन्यका च सुखान्विता ।
पुत्रश्चैव प्रजायेत नात्र कार्या विचारणा ॥१४॥

और सब व्याधियों से निवृत्त होकर पुत्र कन्या से सुखी होवे इसमें विचार की आवश्यकता नहीं है ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे
पुष्यनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्त-
कथनं नामत्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ॥३३॥

तेतीसवाँ अध्याय समाप्त ॥ ३३ ॥

अथ चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच

मध्यदेशे वरारोहे ! लोहकारश्च तस्थिवान् ।
गौरेका लोहकारेण बाल्यतः पालिता शिवे ! ॥१॥

शिवजी बोले—कि हे शिवे ! मध्य देश में एक लोहार निवास करता था और वह बचपन से ही एक गौ पाल रखा था ॥ १ ॥

एकस्मिन् दिवसे पङ्के मग्ना च गौर्वराभवत् ।
तच्छ्रुत्वा लोहकारस्तु न गतस्तत्र वै शिवे ! ॥२॥

वह गौ एक दिन कीचड़ में धँस गयी और उसे कीचड़ में धँसा हुआ सुनकर लोहार लेने नहीं गया ॥ २ ॥

मृता रात्रौ तदा देवि ! पङ्के वै तरणी च सा ।
बहुघस्रात्ततो देवि ! मरणं तस्य वै गृहे ॥३॥

हे देवि ! वह उस कीचड़ में रात के समय मर गयी और कुछ काल के बाद लोहार भी मर गया ॥ ३ ॥

तस्य पत्नी सती जाता सत्यलोकं गतौ च तौ ।
दशलक्षमितं वर्षं सत्यलोके च तस्थिवान् ॥४॥

और उसकी स्त्री भी सतीहोगयी तथा उसके सतीत्वके प्रभावसे दोनोंकोस्वर्गमिलाऔरदसलाखवर्षपर्यन्तस्वर्गसुख भोग किये॥४॥

पुनः पुण्यक्षये जाते मर्त्यलोके तदाभवत् ।
मानुषः शुभजन्मा च धनधान्यसमन्वितः ॥५॥
पत्न्या सह वरारोहे ! ब्राह्मणानां च सेवकः ।
पूर्वजन्मनि देवेशि ! पङ्के मग्ना च यत्र गौः ॥६॥

जब पुण्य नष्ट हो गया तब मनुष्य लोक में स्त्री सहित एक धनिक कुल में जन्म लिया और ब्राह्मणों का परम भक्त हुआ । वह जन्मान्तर में जहाँ पर कीचड़ में गौ फँसी हुई थी ॥५–६॥

न गतस्तत्र भो देवि ! तस्मात्पुत्रो न जायते ।
कन्या जाता पुरा देवि ! तस्या मृत्युश्च जायते ॥७॥

वहाँ पर नहीं गया, हे देवि ! उस पाप करके उसे पुत्र नहीं हुआ । प्रथम एक कन्या हुई थी जो कि वह भी मर गयी ॥ ७ ॥

तदर्थं वाटिकां कूपं पथि मध्ये च कारयेत् ।
कुर्याच्चैव तुलादानं पात्राणि विविधानि च ॥८॥

उस पाप की शान्ति के लिये मार्ग के समीप बावली कुआँ आदिका निर्माण करावे और तुला दान तथा अनेक प्रकार के पात्रों का भी दान करे ॥ ८ ॥

गोयुग्मं घृतकुम्भं च ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ।

गायत्रीमन्त्रजाप्यं च लक्षमेकं तु कारयेत् ॥९॥

जोड़ा गौ और घी से पूर्ण घड़ा का दान ब्राह्मण को करे, तथा गायत्री मंत्र का जप एक लाख करावे ॥ ९ ॥

होमं कुर्यात्ततो देवि ! तिल-धान्यादि-तण्डुलैः ।
ब्राह्मणान्भोजयेद्देवि ! शतसंख्यान् वरानने !॥१०॥

और तिल के सहित जव, चावल आदि से हवन कराकर सौ ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ १० ॥

एवं कृत्वा वरारोहे ! पुत्रो भवति नान्यथा ।
वन्ध्यात्वं नाशमायाति व्याधिनाशो भवेत्ध्रुवम्॥११॥

हे वरारोहे ! इस प्रकार के विधान को करने से पुत्र की प्राप्ति औरवन्ध्यापनदोष तथाव्याधियों का अवश्यनाश होजाता है ॥११॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे
पुष्यनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं
नाम चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३४ ॥

चौंतीसवाँ अध्याय समाप्त ॥३४॥

अथ पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अयोध्यानगराद्देवि ! पूर्वे कोशचतुर्दशे ।
तत्राप्येकोऽवसच्छाककारो वैडुम्बराभिधः ॥१॥

शिवजीनेकहा—हे देवि ! अयोध्यापुरीसेपूर्वकीओरचौदहकोश की दूरी पर एक शाककार (माली) वैडुम्बर नाम का रहता था ॥१॥

चिन्ता तस्याभवत्पत्नी पतिसेवापरायणा ।
शाककारो महासाधुर्विष्णु—भक्तिरतः सदा ॥२॥

उसकी स्त्री चिन्ता थी और पति की सेवामें तत्पर रहती थी, तथा शाककार भी सज्जन और विष्णु भक्त था ॥ २ ॥

गुरुसेवारतो नित्यं प्रत्यहं शाक-विक्रयी ।
एका मार्जारिका श्वेता पालिता तेन वै हता ॥३॥

और प्रति दिनगुरुजनों की सेवा तथा अपनाकार्यकिया करता था, एक दिन उसने श्वेतरंगकीपाली हुई बिल्ली का वधकर दिया॥३॥

प्राप्तो वै तमसातीरे तीर्थे मृत्युर्मम प्रिये ! ।
विष्णुभक्तिरतो यस्मात्तीर्थे मृत्युफलादपि ॥४॥

हे प्रिये ! वह विष्णु भक्त था इसलिये उसकी मृत्यु मेरे तीर्थ में तमसा नदी के तीर पर ही हुई और तीर्थ में मरने के कारण ॥४॥

न गतो यमलोकं तु भुक्त्वा स्वर्गं तु चाऽभवत् ।
षष्टिवर्षसहस्राणि पुनः पुण्यक्षयो यदा ॥५॥

उसे यमलोक नहीं जाना पड़ा स्वर्ग लोक मिला और साठ-हजार वर्ष स्वर्गसुख भोगने के बाद जब पुण्य क्षीण हुआ ॥५॥

तदा वृषभयोनिश्च मृत्युलोकेऽभवत् पुनः ।
मानुषत्वं ततो यातो धनधान्यसमन्वितः ॥६॥

तो मर्त्य लोक में उसे बैल (पशु) की योनि मिली, उसके अनन्तर फिर धनादिसे सम्पन्न मनुष्य शरीर प्राप्त किया ॥ ६ ॥

सुन्दरो विष्णुभक्तित्वात् पुत्रेण रहितः शिवे ! ।
गर्भाणां पतनं जातं यतो मार्जारिका हता ॥७॥

हे शिवे ! वह श्रेष्ठ विष्णु भक्त होते हुए पुत्र रहित और उसके स्त्री का गर्भ भी नष्ट हो जाता था कारण कि पूर्व जन्म में बिल्ली का वध किया था ॥ ७ ॥

सगर्भा च तदा देवि ! ततो गर्भो विनश्यति ।
तस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं गिरिजे वरे ! ॥८॥

और वह बिल्ली गर्भिणी थी इससे उसके गर्भ नष्ट हुए हे गिरजे ! अब उसकी शान्ति कहता हूँ—उसे तुम सुनो ॥ ८ ॥

गृहवित्तार्द्धभागं वै ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ।

तदा पापं क्षयं याति नात्र कार्या विचारणा ॥९॥

अपने धन का अर्ध भाग ब्राह्मण को दान करे तो सब पाप नष्ट हों और इसके करने में विचार न करे ॥ ९ ॥

शिवार्चनं कारयित्वा रौप्यमार्जारिकां तथा ।
पलानां सप्तकैः कुर्यात् सगर्भां विमलां शुभाम् ॥१०॥

शिव जी की पूजा करके और सात पल अर्थात् पैंतीस तोले चाँदी की सगर्भा बिल्ली की सुन्दर मूर्त्ति बनवावे ॥ १० ॥

पूजयित्वा ततो देवि ! ततो दद्याद् द्विजन्मने ।
लक्षजाप्यं ततो देवि ! त्र्यम्बकेण विशेषतः ॥११॥

हे देवि ! उसकी पूजा करके फिर ब्राह्मण को दान करदे और "त्र्यम्बकं यजामहे" इस मंत्र का एक लाख जप करावे ॥ ११ ॥

ततो भवति वै शुद्धः पूर्वपापान्न संशयः ।
पुत्रो भवति वै देवि ! रोगाणां संक्षयस्तथा ॥१२॥

तो पूर्वकृत सब पापों से शुद्ध हो और पुत्र की प्राप्ति तथा रोगों से निवृत्त हो जाता है—इसमें सन्देह नहीं ॥ १२ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे पुष्यनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३५ ॥

पैंतीसवाँ अध्याय समाप्त ॥ ३५ ॥

अथ षट्त्रिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि शृणु देवि ! सुशोभने ! ।
जातस्य सार्पनक्षत्रे प्रथमे चरणे शुभे ॥१॥

शिवजी बोले—कि हे देवि ! अब सार्प नक्षत्र (आश्लेषा नक्षत्र) के प्रथम चरण में जन्म लेनेवाले का उत्तम फल कहता हूँ, उसे सुनो ॥१॥

पुरी काशी समाख्याता त्रैलोक्ये देवि! पूजिता।
तस्यास्तु पश्चिमे भागे क्रोशे पञ्चदशे मिते ॥२॥

तीनों लोकों में पूजित जो काशी पुरी है उससे पश्चिम दिशा में पन्द्रह कोश प्रमाण की दूरी पर ॥ २ ॥

माण्डव्यस्य पुरे शुभ्रे वसन्ति बहवो जनाः।
तन्मध्ये शूद्र एको हि प्राकरोल्लवणं सदा ॥३॥

माण्डव्य नामक सुन्दर नगर था और वहाँ पर जन समुदाय निवास करता था, जिसमें कि एक शूद्र जाति का नोनियाँ (मिट्टी से नमक बनाने वाला) भी बसता था ॥ ३ ॥

डिण्डिमेति समाख्यातो गौरी तस्य वराङ्गना।
बह्वर्थं सञ्चितं तेन न दानमकरोत् क्वचित् ॥४॥

उसकानाम डिण्डिमथाऔरउसकीस्त्रीगौरीनामकीथी। उसने उद्यमसेबहुत साधनएकत्रित किया किन्तुदान कुछ भी नहींकिया।४।

एकदा दैवयोगेन ब्राह्मणानां निमन्त्रणम्।
भोजनं प्रददौ कृत्वा दक्षिणां वै समर्पयेत् ॥५॥

उसने संयोगवश भोजनके लिये ब्राह्मणोंको निमन्त्रित किया और भोजन कराकर दक्षिणा भी दिया ॥ ५ ॥

गामेकां कपिलां दत्त्वा भूषितां स्वपुरोधसे।
ब्राह्मणोऽकथयत् कश्चित् शूद्रं प्रति तदा प्रिये॥६॥
अहं ग्रामस्य वै पूज्यो मदीया गौः कथं प्रभो!।
पुरोहिताय दत्ताऽसि प्राणं ते च ददाम्यहम् ॥७॥
इति श्रुत्वा वचस्तस्य सोऽवदद् ब्राह्मणं प्रति।
क्रोधेन महता देवि! ब्राह्मणाय तदाधमः ॥८॥

हे देवि! आभूषण के साथ एक कपिला गौ अपने पुरोहित को दान किया, उसके बाद कोई ब्राह्मण आकर कहने लगा कि इस

ग्राम का पूज्य (डीह डार) मैं हूँ अतः मेरी गाय को क्यों दिया अब तेरे ऊपर मैं प्राण दे दूँगा, इस प्रकार ब्राह्मण के वचनों को सुनकर शूद्र ने क्रोध के आवेश में आकर कहा ॥ ६–८ ॥

तदा क्रोधेन महता स शूद्रोऽताडयद् द्विजम् ।
मरणं तस्य वै जातं तद्धस्ताद्धै वरानने ! ॥ ६ ॥

और उसे मारने लगा तथा उसके हाथ से ब्राह्मण की मृत्यु हो गयी ॥ ६ ॥

ततो बहुतिथे काले सस्त्रीकः प्रमृतः खलः ।
पतनं तस्य वै जातं कर्मपाके तदा खलु ॥ १० ॥

तदनन्तर कुछकाल के बाद उस शूद्रकी मृत्यु हो गयी और ब्रह्म हत्या के दोष से नरक में वास किया ॥ १० ॥

निक्षिप्य यमदूतेन तत्रैव च यमाज्ञया ।
पञ्चलक्षं ततो वर्षं कष्टं दत्तं मुहुर्मुहुः ॥ ११ ॥

उसे यमाज्ञासे यमदूतों ने पांच लाख वर्ष तक कष्ट देते हुए नरक में रक्खा ॥ ११ ॥

तत्र जाता महापीडा नरकान्निःसृतस्ततः ।
सर्पयोनिं स वै यातो गृध्रयोनिस्ततोऽभवत् ॥१२॥

नरक की अनेक प्रकार की पीडायें भोगने के बाद सर्प की योनि में आया, उसके बाद फिर गृद्ध की योनि पाया ॥ १२ ॥

मानुषत्वं ततो लब्धं मध्यदेशे वरानने ! ।
पूर्वपापाच्च भो देवि ! पुत्रो नैव प्रजायते ॥ १३ ॥

उसके बाद मध्य देश में मनुष्य शरीर प्राप्त किया किन्तु पूर्व पाप के दोष से पुत्र रहित हुआ ॥ १३ ॥

शरीरे रोग उत्पन्नो विग्रहस्तु वरानने ! ।
प्रायश्चित्तं प्रवक्ष्यामि पूर्वकिल्विषशान्तये ॥ १४ ॥

हे सुमुखि ! वह अनेकतरहकी बाधाओं तथारोगोंकरके दुखित

हुआ। अब पूर्व पाप की शान्तिके लिये प्रायश्चित कहताहूँ ॥१४॥

गायत्री-सूर्यमन्त्राभ्यां पञ्चलक्षजपं शिवे ! ।
करोतु विधिवद्भक्त्या तदा वै वरवर्णिनि ॥१५॥

हे शिवे ! गायत्री तथा सूर्य इन दोनों मंत्रों का पांच लाख विधिवत् जप करे या (ब्राह्मण द्वारा करावे) ॥ १५ ॥

होमं कारयितु त्वाज्यं कुण्डे चाष्टदले तथा ।
दशांशतर्पणं तस्य मार्जनं तद्दशांशतः ॥ १६ ॥

और अष्टदल कमल के आकार का कुण्ड बनाकर हवन करे और उसके दशांश प्रमाण तर्पण तथा मार्जन करावे ॥ १६ ॥

प्रतिमां रुचिरां कृत्वा सुवर्णस्य महेश्वरि ! ।
पलषष्ट्याः प्रयत्नेन पूजयित्वा यथाविधि ॥ १७ ॥

औरसाठपल सुवर्ण कीप्रतिमाबनवा कर विधिवत् पूजन करे॥१७॥

मन्त्रेणानेन विधिना गन्ध-धूपादिभिस्तथा ।
दुर्गे ! देवि ! नमस्तुभ्यं सर्वसिद्धिप्रदेश्वरि ! ॥१८॥
इमां पूजां गृहीत्वा तु मम कार्यं प्रसाधय ॥१९॥

तथा गन्धधूपादि से "दुर्गे देवि—" इस मंत्र द्वारा पूजन कर कहे कि—हे देवि, सब सिद्धियों को देने वाली मेरी पूजा को स्वीकार कर मेरे कार्य को सिद्ध करो—फिर नमस्कार करे ॥ १८-१९ ॥

मन्त्रः—ॐ ह्रीं माहेश्वर्यै नमः । ॐ दुर्गायै नमः । ॐ सर्वकामप्रदे नमः । ॐ ईश्वर्यै नमः । ॐ त्र्यम्बकाय नमः । ॐ ब्रह्मणे नमः । ॐ विष्णवे नमः । ॐ सर्वेश्वराय नमः । ॐ भैरवाय नमः । ॐ मार्त्तण्डाय नमः ॥

एतैश्च दशभिर्मन्त्रैः प्रतिमां पूजयेत् प्रिये ! ।
ब्राह्मणाय ततो दद्याद्भक्तियुक्तेन चेतसा ॥२०॥

हे प्रिये ! ऊपर कहे हुए दश मंत्रों से प्रतिमा का पूजन कर ब्राह्मण को दे देवे ॥ २० ॥

पञ्चपात्रं ततो दद्यात् तदुद्देशेन पार्वति ! ।
तिलदानं ततो दद्याद्वस्त्रदानं यथाविधि ॥२१॥

उसके बाद तिल और वस्त्रों के सहित पांच पात्र (बर्तन) कहे हुए नियम से दान करे ॥ २१ ॥

कूष्माण्डं नारिकेलं च पञ्चरत्नसमन्वितम् ।
गङ्गामध्ये प्रदातव्यं पूर्वपापप्रणाशनम् ॥२२॥
रोगात्प्रमुच्यते देवि ! वन्ध्यापि पुत्रमाप्नुयात् ॥२३॥

पूर्वकृत पाप की निवृत्ति के लिये कूष्माण्ड (सफेद कोंहड़ा) अथवा नारियल में पञ्चरत्न भरकर गंगा के मध्य में दान करे, इसके करने से रोग भी निवृत्त हो जाता है और वन्ध्या (बाँझ) दोष नष्ट होकर पुत्र प्राप्त होता है ॥ २२-२३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे
आश्लेषानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्त-
कथनं नाम षट्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३६ ॥

छत्तीसवाँ अध्याय समाप्त ॥ ३६ ॥

—:*:—

अथ सप्तत्रिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अलर्कस्य पुरे देवि ! शूद्र एकोऽवसत्पुरा ।
शूद्राचाररतो नित्यं विक्रयं कुरुते सदा ॥ १ ॥

शिवजी बोले-हे देवि ! अलर्क नामके नगर में एक शूद्र निवास करता था और अपने कर्म में निरत व्यापार को करता था ॥ १ ॥

गोमहिष्यादिव्यापारैर्व्ययं कुर्याद्दिने दिने ।
गोधनानि बहून्येव तेषां रक्षा न जायते ॥ २ ॥

उसका व्यापार गाय, भैंस आदि प्रतिदिन खरीदना बेचना था, उसके पास पशु (गाय भैंस) अधिक थीं परन्तु उनकी पूरी रक्षा नहीं कर पाता था ॥ २ ॥

दुर्लभ इति विख्यातो तत्राज्ञानी सदावसत् ।
एकदा तस्य गोवृन्दे वने तिष्ठति भोऽनघे ! ॥३॥
वृष्टिस्तत्र महा जाता गावश्च पीडिता भृशम् ।
तासां मध्ये भूरि गावो वर्षणेन मृताः पुरा ॥४॥
रक्षां शूद्रो नाकरोत्स तृणैराच्छादनादिभिः ।
एवं बहुगते काले शूद्रः पापी मृतो यदा ॥५॥

और वहाँ पर ज्ञान से शून्य दुर्लभ नाम करके कोई रहता था । एक समय उसकी सब गायें जङ्गल में थीं और वहाँ पर खूब बारिस हुई जिससे कि वे बहुत दुःखित हुईं तथा उनमें से कितनी ही गायें मर भी गयीं किंतु उनकी रक्षा के लिये तृण (पतलो आदिसे घर बनाकर) छाया नहीं किया इस प्रकार बहुत समय बीत जाने पर वह अधम शूद्र जब मर गया ॥ ३–५ ॥

नरके पातयामास यमदूतो यमाज्ञया ।
बहुवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकजं फलम् ॥६॥
नरकान्निर्गतो देवि ! गजयोनिमवाप्तवान् ।
गजयोनिं ततो भुक्त्वा मानुषत्वं ततोऽगमत् ॥७॥

तो यमराज की आज्ञासे उनके दूत उसे नरक में ले गये और कई हजार वर्ष नरक की यातनायें भोग कर फिर हाथी की योनिमें आया, उस योनिके बाद मनुष्य शरीर धारण किया ॥ ६–७ ॥

स्वकर्मणा परित्यागं यतोऽकार्षीद्गवां पुरा ।
ततः कर्मफलाद्देवि ! नैव पुत्रः प्रजायते ॥८॥

प्रथम वह अपने कर्म से च्युत होकर गौवों की रक्षा नहीं किया, इस कर्म फल से पुत्र रहित हुआ ॥ ८ ॥

कृतं दानं पुरा देवि ! सर्वपर्वणि चाञ्जसा ।
तेन पुण्येन भो देवि ! धनधान्यगजादिकम् ॥९॥

हे देवि ! पूर्वजन्म में प्रत्येक पर्वों में दान किया था जिससे कि धन धान्य तथा गज [हाथी] आदि से सम्पन्न हुआ ॥ ९ ॥

गोसंग्रहः कृतः पूर्वं मृतास्तृणकणं विना ।
तेन पापेन भो देवि ! महाव्याधिः प्रजायते ॥१०॥

हे देवि ! पूर्वजन्म में गौवों का संग्रह किया था परन्तु समुचित प्रबन्ध अर्थात् घास वगैरह न मिलने के कारण मर गयीं, उस पाप से रोगी हुआ ॥ १० ॥

तस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि ! सुशोभने ! ।
ब्राह्मणाय दशांशं च दानं दद्यात्सुतप्रिये ॥११॥

हे देवि ! अब उसकी उत्तम शान्ति कहता हूँ-तुम सुनो, अपने धन का दशवाँ भाग ब्राह्मण को दान करे ॥ ११ ॥

गायत्रीलक्षजाप्येन जपं कुर्यात्प्रसन्नधीः ।
दशांशं हवनं देवि ! मार्जनं तर्पणं तथा ॥१२॥

तथा प्रसन्नता से गायत्री मन्त्र का एक लाख जप कराकर उसके दशांश हवन, तर्पण तथा मार्जन करावे ॥ १२ ॥

दशवर्णास्ततो दद्याद्ब्राह्मणाय वरानने ! ।
एवं कृते न संदेहो वरः पुत्रः प्रजायते ॥१३॥
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥१४॥

हे सुमुखि ! और दशवर्णा गौवों का दान ब्राह्मण को करे । इसके करने में विचार न करे इसको करने वाला उत्तम पुत्र प्राप्त कर निःसन्देह रोग से मुक्त होता है ॥ १३-१४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे आश्लेषानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम सप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३७ ॥

सैंतीसवाँ अध्याय समाप्त ॥ ३७ ॥

अथाष्टात्रिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

गङ्गाया उत्तरे कूले मालाकारोऽवसत्पुरा ।
डेलचन्द्रेति विख्यातो महाज्ञानी गुणाकरः ॥ १ ॥

शिवजी ने कहा—प्राचीन कालमें गंगा के उत्तरीय तट पर डेलचन्द्र नामका एक माली रहता था, वह गुणी और ज्ञानी था ॥१॥

स्वकर्मनिरतो नित्यं द्विजसेवासु तत्परः ।
तस्य पत्नी विशालाक्षि ! नाम्ना चन्द्रावती शुभा ।२।

हे विशालाक्षि ! वह नित्य अपने कर्म को करने वाला, ब्राह्मणों का सेवक था और उसकी स्त्री सुशीला चन्द्रावती नामकी थी ॥२॥

गुरुदास इति ख्यातो वैश्यवर्णेषु पूजितः ।
आसीत्तस्मै तदा तेन स्वर्णं दत्तं प्रियाय व ॥३॥

और वहाँ पर वैश्यों में श्रेष्ठ एक गुरुदास नाम का वैश्य रहता था, प्रेमतः उसने माली को बहुत सा सोना दिया ॥ ३ ॥

लक्षत्रयं स्थितं स्वर्णं तस्य वैश्यपतेः प्रिये ! ।
मालाकारेण तत्सर्वं भूमौ स्थाप्य तदा प्रिये ! ॥४॥

हे प्रिये ! उस वैश्यपति के पास तीन लाख का सुवर्ण था, वह सब लेकर मालीने भूमि के अन्दर रख दिया ॥ ४ ॥

स्वयं गतः स वैश्येन सार्द्धं वेण्यां तदा प्रिये ! ।
माघे नियमतः स्नानं कृतं ताभ्यां यथाविधि ॥५॥

और वह वैश्य के साथ माघ महीने में त्रिवेणी संगम पर स्नान करने के लिये गया और दोनों नियम पूर्वक स्नान किये ॥ ५ ॥

शूद्रस्तु स्वगृहं प्राप्तो वैश्यः काश्यां समागतः ।
तत्र काश्यां विशालाक्षि ! मरणं तस्य चाभवत्॥६॥

स्नान करके माली अपने घर गया और वह वैश्य काशी चला आया तथा काशी में ही उसकी मृत्यु हो गयी ॥ ६ ॥

अविमुक्तमहातीर्थे देवदानवपूजिते ।
मम पार्श्वे समायातो धर्मक्षेत्रप्रभावतः ॥ ७ ॥

समस्तदेव तथा दानवों से पूजित और मुक्तिदायक ऐसा महातीर्थ जो काशी क्षेत्र है उसके प्रभाव से वह वैश्य मेरे लोक को प्राप्त कर मेरे समीप आया ॥ ७ ॥

मालाकारस्तु तत्स्वर्णं भुक्त्वा पुत्रस्त्रिया युतः ।
बहुवर्षगते काले मरणं तस्य चाभवत् ॥८॥

और शूद्रभी उस (वैश्य) के धन [सुवर्ण] को सपरिवार उपभोग कर वह कालान्तर में मर गया ॥ ८ ॥

तदा गन्धर्वनगरे बहुवर्षसहस्रकम् ।
पत्न्या सह वरारोहे भुक्तं वै स्वर्गजं फलम् ॥ ९ ॥

हे वरारोहे ! मरने के बाद वह स्त्री के सहित गन्धर्व नगर में कई हजार वर्ष स्वर्ग सुख भोग किया ॥ ९ ॥

ततो बहुगते काले मानुषत्वमवाप्तवान् ।
धनाढ्यो गुणवान्भोक्ता देवब्राह्मणतत्परः ॥१०॥

इस प्रकार बहुत समय व्यतीत हो जाने पर फिर मनुष्य शरीर से उत्पन्न हुआ और धन तथा गुण से सम्पन्न भोग करने वाला देवता और धन तथा गुणों का सेवक हुआ ॥ १० ॥

तस्य पत्नी विशालाक्षि ! पूर्वजन्मप्रसङ्गतः ।
पुनर्विवाहिता देवि ! पतिसेवासु तत्परा ॥ ११ ॥

हे देवि ! पूर्वजन्म के संस्कार से उसकी वही स्त्री फिर उसके साथ विवाही गयी और वह पति की आज्ञाकारिणी हुई ॥ ११ ॥

पुष्पं च जायते देवि ! मासि मासि निरन्तरम् ।
पुत्रो न जायते देवि ! कन्यका खलु जायते ।
यतो वैश्यस्य वै स्वर्णं न दत्तं पूर्व जन्मनि ॥१२॥

वह प्रत्येक महीने पुष्पवती (रजस्वला) होती थी किन्तु पुत्र

नहीं होते थे केवल कन्या ही पैदा होती थीं कारण कि जन्मान्तर में वैश्यका सुवर्ण लेकर नहीं दिया ॥ १२ ॥

तत्कर्मणः फलाद्देवि ! पुत्रो नैव प्रजायते ।
तस्य शान्ति प्रवक्ष्यामि शृणु देवि यथार्थतः ॥१३॥

हे देवि ! जिस कर्म के फल से पुत्र नहीं हुआ उसकी अब यथार्थ शान्ति कहता हूँ, उसे सुनो ॥ १३ ॥

गृहद्रव्यषडंशेन पुण्यं कार्यं च कारयेत् ।
हेम्नो दशपलस्यापि वैश्यं कृत्वा प्रयत्नतः ॥१४॥

अपने घर के द्रव्य का छठवाँ भाग पुण्य कार्य में व्यय करे तथा दशपल सुवर्ण की प्रतिमा बनवावे ॥ १४ ॥

पूजयित्वा विधानेन ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ।
षडङ्गजातवेदानां पाठं वै कारयेत्ततः ॥ १५ ॥

और उसका विधिवत् पूजन करके ब्राह्मण को देवे, इसके बाद षडङ्ग वेद का पाठ करावे ॥ १५ ॥

जीर्णोद्धारं ततो देवि ! वापिकां कूपमेव च ।
एवं कृते न सन्देहः पुत्रो भवति नान्यथा ॥१६॥
रोगस्तस्य निवर्तेत धनं च बहु जायते ॥ १७ ॥

टूटे फूटे बावली और कुओं आदि का मरम्मत करावे तो पुत्र प्राप्त हो, इसके करने में सन्देह न करे और ऐसा करने वाला रोग से मुक्त होकर धन सुख भोग करे ॥ १६-१७ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे आश्लेषानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामाष्टात्रिंशोऽध्यायः ॥ ३८ ॥

अड़तीसवाँ अध्याय समाप्त ॥ ३८ ॥

अथैकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अयोध्यानगरी श्रेष्ठा सर्वदेवसुपूजिता ।
यस्यां प्रवेशमात्रेण सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ १ ॥

शिवजी बोले—कि अयोध्या पुरी को सब देवताओं ने श्रेष्ठ और पूजनीय माना है, जिसमें प्रवेश मात्र से ही मनुष्य सब पापों से मुक्त हो जाता है ॥ १ ॥

तस्यास्तु पश्चिमे देवि ! योजनानां दशोपरि ।
लक्ष्मणाख्यं पुरं यत्र वसन्ति बहवो जनाः ॥२॥

हे देवि ! उस अयोध्या पुरी से पश्चिम दिशा में दस योजन याने चालीस कोश की दूरी पर लक्ष्मणपुर ❀ नाम का नगर था जहाँ पर बहुत लोग निवास करते थे ॥ २ ॥

तन्मध्ये शूद्र एको हि कैवर्तो धनधान्यवान् ।
डालेति नाम विख्यातस्तस्य पत्नी च केशवी ॥३॥

उसके मध्य में एक कैवर्त (मलाह) भी रहता था, वह धनिक और डाल नामक था उसकी स्त्री केशवी नामकी थी ॥ ३ ॥

तेन व्यापारतो देवि ! धनं च बहु संस्थितम् ।
मांसं प्रभुज्यते नित्यं मांसं हि बहुधा प्रियम् ॥ ४ ॥

हे देवि ! उसने अपने व्यापार द्वारा बहुत सा धन एकत्रित किया वह मांस प्रेमी होने के कारण नित्य मांसको खाता था ॥ ४ ॥

निर्दयः सर्वजन्तूनां कच्छपानां विशेषतः ।
एवं बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्किल ॥ ५ ॥

वह सब जन्तुओं को निर्दयता के साथ पकड़ लेता और कछुओं को तो विशेष करके पकड़ता था, इस प्रकार समय बीत जाने पर उसकी मृत्यु हो गयी ॥ ५ ॥

यमदूतैर्महाघोरे निदिष्टश्च यमाज्ञया ।

❀ जिसे आजकल लखनऊ कहा जाता है ।

षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ६ ॥

यमराज की आज्ञा से उनके दूत ले जाकर कठिन नरक में छोड़ दिये और साठ हजार वर्ष तक नरक यातना भोग किया ॥६॥

नरकान्निःसृतो देवि ! दर्दुरत्वं तथा गतः ।
ऋक्षत्वं च ततो देवि ! मानुषत्वं ततोऽलभत् ॥७॥

हे देवि ! वह नरक से निकलने के बाद क्रमशः मेढक, ऋक्ष (भालू) इन योनियों को भोगता हुआ मनुष्य शरीर प्राप्त किया॥७॥

पाण्डुरोगेण संयुक्तो वंशो नैव तु जीवति ।
कन्याश्च बहवो जाता विधवा व्यभिचारिकाः ॥८॥

और पाण्डु (जलोदर) रोग से ग्रसित मृत सन्तान वाला हुआ तथा उसे बहुत कन्यायें उत्पन्न हुईं किन्तु विधवा और व्यभिचारिणी हुईं ८

अपत्यानां निरोधश्च पुत्रत्वसमये सति ।
अस्य पुण्यं प्रवक्ष्यामि यथा पापात्प्रमुच्यते ॥९॥

और युवावस्था में ही सन्तान का निरोध हो गया, अब उस पाप से मुक्त होने के लिये पुण्य को कहता हूँ ॥ ९ ॥

षडंशं ब्राह्मणे दानं श्रीविष्णोः पूजनं तथा ।
विष्णोरराट्मन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत ॥१०॥

अपने धन का छठवाँ भाग ब्राह्मण को दान दे, विष्णु भगवान् का पूजन तथा विष्णोरराट्—इस मंत्र का एक लाख जप करावे ॥१०॥

एवंकृते न सन्देहो वंशो भवति नान्यथा ।
रोगाश्च विलयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥११॥

इस विधि को करने से अवश्य पुत्र की प्राप्ति होवे और रोग भी निवृत हो जायें, इसके करने में विचार न करे ॥ ११ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे
आश्लेषानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं
नामैकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ३९ ॥

उन्तालीसवाँ अध्याय समाप्त ॥३९॥

अथ चत्वारिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

पुरा देवि शुभं ख्यातं पुरं मङ्गलनामकम् ।
तत्र वैश्यो वसत्येको धनधान्यसमन्वितः ॥ १ ॥

शिव जी कहे—हे देवि ! प्राचीन समय में मंगल नाम का एक ग्राम था जिसमें एक धनिक वैश्य निवास करता था ॥ १ ॥

तस्य नाम समाख्यातं मङ्गलं देवि ! वै शुभम् ।
तस्य पत्नी विशालाक्षी सुन्दरी सुखदायिनी ॥ २ ॥

हे देवि ! उसका नाम भी मङ्गल था और उसकी स्त्री बड़े नेत्रवाली (मृगनयनी) सुन्दरी और सुख देने वाली थी ॥ २ ॥

विष्णुभक्तिरतो नित्यं गुरुब्राह्मणसेवकः ।
आचारो नियतश्चैव क्रयविक्रयतत्परः ॥ ३ ॥

वह (वैश्य) सदैव विष्णु की पूजा, गुरुजनों तथा ब्राह्मणों की सेवा करने वाला अपने आचार में नियत अर्थात् अपने धर्म के अनुसार विक्रय (वैश्य कर्म) को करता था ॥ ३ ॥

एकदा तु गृहे देवि ! मित्रं तस्य समागतम् ।
आदरं बहुधा कृत्वा भोजयामास शास्त्रतः ॥ ४ ॥

हे देवि ! एक समय उसके घर उसका मित्र आया, तब उसने शास्त्र के कहे हुए नियम द्वारा अतिथि सत्कार कर भोजन कराया ।४।

स्वर्णदानं ततो लक्षमुद्रादानं तु तत्प्रिये ! ।
दत्तं वैश्येन भो देवि ! ब्राह्मणाय स्वशान्तये ॥५॥

और सुवर्ण सहित एक लाख रुपये का दान उस (आगत) ब्राह्मण को वैश्य ने अपने शान्ति के लिये दिया ॥ ५ ॥

ब्राह्मणेनापि तत्सर्वं स्थापितं तस्य वै गृहे ।
ततोऽगात्तीर्थयात्रार्थं वाराणस्यां वरानने ! ॥६॥

हे वरानने ! ब्राह्मण भी उसका दिया हुआ सब द्रव्य उसी के यहाँ रख कर तीर्थाटन करने के लिये काशी चला गया ॥ ६ ॥

तस्य मृत्युरभूद्देवि ! काश्यां चैव स्वकर्मतः ।
बहुकाले गते देवि ! वैश्यो दारिद्र्यपीडितः ॥७॥

हे देवि ! और निज कर्मानुसार काशी में ही उस (ब्राह्मण) की मृत्यु हो गयी बहुत समय बीत गया और वैश्य भी जब दारिद्रता से पीड़ित हुआ ॥ ७ ॥

पुत्रदारैश्च संयुक्तस्तस्य द्रव्यं तदा प्रिये ।
भुक्तं सर्वं तदा देवि स्वदत्तं चैव पुण्यदम् ॥८॥

तब सपरिवार ब्राह्मण का रखा हुआ सब द्रव्य अपने खर्च में लगाया और उसका उपयोग किया ॥ ८ ॥

वृद्धत्वे च पुनर्जाते तस्य मृत्युरभूत्किल ।
अयोध्यामरणात्तस्य स्वर्गवासस्ततोऽभवत् ॥ ९ ॥

फिर वृद्धावस्था आने पर उसकी मृत्यु हो गयी तथा अयोध्या पुरी में मरने के कारण उसे स्वर्ग प्राप्त हुआ ॥ ९ ॥

बहुवर्षसहस्राणि विष्णुलोके वरानने ! ।
भुक्त्वा बहुविधं भोगं ततः पुण्यक्षयेऽनघे ॥१०॥

हे सुमुखि ! वैकुण्ठ में कई हजार वर्ष तक उत्तम सुखों को भोग किया और पुण्य नष्ट हो जाने पर ॥ १० ॥

मृत्युलोके भवेज्जन्म धनधान्यसमन्वितः ।
विष्णुपूजारतो नित्यं ब्रह्मणे भक्तिरुत्तमा ॥११॥

मर्त्यलोकमें धन धान्यादिसे सम्पन्न जन्म लिया और नित्य विष्णु कीपूजा में तत्पर तथा ब्राह्मण में उत्तम निष्ठा रखने वाला हुआ ।११।

मित्रद्रव्यं स्वयं दत्त भुक्तं तेन ततः प्रिये ! ।
पुत्रोत्पत्तिः प्रथमतस्तस्य वै मरणं भवेत् ॥१२॥

हे प्रिये ! स्वतः मित्र को दिये हुए धन का उसने अपने आप

उपभोग किया था जिससे कि पुत्र उत्पन्न होकर फिर मर गया ।१२।

पुनः पुत्रो न जायेत काकवन्ध्या ततः प्रिये ! ।
शरीरे कफवातादिरोगाश्च विविधास्तथा ॥१३॥

इसके बाद कोई दूसरा पुत्र नहीं उत्पन्न हुआ और उसकी स्त्री काकवन्ध्या के समान होगयी, तथा वह भी कफ, वातादि त्रिदोषों से पीड़ित हो गया ॥ १३ ॥

वृद्धत्वं च तथा तस्य जायते नात्र संशयः ।
तत्पापशमनार्थं च पुण्यं शृणु वरानने ! ॥१४॥

जिससे कि उसे वृद्ध होने में विलम्ब नहीं लगा, हे वरानने ! अब उस पाप की शान्ति को कहता हूँ सुनो ॥ १४ ॥

षडंशं च ततो दानं ब्राह्मणाय वरानने ! ।
गायत्रीमन्त्रजाप्यं च लक्षमेकं प्रयत्नतः ॥१५॥

हे वरानने ! गृह के धन का छठवाँ भाग ब्राह्मण को दान करे और गायत्री मंत्र का एक लाख जाप करावे ॥ १५ ॥

हवनं विधिवत्कुर्यात्तर्पणं मार्जनं तथा ।
गामेकां कपिलां दद्यात्स्वर्णश‍ृङ्गीं सहाम्बराम् ॥१६॥

फिर इसके दशमांश विधिवत् हवन, तर्पण और मार्जन कराकर स्वर्ण मढ़ी सींगवाली वस्त्र के सहित कपिला गौका दान करे ॥१६॥

दद्यात्प्रयत्नतो देवि ! ब्राह्मणाय महात्मने ।
तिलधेनुं ततो दद्यात्पात्रं वस्त्रं तथा प्रिये ! ॥१७॥

हे प्रिये ! कर्मनिष्ठ शुद्धात्मा ब्राह्मण को तिल धेनु पात्र और वस्त्र विधिपूर्वक दान देवे ॥ १७ ॥

हरिवंशश्रुतिर्ब्रह्मदम्पत्योः पूजनं चरेत् ।
एवंकृते ततो देवि पुनः पुत्रः प्रजायते ॥ १८ ॥

हरिवंश कथा का श्रवण और विधिवत् ब्राह्मण ब्राह्मणी का पूजन करे तो फिर पुत्र उत्पन्न हो ॥ १८ ॥

रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा॥१६॥

और सब रोग निवृत्त हो जावें, इस उपरोक्त विधि को करने में सन्देह न करे॥ १६ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे मघानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४० ॥

चालीसवाँ अध्याय समाप्त ॥ ४० ॥

अथैकचत्वारिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अयोध्यानगराद्देवि ! योजनोपरि वल्लभे ! ।
दक्षिणे नन्दिनिग्रामे वसन्ति बहवो जनाः ॥ १ ॥

शिवजी ने कहा—हे देवि ! अयोध्यापुरी से एक योजन (चार कोश) की दूरी पर दक्षिण दिशा में स्थित नन्दि नामक ग्राम में जन समुदाय निवास करता था ॥ १ ॥

द्विजस्तत्र वसत्येको मद्यवेश्यारतः सदा ।
परस्त्रीलम्पटो नित्यं मद्यमांसरतस्तदा ॥ २ ॥

जिसमें एक ब्राह्मण भी वसता था जो कि नित्य ही मद्य-पानवेश्यागमनऔर मांससेप्रेम करनेवालाअर्थात् मांसाहारीथा॥२॥

नामतो मित्रशर्मेति तस्य पत्नी तु कर्कशा ।
प्रत्यहं द्यूतकारणे व्ययं कुर्याद्दिने दिने ॥ ३ ॥

और उसका नाम मित्रशर्मा था, तथा उसकी स्त्री कर्कशा थी, वह नित्य प्रति जुए में बहुत व्यय किया करता था ॥ ३ ॥

एवं बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्पुरा ।
पश्चान्मृता तु तत्पत्नी कर्कशा दुःखदायिनी ॥ ४ ॥

इस प्रकार बहुत दिन के बाद उसकी मृत्यु हो गयी और बाद को दुःखदायिनी उसकी कर्कशा स्त्री भी मर गयी ॥ ४ ॥

यमस्य किङ्करैरेव निक्षिप्तो नरकार्णवे ।
सप्ततिर्वै सहस्राणि वर्षाणि सुरवल्लभे ! ॥ ५ ॥
भुक्तं दुःखं नरकजं दम्पतीभ्यां तदा शिवे ।
ततः पापक्षये देवि ! शुनो योनिरभूत्पुरा ॥ ६ ॥

हे सुरवल्लभे ! तत्पश्चात् यमाज्ञा से उनके दूतोंने उसे नरक-समुद्र में छोड़ दिया, वहाँ सत्तर हजार वर्षतक नरक यातनभोगनेके पश्चात् दोनों स्त्री-पुरुष पाप नष्ट होने पर कुत्ते की योनि में उत्पन्न हुए ।५-६।

शुनो योनिं ततो भुक्त्वा शूकरो निर्जने वने ।
मानुषस्य पुनर्योनिं मध्यदेशे ततोऽलभत् ॥ ७ ॥

और कुत्तेकी योनि भोगने के बाद फिर निर्जन वनमें शूकरकी योनि पाये, उसके बाद मध्य देश मेंमनुष्य योनिको प्राप्त किया।।७।।

नन्दिग्रामफलाद्देवि धनधान्यसमन्वितः ।
परस्त्रीलम्पटाद्देवि पादपीडा प्रजायते ॥ ८ ॥

नन्दिग्राम में मृत्यु होने से धनादि से सम्पन्न और पर स्त्री गमन दोष से पाँव रोग से प्रपीडित हुआ ॥ ८ ॥

मद्यपानफलाद्देवि गर्भपातः पुनः पुनः ।
बह्व्यः कन्याः प्रजाताश्च बहुस्त्रीगमनात्प्रिय ! ॥९॥

हे देवि ! मद्यपान के दोष से बार-बार गर्भपात हुआ और बहुत स्त्रियों के साथ रमण करनेसे विशेष कन्या ही उत्पन्त हुई ॥९॥

पुत्रस्य मरणं देवि जातं वेश्याऽतिसङ्गमात् ।
पूर्वजन्मकृतं पापं पुण्यं च गिरिजे वरे ! ॥ १० ॥
मानुषैर्भुज्यते सर्वं मृत्युलोके सुरेश्वरि ! ।
अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि यथार्थं शृणु भामिनि! ॥ ११ ॥

हे गिरिजे ! वेश्या-गमन दोषसे पुत्र की मृत्यु हुई, क्योंकि पूर्व

जन्म के किये पाप तथा पुण्य का मनुष्य सब मृत्यु लोक में ही भोगतेहैं, अबइसकीशान्ति सम्यक् प्रकारसेकहताहूँ सुनो ॥१०११॥

गृहवित्ताष्टमं भागं ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥ १२ ॥

घर के धन का आठवाँ भाग दान रूप में ब्राह्मण को समर्पण करे ॥ १२ ॥

वापीकूपतडागेषु जीर्णोद्धारः प्रयत्नतः ।
माघकार्त्तिकवैशाखे श्रावणे च विशेषतः ॥ १३ ॥

बावली, कुआँ, पोखरा (तालाब) इनका जीर्णोद्धार करावे और कातिक, माघ, वैशाख, तथा श्रावण इन महीनों में ॥१३॥

प्रत्यहं भोजयेद्विप्राञ्छ्रोत्रियान्वेदपारगान् ।
गायत्रीजातवेदाभ्यां द्विलक्षजपमाचरेत् ॥ १४ ॥

नियम से प्रति दिन वेदपरायण श्रोत्रियब्राह्मणों को भोजन करावे, तथा गायत्री मन्त्र और जातवेद इन मन्त्रों से दो दो लक्ष जप करावे ॥ १४ ॥

जपतो हवनं तद्वत्तर्पणं मार्जनं तथा ।
महाभारतमाख्यानं श्रुत्वा पापं व्यपोहति ॥ १५ ॥

तथा उसके दशांश हवन, तर्पण और मार्जन कराकर नियम पूर्वक महाभारत के आख्यानों को सुने तो सब पाप नष्ट हों॥१५॥

दशवर्णाः प्रदातव्याः पूर्वपापविशुद्धये ।
एवंकृते वरारोहे सर्वरोगः प्रणश्यति ॥ १६ ॥

और पूर्व पाप के शमनार्थ दशवर्णा गौवोंका दान करे,इस प्रकार के विधान को करने से रोग समूल नष्ट हो जाते हैं ॥१६॥

पुत्रो भवति भो देवि ! वन्ध्यात्वं च प्रणश्यति ।
काकवन्ध्या च या नारी पुनः पुत्रमवाप्नुयात् ॥१७॥

हे देवि ! फिर पुत्र उत्पन्न होता है तथा वन्ध्यात्व दोष निवृत्त हो जाता है और काकवन्ध्या भी पुत्र प्राप्त करती है ॥ १७ ॥

कन्यका नैव जायन्ते धनवृद्धिर्भवेत्किल ।
पूर्वजन्मकृतं पापं क्षयं याति न चान्यथा ॥१८॥

और कन्या नहीं होती, धन की भी वृद्धि होती है तथा पूर्वजन्म कृत पाप भी नष्ट हो जाता है इसमें संशय नहीं है ॥१८॥

इह जन्मनि सुखं भुंक्ते पुनः पापं न बाधते ॥१९॥

इस जन्म में सुख भोग करता है, उसे पाप बाधा नहीं सताती॥१९॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसम्वादे मघानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४१ ॥

एकतालीसवाँ अध्याय समाप्त ॥ ४१ ॥

अथ द्विचत्वारिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अयोध्यायां विशालाक्षि ! कुलालो वसति प्रिये ! ।
मथुराग्राममध्ये वै स्वकर्मनिरतः सदा ॥ १ ॥

शिवजी बोले—हे प्रिये ! अयोध्या पुरी के मथुरा नामक ग्राम में एक कुम्भकर (कुम्हार) अपने कर्म को करता हुआ निवास करता था ॥ १ ॥

पात्रं वै मृन्मयं देवि ! प्रकरोति तदा प्रिये ! ।
तस्य मित्रं समायातो ब्राह्मणो वेदपारगः ॥ २ ॥

और वह मिट्टी के पात्रों को बनाता था, उसका मित्र एक वेदपाठी ब्राह्मण आया ॥ २ ॥

तस्य स्त्री च महादुष्टा ब्राह्मणी व्यभिचारिणी ।
कुलालेनाभवत्प्रीतिर्मैथुनं प्रकरोति सा ॥ ३ ॥

उसकी स्त्री जो ब्राह्मणी थी वह महा दुष्टा और व्यभिचारिणी थी, उसका कुम्हार के साथ प्रेम हो जाने से मैथुन कराती थी ॥३॥

ब्राह्मण्यां गमनं नित्यं बहुवर्षं निरन्तरम् ।
एवं बहुगते काले समतीते सुरेश्वरि ! ॥ ४॥

हे सुरेश्वरि ! उस कुम्हार को ब्राह्मणी के साथ निरन्तर गमन करते हुए बहुत वर्ष व्यतीत हो गये ॥ ४ ॥

कुलालस्य ततो मृत्युर्वृद्धे जाते सुरेश्वरि ! ।
पश्चात्तस्य मृता पत्नी या पुरा व्यभिचारिणी ॥५॥

और बुढ़ापा आजाने पर उस कुम्हार की मृत्यु हो गयी, पश्चात् उसकी व्यभिचारिणी ब्राह्मणी स्त्री भी मर गयी ॥ ५ ॥

यमदूतैर्महाघोरे कर्दमे नरके प्रिये ! ।
यमाज्ञया च निक्षिप्तो वर्षं लक्षत्रयं शुभे ! ॥ ६ ॥

हे प्रिये ! तब यमदूतों ने महा घोर कर्दम नरक में यमराज की आज्ञा से उसे तीन लाख वर्ष पर्यन्त रक्खा ॥ ६ ॥

पतिव्रता समायाता लक्षत्रयगते सति ।
नरकाब्धे समुद्धृत्य स्वपतिं च ततः प्रिये ! ॥ ७॥
सत्यलोके समायाता स्वपत्या सह भामिनी ।
भुक्त्वा लक्षत्रयं देवि ! भोगांश्च विविधानपि ॥८॥

तीन लाख वर्ष बीत जाने पर उसकी पतिव्रता स्त्री भी वहाँ आयी और नरक समुद्र से अपने पति का उद्धार करके साथ में स्वर्ग को ले गयी, तथा वहाँ भी अनेक प्रकार के भोगों को तीन लाख वर्ष तक भोग कर ॥ ७-८ ॥

ततः पुण्यक्षये जाते धवेन सह शोभने ! ।
मर्त्यलोके ततो जातो धनधान्ययुतस्तदा ॥ ९ ॥

जब पुण्य का क्षय हो गया तो मर्त्यलोक में धन और धान्य से युक्त दोनों ने जन्म लिया ॥ ९ ॥

पुत्रकन्याविहीनश्च मृतवत्सत्वमाप्तवान् ।
ब्राह्मण्यां गमनाद्देवि ! बहुरोगश्च जायते ॥ १० ॥

हे देवि ! सन्तान रहित और मृतवत्सत्व को प्राप्त हुए, तथा ब्राह्मणी-गमन दोष से अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न हो गये ॥१०॥

अथ शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं गिरिजे शुभे !।
सर्वस्वदानं कर्तव्यं रुद्रमंत्रजपं तथा ॥ ११ ॥

हे गिरजे ! अब इसकी शान्ति कहता हूँ तुम सुनो इसके लिये सर्वस्व दान करदे और रुद्रमन्त्र का जप करावे ॥ ११ ॥

पूजा कार्या पार्थिवानां वाटिकारोपणं तथा ।
हरिवंशश्रुतिः कार्या भूमिदानं तथैव च ॥ १२ ॥

और पार्थिवार्चन करे, वाटिका लगावे हरिवंश पुराण का श्रवण करे तथा भूमि का भी दान करे ॥ १२ ॥

गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं तथा प्रिये !।
होमं चकारयेद्देवि ! तिलधान्यादितंडुलैः ॥ १३ ॥

हे प्रिये ! गायत्री मूलमन्त्र का एक लाख जप कराकर, तिल जव, घृतादि से कुण्ड निर्माण करके हवन करे ॥ १३ ॥

कुण्डे कुर्याद् द्विजद्वारा चतुष्कोणे सुरेश्वरि !।
दशांशं हवनं देवि ! विधिवत्पापशुद्धये ॥ १४ ॥

हे देवि ! ब्राह्मण द्वारा उस कुण्ड को चतुष्कोण बनवाये और जप के दशांश हवन आदि पाप शुद्धि के लिये विधिवत् करावे ॥१४॥

दशवर्णास्ततो दद्यात्स्वर्णनिष्कं चतुष्टयम् ।
ब्राह्मणान् भोजयेच्छुद्धान्षष्टिपायसलड्डुकैः ॥ १५ ॥

इसके बाद दशवर्णा गौवों का और चार निष्क प्रमाण सुवर्ण का दान करे, फिर साठ शुद्ध ब्राह्मणों को खीर, लड्डू आदि का श्रद्धा पूर्वक भोजन करावे ॥ १५ ॥

भूमिदानं ततः कुर्यात्तिलं दद्यात्प्रयत्नतः ।
एवंकृते न सन्देहो वंशो भवति नान्यथा ॥ १६ ॥

और विधिवत् भूमि तिल का भी दान करे, इस विधि को करने से निःसन्देह पुत्रोत्पत्ति होती है ॥ १६ ॥

सर्वे रोगाः क्षयं यान्ति न च कन्यां प्रसूयते ।
काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं मृतवत्सा च पुत्रिणी ॥ १७ ॥

सब रोग नष्ट होते हैं और काकवन्ध्या तथा मृतवत्सा को भी कन्या न होकर पुत्र ही होता है ॥ १७ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे
मघानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं
नाम द्विचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४२ ॥

बयालीसवाँ अध्याय समाप्त ॥ ४२ ॥

अथ त्रयश्चत्वारिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

काञ्चीपुर्यां महादेवि ! वैश्य एकोऽवसत्पुरा ।
मेदसिन्द इति ख्यातस्तस्य स्त्री पालिका शुभा ॥ १ ॥

शिवजी बोले–हे महादेवि ! पहिले समय में काञ्चीपुरी में मेदसिन्द नाम का वैश्य तथा पालिका नाम की उसकी स्त्री निवास करती थी ॥ १ ॥

अश्वादिविक्रयं देवि ! छागपक्ष्यादिकं तथा ।
प्रत्यहं क्रियते देवि ! बहुद्रव्यस्य सञ्चयम् ॥ २ ॥

हे देवि ! वह घोड़े आदि पशुओं तथा बकरी पक्षी आदिके विक्रय व्यापार से नित्य बहुत धन एकत्रित किया करता था ॥ २ ॥

न देवान्मन्यते देवि ! पितॄन्नैव च मन्यते ।
बहुष्वहस्सु गच्छत्सु प्रमृतौ पितरौ ततः ॥ ३ ॥

वह देवता और पितरों को भी नहीं मानता था बहुत समय बीत गया तब उसके माता-पिता दोनों मर गये ॥ ३ ॥

स तयोर्नाकरोच्छ्राद्धं यत्कर्त्तव्यं सुतैः प्रिये !।
ततो बहु दिने याते बृद्धे सति वरानने ! ॥ ४ ॥

हे प्रिये ! तब जो पुत्रों का कर्त्तव्य है अर्थात् श्राद्ध आदिवहभीउसने नहींकिया, पश्चात् समयान्तर में जब उसकाबुढ़ापा आगया ॥४॥

मरणं तस्य वै जात वैश्यस्य कृपणस्य च ।
यमाज्ञया तु दूतेन कुम्भीपाके सुदारुणे ॥ ५ ॥

तब उस कृपण वैश्यका निधन हो गया और यमराज की आज्ञा से उनके दूतों ने उसे कुम्भीपाक नामक कठिन नरकमें वास दिया ॥५॥

निक्षिप्तं श्रृङ्खलैर्बद्ध्वा युगपञ्चदशं समाः ।
भुक्त्वा नरकजं दुःखं महाकृमिसमाकुलम् ॥ ६ ॥
नरकान्निःसृतो देवि ! महिषत्वं ततोऽलभत् ।
पुनर्वै व्याघ्रयोनिश्च मूषयोनिस्ततोऽभवत् ॥ ७ ॥

और उसे सीकड़ से बाँध कर पन्द्रह युग पर्यन्त रक्खे, महा कृमियों से समाकुलित नरक दुःख को भोगकर फिर क्रमशः भैंस, व्याघ्र, मूषक इन योनियों को प्राप्त किया ॥ ६–७ ॥

काकयोनिं ततो भुक्त्वा गजयोनिस्ततोऽभवत् ।
शुभे देने विशालाक्षि ! धनधान्यसमन्वितः ॥८॥

हे देवि ! इसके बाद काक और हाथी की योनि में आया, फिर उसके बाद धनादि के सहित उत्तम स्थान में मनुष्य हुआ ॥८॥

व्याधिग्रस्तोऽभवद्देवि पुत्रकन्याविवर्जितः ।
काकवन्ध्या भवेन्नारी मृतवत्सा ह्यपुत्रिणी ॥ ९ ॥

और व्याधिग्रसित अर्थात् रोग से दुखित तथा सन्तान रहित हुआ उसकी स्त्री भी काकवन्ध्या मृतसन्तान वाली हुई ॥ ९ ॥

पूर्वजन्मकृतं पापं यतः शान्तिमवाप्नुयात् ।
तत्सर्वं शृणु मे देवि ! विस्तरेण समन्वितम् ॥१०॥

हे देवि ! पूर्वजन्म का किया हुआ पाप जिससे शान्त हो वह सब वर्णन सविस्तार मुझसे सुनो ॥ १० ॥

प्रयागे नियतः स्नायी प्रतिमाघं भवेद्यदा ।
गायत्रीजातवेदाभ्यां दशायुतजपं तथा ॥ ११ ॥

नियम पूर्वक प्रत्येक माघ महिने में प्रयाग स्नान तथा गायत्री अथवा "जातवेदसे" इस मन्त्रका जप लक्ष संख्यके प्रमाण में करावे ॥ ११ ॥

भूमिदानं च वै कृत्वा ततः पुत्रः प्रजायते ।
वन्ध्यात्वं शमनं याति काकवन्ध्यात्वमप्यथ ॥१२॥

तथा भूमि का दान भी करे तो पुत्र प्राप्त हो और वन्ध्या तथा काकवन्ध्या दोष भी नष्ट हो जाता है ॥ १२ ॥

मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम् ।
सर्वे रोगाः क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥१३॥

मृतवत्सा भी उत्तम दीर्घजीवी पुत्र प्राप्त करे और सब रोग नाश को प्राप्त हों इसमें कुछ भी विचार न करे ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे
मघानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं
नाम त्रयश्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥४३॥

तैंतालीसवाँ अध्याय समाप्त ॥ ४३ ॥

अथ चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

सौराष्ट्रविषये देवि ! शोभनं नाम वै पुरम् ।
तत्र क्षत्री वसत्येको धनधान्यसमन्वितः ॥ १ ॥

शिवजी ने कहा—हे देवि ! सौराष्ट्र देश में शोभन नाम का

एक नगर था और वहाँ पर धन-धान्य से सम्पन्न एक क्षत्रिय निवास करता था ॥ १ ॥

मोहनेति च विख्यातस्तस्य पत्नी सती शुभा ।
वैश्य वृत्तरतो नित्यं व्यापारं कुरुते सदा ॥ २ ॥

और उसका नाम मोहन तथा उसकी पतिव्रता स्त्री का नाम शुभा था, वह वैश्य वृत्ति में निरत सदैव व्यापार करता था ॥२॥

व्यापारार्थं ततो देवि ! वृषभा बहुपालिताः ।
द्वौ वृषौ योजितौ देवि ! कूपे वै पतितौ प्रिये ! ॥३॥

हे प्रिये ! उसने व्यापार करने के ध्येय से बहुत बैलों को पाल रक्खा था, संयोग वश उनमें से जुड़े दो बैल कुएँ में गिर गये ॥ ३ ॥

मृतौ तौ रात्रिकालेऽपि जगाम स तदा न च ।
पापं च स न जानाति गर्वद्वारा वरानने ! ॥४॥

और उनकी मृत्यु रात्रि के समय उस कुएँ में ही हो गयी किन्तु वह क्षत्रिय न तो वहाँ पर गया और न तो गर्व से उनके मरने के दोष को ही माना ॥ ४ ॥

यत्किञ्चित्क्रियते कर्म शुभं तु कलुषं बहु ।
गुणाः स्वल्पा बहगुणाः मोहनं नाम क्षत्रिणः ॥५॥

उस मोहन नामक क्षत्रिय के शुभ कर्म तो थोड़े, परन्तु अशुभ कर्म बहुत थे, एवं उसमें अवगुण बहुत और गुण थोड़ा था ॥५॥

ततो बहुगते काले मरणं तस्य चाभवत् ।
पश्चान्मृता तस्य पत्नी महालुब्धा वरानने ! ॥६॥

पश्चात् बहुत समय बीत जाने पर उसकी मृत्यु हो गयी और बादको महालालची उसकी पत्नी भी मर गयी ॥ ६ ॥

निक्षिप्तो नरके घोरे यमदूतैर्यमाज्ञया ।
षष्टिर्वर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ७ ॥

मरणान्तर यमाज्ञा से उनको दूतोंने घोर नरक में लेजाकर डाल दिया और साठ हजार वर्ष नरकयातना भोगनेके बाद ॥ ७॥

पुनः सरटयोनिश्च वृषयोनिस्ततोऽभवत् ।
मानुषत्वं ततो देवि ! मध्यदेशे वरानने ॥ ८ ॥

फिर गिरगिट की योनि बाद को बैल की योनि पाया, इसके बाद फिर मध्यदेश में मनुष्य शरीर प्राप्त किया ॥ ८ ॥

वृषयोश्च पुरा मृत्युर्न कृतं पापमोचनम् ।
तस्माद् व्याधिः समुत्पन्ना पूर्वकर्मप्रयत्नतः ॥ ९ ॥

पूर्व जन्म में बैलों की मृत्यु होने पर भी पाप की निवृत्ति नहीं कियाजिससे कि शरीर में अनेक प्रकार की व्याधि उत्पन्नहोगयी ॥९॥

मुखरा याऽभवत्पत्नी पुरा च प्रबला प्रिये ! ।
पुनर्विवाहिता देवि ! तद्रूपा मुखरा तथा ॥ १० ॥

हे प्रिये ! पूर्व में जो उसकी झगड़ालू स्त्री थी, वही फिर पूर्व संस्कारसे उसके साथ विवाही गयी और तद्रूप ही हुई ॥ १० ॥

तत्पापशमनार्थाय षडंशं दानमाचरेत् ।
गायत्रीमूलमन्त्रेण पञ्चलक्षजपं यदा ॥ ११ ॥

उस पाप के शमनार्थ घरके धन का छठवाँ भाग दान करे और गायत्री के मूल मन्त्र से पाँच लक्ष जप करावे ॥ ११ ॥

ततः पापं क्षयं याति शीघ्रं पुत्रो भवेत्प्रिये ! ।
अपुत्रा मृतवत्सा च काकवन्ध्या च या शिवे ॥१२॥
पुत्रिण्यश्चैव ताः सर्वा नात्र कार्या विचारणा ।
रोगाः सर्वे विनश्यन्ति शीघ्रमेव न संशयः ॥१३॥

तो सब पाप नष्ट हो जायँ और शीघ्र पुत्र होवे, हे शिवे ! अपुत्र वाली, मृतवत्सा और काकवन्ध्या ये सब पुत्रवती होती हैं तथा सब रोग भी शीघ्र ही विनष्ट हो जाते हैं, इसमें सन्देह नहीं ॥ १२—१३ ॥

इतिश्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे
पूर्वानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं
नामचतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥४४॥

चौवालीसवाँ अध्याय समाप्त ॥ ४४ ॥

अथ पञ्चचत्वारिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

कर्णाटकविषये देवि ! काष्ठकारोऽवसत् पुरा ।
छिनत्ति सर्वकाष्ठानि व्ययं कृत्वा दिने दिने ॥ १ ॥

शिवजी बोले—हे देवि ! प्राचीन समय में एक बढ़ई कर्णाटक देश में निवास करता था, वह नित्यप्रति लकड़ियों को काटता और बेचता था ॥ १ ॥

एका वै गोत्रजा कन्या तस्यां च मैथुनं कृतम् ।
ततो बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्पुरा ॥ २ ॥

उसने अपने गोत्र की एक कन्या के साथ रमण किया, बाद को बहुत समय गत हो जाने पर उसकी मृत्यु होगयी ॥२॥

पश्चात्तस्य मता नारी कुलटा व्यभिचारिणी ।
यमदूतैर्महाघोरै नक्षिप्तो नरकार्णवे ॥ ३ ॥

बाद को उसकी कुलटा व्यभिचारिणी स्त्री भी मर गयी, तब यमदूतों ने उन्हें महाघोर नरक समुद्र में डाल दिया ॥ ३ ॥

यमाज्ञया महादेवि ! भुक्त्वा नरकयातनाम् ।
षष्टिवर्षसहस्राणि नरके पच्यते च सः ॥ ४ ॥

हे देवि ! और यम की आज्ञासे नरक—यातनायें भोगते हुए साठ हजार वर्ष पर्यन्त नरक में वास किये ॥ ४ ॥

कुक्कुटत्वं ततो जातं चक्रवाकस्ततोऽभवत् ।
मानुषत्वं ततो जातं देशे पूज्यतमे तथा ॥ ५ ॥

नरक से निकलकर कुक्कुट (मुर्गे) की योनि प्राप्त कर फिर चकवे की योनि में और उसके बाद उत्तम देश में मनुष्य शरीर धारण किया ॥ ५ ॥

शूद्रसेवारतो नित्यं शूद्रस्नेहेन यन्त्रितः ।
पितुर्मातुर्भवेद्वैरं महिष्याः क्रयविक्रये ॥ ६ ॥

और शूद्र से प्रेम हो जाने से नित्य शूद्रकी सेवा में संलग्न होकर माता-पिता से द्वेष कर लिया और भैंसों का क्रय विक्रय करता था ॥ ६ ॥

पूर्वजन्मनि भो देवि ! कृतं वृक्षस्य छेदनम् ।
तस्माद्रोगः समुत्पन्नः कटिशूलं निरन्तरम् ॥ ७ ॥

हे देवि ! उसने पूर्वजन्म में वृक्षों का छेदन किया था उस दोष से उसके शरीर में रोग उत्पन्न हो गया और सर्वदा कटि (कमर) में शूल बना रहता था ॥ ७ ॥

गोत्रकन्याभिगमनं यत्कृतं पूर्वजन्मनि ।
तेन पापेन भो देवि ! पुत्रस्य मरणं भवेत् ॥ ८ ॥

और पूर्वजन्म में अपने गोत्र की कन्या के साथ रमण किया था, उस पाप से उसके पुत्र का निधन हुआ ॥ ८ ॥

गर्भस्रावी ततो भार्या काकवन्ध्यात्वमाप्नुयात् ।
बह्वयः कन्यास्ततो जाताः कष्टं प्राप्नोत्यहर्निशम् ॥९॥

उसकी स्त्री का गर्भस्राव भी हो गया और काकवन्ध्या हो गयी, पुनः बहुत सी कन्यायेंहुईंतथा प्रतिदिन कष्ट पाता रहा ॥९॥

अतः शान्तिं प्रवक्ष्यामि पूर्वपापविशुद्धये ।
गृहवित्ताष्टमं भागं ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥ १० ॥

इसलिये पूर्वकृत पाप शुद्धयर्थ शान्ति को कहता हूँ अपने घर के धन का आठवाँ भाग ब्राह्मण को समर्पण करदे ॥ १० ॥

गायत्रीलक्षजाप्येन गोदानेन विशेषतः ।

वाटिकारोपणेनापि गृहदानेन वै शिवे ! ॥ ११ ॥
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ।
पूर्वजन्मकृतं पापं क्षयं याति न संशयः ॥ १२ ॥

हे शिवे ! गायत्री मंत्रका एक लक्ष जप और गोदान वाटिकादि लगाना, गृहदान इन सब का विशेष महत्व है इसे बिना विचारे ही करे, क्योंकि इसके करने से सब रोग तथा पाप निःसन्देह दूर हो जाते हैं ॥ ११-१२ ॥

जायन्ते बहवः पुत्राः शूरा कीर्तिविवर्द्धनाः ।
कन्यका नैव जायन्ते काकवन्ध्या तु शाम्यति ॥ १३ ॥

और कीर्तिवान् शूर वीर पुत्रों की उत्पत्ति होती है, कन्यायें नहीं होतीं तथा काकवन्ध्या दोष भी निवृत्त हो जाता है ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे
पूर्वानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं
नाम पञ्चचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४५ ॥

पैंतालीसवाँ अध्याय समाप्त ॥ ४५ ॥

अथ षट्चत्वारिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच

सिंहले वै महाद्वीपे तत्र सिंहं पुरं शिवे ! ।
कायस्थो वैष्णवोप्येकष्टीकारामेति नामतः ॥ १ ॥

शिवजी ने कहा—कि हे शिवे ! सिंहलमहाद्वीप में और सिंह नामक ग्राम में एक विष्णु-भक्त टीकाराम नाम का कायस्थ निवास करता था ॥ १ ॥

तस्य भार्या विशालाक्षी सूर्या नाम्नी शुभा सती ।
आतिथ्यकरणे शक्ती देवतात्यन्तपूजिका ॥ २ ॥

उसकी स्त्री कमल सरीखे नेत्रवाली सूर्या नाम की थी, वह अतिथि सत्कार को करनेवाली अत्यन्त देव पूजिका थी ॥२॥

कार्त्तिके माघवैशाखे दीपदानं करोति सा ।
कदाचिद्दैवयोगेन तीर्थयात्रार्थमागता ॥ ३ ॥

वह कार्तिक, माघ तथा वैशाख महीनों में दीपदान किया करती थी, वह संयोगवश किसी समय तीर्थाटन के उद्देश्य से तीर्थ को गयी ॥ ३ ॥

स्वर्णकारो महादेवि ! बहुस्वर्णेन संयुतः ।
आगतः सिंहनगरे तत्र वासमकारयत् ॥ ४ ॥

हे महादेवि ! और सिंह नामक नगर में एक स्वर्णकार (सोनार) बहुत सुवर्ण लिये हुये आकर रहने लगा ॥ ४ ॥

प्रीतिः परस्परं चैव कायस्थस्वर्णकारयोः ।
स्वर्णकारस्य कन्यैका सुन्दरी कमलानना ॥ ५ ॥
कायस्थस्याभवद्भार्या दैवयोगात्तदा शिवे ! ।
स्वर्णकारस्य यत्सर्वं स्थितं तेन हृतं धनम् ॥ ६ ॥

हे शिवे ! वहां पर कायस्थ तथा सोनार में परस्पर प्रीति भी हो गई और सोनार के कमल सदृश मुखवाली सुन्दर एक कन्या थी जोकि कायस्थ की स्त्री हुई, तथा सोनार के पास जितना धन था वह भी ले लिया ॥ ५–६ ॥

द्रव्यक्षयमथो ज्ञात्वा स्वर्णकारो मृतः पुरा ।
पुत्रदारादिकं त्यक्त्वा कायस्थश्च तदा शिवे ॥७॥
तया सार्द्धं रमत्येको पापात्मा कमलानने ।
एवं बहुगते काले कायस्थोऽपि मृतः प्रिये ! ॥८॥

इसलिये सोनार अपने धनका नाश जान दुःखित होकर मर गया । तब पापात्मा कायस्थ भी स्त्री पुत्रादि को छोड़ केवल

उस कन्या के साथ रमण करने लगा, इस प्रकार बहुत समय बीत जाने पर कायस्थ की भी मृत्यु होगयी ॥ ७-८ ॥

कुम्भीपाकेऽभवद्वासो वर्षलक्षत्रयं तथा।
पुनः कर्मवशाद्देवि! मृगयोनिस्ततोऽभवत् ॥ ९ ॥

हे देवि! कुम्भीपाक नरक में तीन लाख वर्ष के लिये उसे वास मिला और नरक भोगने के बाद कर्मानुसार फिर मृग की योनि मिली ॥ ९ ॥

मानुषत्वं वरारोहे! पुनः प्राप्तो महीतले।
धनधान्यसमायुक्तो वंशो नैव प्रजायते ॥१०॥

उसके बाद फिर वह धनादि से युक्त मनुष्य शरीर प्राप्त किया किन्तु सन्तान रहित हुआ ॥ १० ॥

बहुरोगसमायुक्तो ज्वरोतीव मृतेः समः।
पुत्राणां मरणं देवि! शीतलाद्यैरुपद्रवैः ॥११॥

अनेक प्रकार के रोग तथा ज्वर तो इस प्रकार आता था मानो मरण तुल्य और शीतला के प्रकोप से उसके पुत्र भी मर गये ॥ ११ ॥

पूर्वजन्मनि भो देवि! परस्त्रीगमनं कृतम्।
त्यक्ता विवाहिता नारी पुत्रकन्यासमन्विता ॥१२॥
तत्पापेनैव भो देवि! पुत्रादीनां विनाशनम्।
गर्भनाशो भवेद्देवि! वन्ध्यात्वं जायते शिवे ॥१३॥

हे देवि! जो पूर्वजन्म में परस्त्री के साथ रमण किया तथा पुत्र कन्या सहित अपनी स्त्री का त्याग किया था उस पाप से पुत्रों का निधन, और गर्भपात तथा स्त्री वन्ध्या हुई ॥१२-१३॥

काकवन्ध्या भवेन्नारी सुखं नैव प्रजायते।
स्वल्पयोनिः कृशाङ्गश्च कथाश्रवणतत्परः ॥१४॥

और उसकी स्त्री काकवन्ध्या हो गई जिससे कि सुख कभी

नहीं हुआ और स्वल्प भोगी कृशशरीर वाला तथा कथा श्रवण में रुचि रखता था ॥ १४ ॥

विद्यादानविहीनश्च स्वकुले बहुनिष्ठुरः ।
अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि यत्कृतं पूर्वजन्मनि ॥१५॥

विद्या और दान से विहीन अपने कुल में अतिनिष्ठुर हुआ, जो पूर्व जन्म में शुभाशुभ-कर्म किया है उसकी शान्ति कहता हूँ ॥१५॥

तत्सर्वं शृणु मे देवि! यतः शुद्धिमवाप्नुयात् ।
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं वरानने ! ॥१६॥

हे देवि! जिसको करने से कल्याण हो वह सब मुझसे सुनो गायत्री मूलमंत्र से एक लक्ष जप करावे ॥ १६ ॥

हवनं तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा ।
हरिवंशश्रुतिं कुर्यात् त्रिवारावृत्तिसंख्यया ॥१७॥

और उसके दशांश हवन तर्पण तथा मार्जन करावे और तीन आवृत्ति हरिवंश पुराण को सुने ॥ १७ ॥

दशवर्णा ततो दद्यात्स्वर्णदानं विशेषतः ।
निष्कत्रयं प्रदद्याच्च ततः पापक्षयो भवेत् ॥१८॥
भोजयेद् ब्राह्मणान्षष्टितथा दद्याच्च दक्षिणाम् ।
एवं कृते विधानं च पुत्रो भवति नान्यथा ॥१९॥

तथा दशवर्णा वाली गौवों का दान और स्वर्णदान का विशेष महत्व है, अतः तीन निष्कप्रमाण सुवर्ण दान करे तो सब पाप क्षय होजायें,तथासाठब्राह्मणोंको भोजनकराकर उनकोदक्षिणा देवे। इस विधान को करने से अवश्य पुत्रकी प्राप्ति होती है ॥१८-१९॥

रोगाःसर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ।
एवं यदा न कुर्यात्तु तदा रोगाः पुनः पुनः ॥२०॥
जायन्ते नात्र संदेहः पूर्वजन्मफलात्किल ॥२१॥

और सब रोग नष्ट हो जाते हैं—इसमें संशय नहीं। यदि

इसको न करे तो बारम्बार रोग होते हैं क्योंकि दुखः तो पूर्वजन्म के फल से होता है ॥ २०-२१ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे पूर्वानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम षट्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥४६॥

छियालीसवाँ अध्याय समाप्त ॥ ४६ ॥

अथ सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

नर्मदादक्षिणे कूले ब्राह्मणो वसति प्रिये ! ।
ब्रह्मकर्मकरो नित्यं सदा वेदपरायणः ॥ १ ॥

शिवजी कहे-कि हे प्रिये ! नर्मदा के दक्षिण तट पर एक ब्राह्मण निवास करता था । वह नित्य ब्रह्मकर्म में निरत और वेद परायण था ॥ १ ॥

शंकरस्य पुरे देवि ! प्रत्यहं वेदपाठनम् ।
अर्भकान्ब्रह्मजातीयान्पाठयामास वै तदा ॥ २ ॥

हे देवि ! वह शिवपुरी में नित्य वेद पाठको करने वाला तथा ब्राह्मण के लड़कों को पढ़ाया करता था ॥ २ ॥

तस्य भार्याद्वयं चासीदेका प्रीतिमती सदा ।
विरोधिनी ततो ह्येका ज्येष्ठा भार्या तु तां त्यजेत्॥३॥

उसे दो स्त्रियाँ थीं, उनमें एक तो प्रेम करती थी और दूसरी उसके विरुद्ध थी, अतः उसका परित्याग कर दिया ॥ ३ ॥

एवं बहुगते काले ब्राह्मणस्य तदा शिवे ! ।
ततो मृत्युवशं यातस्तस्य भार्या गरीयसी ॥ ४ ॥

इसी प्रकार बहुत समय बीत जाने पर उस ब्राह्मण की मृत्यु हो गयी और उसकी स्त्री ॥ ४ ॥

चितां कृत्वा प्रयत्नेन भर्त्तुः खलु वरानने ! ।
भर्त्रा सह च भो देवि सती जाता महामतिः ॥५॥

अपने पति की विधिवत् चिता बनाकर उसके साथ सती हो गई ॥ ५ ॥

सत्यलोकस्त्वभूत्तस्य जायया सहितस्य वै ।
बहुवर्षसहस्राणि सत्यलोकेऽवसत्तदा ॥ ६ ॥

उसको स्त्री सहित स्वर्ग प्राप्त हुआ और वहाँ कई हजार वर्ष पर्यन्त निवास किया ॥ ६ ॥

ततः पुण्यक्षये जाते मर्त्यलोकेऽभवत्पुनः ।
मानुषत्वं शुभे जन्म कुले महति पूजिते ॥ ७ ॥

फिर जब पुण्य का क्षय हो गया तब मृत्युलोक में सब से पूजित, शुभ लक्षण युक्त श्रेष्ठ कुल में उत्पन्न हुआ ॥ ७ ॥

धनधान्यसमायुक्तो वंशहीनो विचक्षणः ।
पूर्वजन्मनि भो देवि भार्यात्यागः कृतस्तथा ॥ ८ ॥

हे देवि ! वह धनादि से सम्पन्न बुद्धिमान् होते हुये सन्तान हीन हुआ क्योंकि उसने पूर्वजन्म में अपने स्त्री को त्याग दिया था॥८॥

तेन दोषेण भो देवि ! ततः पुत्रो न जीवति ।
दिने दिने कुक्षिपीडा तस्य चाभिनवा भवेत् ॥ ९ ॥

उस दोष से उसकी सन्तान नहीं जीती और दिनों दिन उसकी कुक्षि में पीड़ा होती रहती थी ॥ ९ ॥

पुण्यं शृणु महादेवि ! यतः शान्तिर्भविष्यति ।
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥१०॥

हे देवि ! अब उस पुण्य को सुनो ! जिसको करने से शान्ति होगी, अपने घर के धन का छठवाँ भाग धर्मार्थ व्यय करे॥१०॥

वापीकूपतडागांश्च पथिमध्ये च कारयेत् ।
गायत्रीजातवेदाभ्यां जपं कुर्याद्विचक्षणः ॥११॥

मार्ग में बावली, कूआँ, तालाब, का निर्माण करावे और गायत्री तथा "जातवेदसे"—इन मंत्रों का जप करावे ॥ ११ ॥

होमं च तद्दशांशेन तिलतण्डुलपायसैः ।
दशवर्णाः प्रदातव्या विप्राणां भोजनं शतम् ॥१२॥

और उसके दशांश तिल, चावल खीर आदि से हवन कराकर दशवर्ण की गौवों का दान करे और सौ ब्राह्मण को भोजन करावे ॥ १२ ॥

एवं कृते न सन्देहो वंशलाभो भवेदनु ।
व्याधिश्चैव प्रमुच्येत सत्यं सत्यं वरानने ! ॥१३॥

इस विधान के बाद अवश्य सन्तान की प्राप्ति तथा व्याधियों का नाश होता है ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे-
पूर्वानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं
नाम सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४७॥

सैंतालीसवाँ अध्याय समाप्त ॥ ४७ ॥

अथाष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अयोध्यानगरे देवि ! वैश्योऽवात्सीत्सुरेश्वरि ।
स्वकर्मनिरतो दक्षो विष्णुभक्तिपरायणः ॥ १ ॥

शिवजी ने कहा—हे देवि ! अयोध्यापुरी में एक वैश्य रहता था, वह अपने कर्म में प्रवीण और विष्णु भक्त था ॥ १॥

धनधान्यसमायुक्तो विप्रसेवासु तत्परः ।
पत्नी तस्य वरारोहे सुन्दरी च पतिव्रता ॥ २ ॥

वह धनधान्य से सम्पन्न था तथा ब्राह्मणों की सुश्रूषा में तत्पर रहता था। उसकी स्त्री सुन्दर और पतिव्रता थी ॥ २ ॥

कश्चिन्मित्रं प्रियस्तस्य ब्राह्मणो वेदपारगः ।
प्रत्यहं निकटे तस्य बहुस्वर्णमुपार्जयेत् ।
ब्राह्मणोऽप्यात्मनः स्वर्णं ददौ वैश्याय वै शिवे ॥३॥

हे शिवे ! उसका एक वेदज्ञ ब्राह्मण परम मित्र था, वह नित्य प्रति सुवर्ण उपार्जन करके उसके पास रखता था और उस ब्राह्मण ने अपना सुवर्ण वैश्य को दे दिया ॥ ३ ॥

तीर्थयात्राप्रसङ्गेन वाराणस्यां गतः स वै ।
गत्वा काश्यां वरारोहे शरीरं ब्राह्मणोऽत्यजत् ॥ ४ ॥

और वह तीर्थ यात्राके उद्देश्य से काशी चला गया, और काशी में जाकर अपने शरीर का परित्याग कर दिया ॥४॥

सर्वं वैश्येन तद् द्रव्यं भुक्तं बहुदिनोपरि ।
शरीरत्याजिनाद्देव पुण्यतीर्थे स्त्रिया सह ॥ ५ ॥

तब वैश्यने उसके सब द्रव्य का बहुत दिन तक उपभोग कर स्त्री सहित उस पुण्य तीर्थ में ही शरीर त्याग दिया ॥ ५ ॥

अयोध्यायां विशालाक्षि स्वर्गवास तथाऽक्षयम् ।
दशपंचयुगं भुक्त्वा फलं चैव मनोहरम् ॥ ६ ॥

हे विशालाक्षि ! अयोध्यापुरी में शरीर छोड़ने से उसे अक्षय स्वर्ग की प्राप्ति हुई और पन्द्रह युग पर्यन्त उत्तम फल भोग कर ॥६॥

ततः पुण्यक्षये जाते मृत्युलोके सुरेश्वरि ।
कुले महति वै पूज्ये नरजन्म ततोऽभवत् ॥ ७ ॥

जब पुण्य क्षीण हुआ तब मृत्यु लोक में आकर उत्तम कुल में जन्म लिया ॥ ७ ॥

धनधान्यसमायुक्तो विष्णुपूजासु तत्परः ।
ब्राह्मणस्यैव स्वर्णादि न दत्तं वै गृहीतवान् ॥८॥
तस्मात्खलुः वरारोहे पुत्रस्तस्य न जायते ।

शरीरे च महाकष्टं मध्ये मध्ये प्रजायते ॥ ६ ॥

और धन-धान्य से युक्त तथा विष्णुभगवान्की पूजा में तत्पर हुआ। और ब्राह्मण का धन लेकर वह नहीं दिया उस दोष से सन्तान रहित हुआ तथा शरीर में दिनों दिन महाकष्ट होता था ॥६॥

तस्य चोत्तरफाल्गुन्याः प्रथमे चरणे शुभे।
जन्म वै चाप्यभूद्देवि! पुत्रकन्याविवर्जितः ॥१०॥

और उसका उत्तरा फाल्गुनी के पहिले चरण में जन्म हुआ था, अतः सन्तान रहित हुआ ॥ १० ॥

अस्य पापस्य वै शान्तिं पुण्यं शृणु वरानने!।
हरिवंशश्रुतिं कुर्याद्वारमेकं च तत्परः ॥११॥

हे वरानने! अब इस पाप की उत्तम शान्ति को सुनो। एक बार श्रद्धा पूर्वक हरिवंश पुराण को सुने ॥ ११ ॥

गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत्।
गायत्रीमूलमंत्रेण दशायुतजपं तथा ॥१२॥
होमं च तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा।
दशवर्णाः प्रदातव्या स्वर्णयुक्ताः सहाम्बराः ॥१३॥

और अपने गृहके धन का छठवाँ भाग से पुण्य कार्य करावे तथा गायत्री मूल मन्त्र से दश अयुत जप कराकर उसके दशांश हवन, तर्पण, तथा मार्जन करावे और दशवर्ण की गौवों का दान सुवर्ण तथा वस्त्र के सहित करे ॥ १२-१३ ॥

भूमिदानं ततो देवि! विप्राय विदुषे प्रिये।
व्रतं सूर्यस्य वै कुर्यात्पत्न्या सह वरानने! ॥१४॥

फिर वेदज्ञ ब्राह्मण कोभूमि दान दे और स्त्री पुरुषदोनों सूर्यव्रत को करें

कूष्माण्डं नारिकेलं च पञ्चरत्नसमन्वितम्।
गङ्गामध्ये प्रदातव्यं सुवर्णं दक्षिणां ततः ॥१५॥

और सफेद कोंहड़ा या नारियल में पञ्चरत्न भरकर सुवर्ण दक्षिणा के सहित गङ्गा के मध्य में दान करे ॥ १५ ॥

शय्यादानं प्रयत्नेन प्रकुर्यान्नियतेन्द्रियः ।
एवं कृते न संदेहः सर्वरोगो विनश्यति ॥ १६ ॥

और शुद्ध मनसे संयतचित्त होकर शय्या दान करे, इसको करने से सब रोग निःसन्देह नष्ट हो जाते हैं ॥ १६ ॥

अपुत्रो लभते पुत्रं काकवन्ध्या सुतं लभेत् ।
मृतवत्सा सुतं सूते चिरञ्जीविनमुत्तमम् ॥१७॥

और अपुत्रक भी पुत्र प्राप्त करता है, तथा काकवन्ध्या भी पुत्र सुखपातीहै औरमृतवत्सा कोभी चिरञ्जीवीउत्तमपुत्रहोता है ॥१७॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे उत्तरानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नामाष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४८ ॥

अड़तालीसवाँ अध्याय समाप्त ॥ ४८ ॥

अथैकोनपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

पुरुषोत्तमपुरे रम्ये स्वर्णकारोऽवसत् पुरा ।
स्वकर्मनिरतो नित्यं हेमकृत्ये विचक्षणः ॥ १ ॥

शिवजी बोले—हे देवि ! प्राचीन समय में पुरुषोत्तमनामक रमणीक नगर में एक सोनार निवास करता था, वह अपने कर्म को करने वाला तथा सुवर्ण-कार्य में विज्ञ था ॥ १ ॥

ब्राह्मणस्तस्य वै मित्रं धनाढ्यो वेदवर्जितः ।
तेन विप्रेण भो देवि ! स्वर्णं दत्तं शतं पलम् ॥२॥

उसका मित्र वेदविहीन धनिक एक ब्राह्मण था और उस ब्राह्मणने सौ पल सुवर्ण सोनार को दिया ॥ २ ॥

स्वर्णकाराय मित्राय माल्यार्थं च विचक्षणः ।
ब्राह्मणाय न दत्तं हि माल्यं दिव्यं वरेऽनघे ॥ ३ ॥

और वह सोना मित्रताके नाते माला बनानेके लिये सोनारको दिया, किन्तु सोनारने माला बनाकर ब्राह्मण को नहीं दिया ॥३॥

ब्राह्मणस्याभवन्मृत्युः किंचित्काले गते सति ।
स्वर्णं तत्स्वेच्छया भुक्तं पुत्रदारयुतेन च ॥ ४ ॥

और कुछ काल के बाद वह ब्राह्मण मर गया, तब सोनार ने उसके सुवर्ण का सपरिवार उपभोग किया ॥ ४ ॥

ततो बहुगते काले स्वर्णकारस्य वै शिवे ।
मरणं वै तदा जातं पुत्रदारायुतस्य च ॥ ५ ॥

हे शिवे ! और बहुत समय बीत जाने पर सपरिवार उस सोनारकी मृत्यु हो गयी ॥ ५ ॥

महाकटाहनरके दूतैः क्षिप्तो यमाज्ञया ।
युगमेकं वरारोहे ! भुक्तं नरकजं फलम् ॥ ६ ॥

तब यमाज्ञा से उनके दूतोंने उसे महाकटाह नामक नरक में वासदिया और एक युग तक उस नरक के दुःख को भोगकर ॥६॥

नरकान्निर्गतो देवि ! व्याघ्रयोनिस्ततोऽभवत् ।
व्याघ्रयोनिं ततो भुक्त्वा शृगालत्वं ततोऽभवत् ॥७॥

फिर नरक से निकल कर व्याघ्र की योनि में जन्म लिया व्याघ्र योनि के बाद फिर शृगाल की योनि पाया ॥ ७ ॥

ततः काकस्य वै योनिं भुक्त्वा नरकमाप्नुयात् ।
देशे पुण्यतरे देवि ! मानुषत्वं सुरेश्वरि ॥ ८ ॥

उस योनि के बाद कौए की योनि में आया और दुःखों को भोगकर पवित्र देश में मनुष्य योनि में जन्म लिया ॥ ८ ॥

पूर्वजन्मनि यत्स्वर्णं ब्राह्मणस्य हृतं प्रिये ! ।
तेन पापेन भो देवि पुत्रो नैव प्रजायते ॥ ९ ॥

हे प्रिये ! उसने जो पूर्वजन्म में ब्राह्मण का सुवर्ण ले लिया था उस पाप से सन्तान रहित हुआ ॥ ९ ॥

गर्भस्रावो भवेन्नार्याः काकवन्ध्या च जायते ।
अस्य पापस्य वै शान्तिं शृणु देवि सुशोभने ॥१०॥

और गर्भस्राव हो जाने से उसकी स्त्री काकवन्ध्या हो गई, अब इस पापकी शान्ति कहता हूँ उसे-सुनो ॥ १० ॥

षडंशं च ततो देवि ! ब्राह्मणाय समर्पयेत् ।
दशायुतजपं कुर्यात्गायत्र्या नियमेन च ॥११॥

हे देवि ! अपने धन का छठवाँ भाग ब्राह्मण को समर्पितकर दे और नियम पूर्वक एक लक्ष गायत्री मंत्रका जप करावे ॥११॥

हरिवंशश्रुतिं देवि ! संकल्प्य श्रद्धया युतः ।
होमं वै कारयेद्देवि ! स्वर्णदानं शतं पलम् ॥१२॥

और संकल्प पूर्वक श्रद्धासे हरिवंशपुराण को सुनकर हवन करावे तथा सौ पल सोने का दान करे ॥ १२ ॥

गोदानं विधिवत्कुर्याच्छिवपूजनमेव च ।
एवं कृते न सन्देहः शीघ्रं पुत्रमवाप्नुयात् ॥१३॥

और विधिवत् गोदान तथा शिवार्चन करे इस विधि को करने से शीघ्र ही पुत्र की प्राप्ति होवे ॥ १३ ॥

मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम् ।
काकवन्ध्या प्रसूयेत सत्यमेव न संशयः ॥१४॥

मृतवत्साको भी चिरञ्जीवी उत्तम पुत्रप्राप्त हो और काकवन्ध्या को भी पुत्र हो यह बिलकुल सत्य है, इसमें संशय नहीं ॥ १४॥

रोगात्प्रमुच्यते शीघ्रं ज्वरं सर्वं क्षयं व्रजेत् ॥१५॥

और ज्वरादि सम्पूर्ण रोगों से शीघ्रही छुटकारा पा जाताहैं ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे
उत्तरानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं
नामैकोनपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ४९ ॥

उनचासवाँ अध्याय समाप्त ॥ ४९ ॥

अथ पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

पुरे वै गहने देवि ! तैलकारोऽवसत्पुरा ।
महाधनाढ्यो वै देवि ! कोटिद्रव्येण संयुतः ॥ १ ॥

शिवजी बोले—हे देवि ! प्राचीन समय में गहनपुर में एक तेली रहता था, वह महाधनी अर्थात् करोड़पति था ॥ १ ॥

तस्य च स्त्रीद्वयं चासीज्ज्येष्ठाया वै विषं ददौ ।
कनिष्ठा च गृहे तस्य गृहिणी धर्मचारिणी ॥ २ ॥

और उसकी दो स्त्रियाँ थीं, तथा बड़ी स्त्री को उसने विष दे दिया और छोटी स्त्री धर्माचरण से गृहकार्य करती थी ॥ २ ॥

एवं बहुगते काले तैलकारस्य वै शिवे ! ।
मरणं तस्य वै जातं यमदूतैर्यमाज्ञया ॥ ३ ॥
महाकटाहे नरके निक्षिप्तश्च सुदारुणे ।
तत्र च बहुधा पीडा नाना नरकयातना ॥ ४ ॥

हे शिवे ! इस तरह बहुत समय बीत जानेपर जब उस तेली की मृत्यु हुई तो यमाज्ञा से उनके दूत महाकटाह घोर नरक में वास दिये और वहाँ पर वह अनेक प्रकार से नरक के दुःखों से पीड़ित हुआ ३-४

त्रिंशत्सहस्रं वै वर्षं तीव्रदुःखं च जायते ।
भुक्तं नरकजं दुःखं योनिं सर्पस्य वै शिवे ॥ ५ ॥

और तीस हजार वर्ष तक उसने कठिन दुःखों का भोग किया फिर नरक के दुखों को भोग कर सर्प की योनि में उत्पन्न हुआ५

गृध्रत्वं कुक्कुटत्वं वै द्वे योनी च तदागतः ।
मानुषस्य च व योन्यां जातः खलु वरानने ! ॥६॥

उसके बाद क्रमशः गृध्र और मुर्गे की योनियों में भोगता हुआ फिर मनुष्य की योनि में जन्म लिया ॥ ६ ॥

धनधान्यसमायुक्तो गुणज्ञो ज्ञानवानपि ।
ततो वै तस्य मरणं गङ्गायां देव्यभूत्पुरा ॥ ७ ॥

हे देवि ! धनादि से सम्पन्न गुणी और ज्ञानी हुआ, और पहले गङ्गा में उसकी मृत्यु हुई थी इसलिये उस पुण्य के प्रभाव से धनिक हुआ ॥ ७ ॥

तत्पुण्येन महादेवि ! मानुषो धनवानभूत् ।
तैलकारो यतः पूर्वं ज्येष्ठायै च विषं ददौ ॥ ८ ॥
तत्पापेन च भो देवि ! पुत्रो नैव प्रजायते ।
बहुरोगेण संयुक्ता भार्या कष्टयुता सदा ॥ ९ ॥

और उस तेली ने पूर्व में अपनी ज्येष्ठ स्त्री को विष दिया था, उस पाप के फल से पुत्र नहीं हुए और स्त्री सहित रोग से सदैव दुःखी रहता था ॥ ८-९ ॥

अथ शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि ! सविस्तरम् ।
गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्यं करोतु सः ॥१०॥

हे देवि ! अब उसकी शान्ति को कहता हूँ सविस्तार सुनो, गृहस्थ अपने धन का आठवाँ भाग पुण्यकार्य में व्यय करे ॥१०॥

गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ।
हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं तथा ॥ ११ ॥

और गायत्री मूल मन्त्र से एक लक्ष जप और उसके दशांश हवन, तर्पण तथा मार्जन करावे ॥ ११ ॥

त्र्यम्बकेति च मन्त्रेण दशायुतजपं पुनः ।
दशवर्णां ततो दद्यात्कूष्माण्डं रत्नसंयुतम् ॥१२॥

फिर त्र्यम्बक मंत्रसे एक लक्ष जप और दशवर्ण की गौवों का दान तथा रत्नपूरित कुष्माण्ड का दान करे ॥ १२ ॥

काश्यां वै ग्रहणे दद्यात्पत्न्या सार्द्धं महद्धनम् ।
कार्त्तिके माघवैशाखे प्रातःस्नानं समाचरेत् ॥१३॥

और काशी में ग्रहण के समय स्त्री पुरुष दोनों प्रचुर द्रव्य दान करें तथा कार्त्तिक, माघ और वैशाख मासमें प्रातःकाल स्नान करे१३

तिलधेनुं ततो दत्त्वा सद्यः पापात्प्रमुच्यते ।
एवं कृते न सन्देहो वंशलाभो भवेद् ध्रुवम् ॥१४॥

और यदि तिल धेनु का दान करे तो शीघ्रही पाप से छूट जाय, इस प्रकार के विधान से अवश्य पुत्र लाभ हो इसमें संशय नहीं ॥१४॥

कन्यकाजननी यापि सापि पुत्रवती भवेत् ।
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम् ॥१५॥
रोगात्प्रमुच्यते शीघ्रं ज्वरो नैव प्रजायते ॥१६॥

एवं जिस स्त्री को केवल कन्या ही होती हों वह भी पुत्रवती हो तथा मृतवत्सा भी उत्तम चिरञ्जीवि पुत्र पावे और शीघ्र रोग भी छूट जाय तथा ज्वर कभी भी न आवे ॥ १५-१६ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसम्वादे
उत्तरानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं
नाम पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५० ॥

पचासवाँ अध्याय समाप्त ॥ ५० ॥

अथैकपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

गयापुर्यां पुरा देवि ! ब्राह्मणोऽध्यवसत्प्रिये ।
वेदकर्मपरिभ्रष्टो मद्यपानरतः सदा ॥ १ ॥
स्तेयवेश्यासु संगामी स प्रतिग्रहवानपि ।
वयः सर्वं गतं चेत्थं वृद्धे जाते मृतः स वै ॥ २ ॥

शिवजी ने कहा—हे देवि ! पहले समय में गया में एक ब्राह्मण रहता था, वह वेद कर्म से च्युत सदा मद्यपान करने वाला, चोर, वेश्यागामी और प्रतिग्रह(निषिद्ध दक्षिणा)ग्राही था। इस प्रकार सब अवस्था बीतजाने पर वृद्धावस्था में उसकी मृत्यु हो गई ॥१-२॥

यमदूतो महाघोरे कटाहनरकेऽक्षिपत् ।
लक्षत्रयमितं देवि ! भुक्तं नरकजं फलम् ॥ ३ ॥

तब यमदूत महाघोर नरक में लेजाकर रख दिये और उसमें तीन लाख वर्ष दुःखों को भोगता रहा ॥ ३ ॥

चाणूरस्य कुले जन्म ततः प्रेतोऽगमत्पुरा ।
बिडालत्वं ततो यातः फल्गुतीर्थे मृतः स वै ॥ ४ ॥

तत्पश्चात् क्रमशः चाणूर कुल में उसके बाद प्रेत योनि में फिर बिल्ली की योनि में जन्म लिया और फल्गू तीर्थ में मर गया ॥४॥

पुनर्मानुषयोनित्वं मध्यदेशे सुरेश्वरि ! ।
कन्यकाजननी भार्या शरीरे सततं ज्वरः ॥ ५ ॥

फिर मध्यदेश में मनुष्य योनि में उत्पन्न हुआ, उसकी स्त्री कन्या की ही माता हुई और शरीर में सर्वदा ज्वर रहता था ॥५॥

चिन्तोद्विग्नः सदा देवि ! बहुदुःखेन पीडितः ।
अस्य शान्तिं शृणुष्वादौ यतः पापक्षयो भवेत् ॥६॥

हे देवि ! वह सदा चिन्ता से उद्विग्न और दुःख से पीड़ित रहता था, पहले इसकी शान्ति सुनो जिससे पाप क्षय हो ॥६॥

केशवस्यार्चनं चादौ साधूनां सेवनं सदा ।
ब्राह्मणे दृढभक्तिश्च दाने वै भोजने तथा ॥ ७ ॥

सर्व प्रथम विष्णु भगवान्‌का पूजन और सर्वदा साधुओं की सेवा करनी चाहिये ब्राह्मणों में दृढ़ भक्ति हो एवं दान तथा भोजन में भी श्रद्धा हो ॥ ७ ॥

गां सवत्सां ततो दद्याद्विप्राय प्रतिवत्सरम् ।
श्रवणं विष्णुशास्त्रस्य हरिवंशश्रुतिं तथा ॥ ८ ॥

और सवत्सा गौवों का दान ब्राह्मण को प्रतिवर्ष करे, तथा विष्णु पुराण और हरिवंश पुराण को सुने ॥ ८ ॥

एवं कृते न सन्देहो बहुपुत्रः प्रजायते ।
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति काकवन्ध्या च पुत्रिणी ॥६॥

इस विधिको करने से अधिक सन्तान होते हैं और सब रोगों का नाश हो जाता है तथा काकवन्ध्या भी पुत्रवती होती है ॥६॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे
उत्तरानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं
नामैकपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५१ ॥

इक्यावनवाँ अध्याय समाप्त ॥ ५१ ॥

अथ द्विपञ्चाशत्तमोऽध्यायः

शिव उवाच ।

स्वर्णकारोऽवसेद्देवि ! पुरे भोजकटे तथा ।
स्त्री तस्यासीन्महादुष्टा परपुंसिरता सदा ॥ १ ॥

शिवजी बोले—हे देवि ! भोजकट नाम नगर में एक सोनार

निवास करता था, उसकी स्त्री सर्वदा पर पुरुषों से प्रेम करने वाली महादुष्टा थी ॥ १ ॥

तद्गृहे वैश्य एकोऽपि ह्यागतो धनसंयुतः ।
तयोः प्रीतिरभूद्देवि! स्वर्णकारकवैश्ययोः ॥ २ ॥

और उसके घर एक धनिक वैश्य आया तथा सोनार और वैश्य उन दोनों में परस्पर प्रीति हो गयी ॥ २ ॥

व्यापारार्थं गृहीतं तु वैश्यस्वर्णं तदा प्रिये ।
पलं शतमितं देवि ! विक्रयं चाकरोत्किल ॥ ३ ॥

हे प्रिये ! उस सोनार ने व्यापार के लिये सौ पल सुवर्ण वैश्य से लिया ॥ ३ ॥

स्वर्णकारस्य या पत्नी सुन्दरी कुलटापरा ।
प्रीत्या तदाऽभजत्पत्नी वैश्याय धनिकाय वै ॥४॥

और स्वर्णकार की जो स्त्री थी वह परम सुन्दरी और कुलटा थी तथा धनिक वैश्य से वह पति के समान प्रेम करने लगी॥४॥

एवं बहुगते काले वैश्यस्य मरणे सति ।
पश्चान्मृतस्तदा सोऽपि स्वर्णकारो वरानने ! ॥५॥

इस प्रकार बहुत समय बीत जाने पर वह वैश्य मर गया और बाद को उस सोनार की भी मृत्यु हो गयी ॥ ५ ॥

उभौ च नरके प्राप्तौ बहुकालं तु दोषतः ।
युगैकसंमितं देवि ! भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ६ ॥

पश्चात् वे दोनों नरक में गये और अपने कर्मानुसार एक युग पर्यन्त नरक यातनायें भोगते रहे ॥ ६ ॥

नरकान्निःसृतौ तौ तु शुनो योनिं तदा गतौ ।
पुनर्वृषभयोनिं च नरयोनिस्ततोऽभवत् ॥ ७ ॥

पुनः वे दोनों नरक से निकल कर कुत्ते की योनि में उत्पन्न हुए बादको बैलकी योनिमें जाकर फिर मनुष्य योनिमेंजन्मलिये॥७॥

महद्धनैः समायुक्तो देशे पुण्यतमे शुभे।
पूर्वजन्मप्रसङ्गेन स वैश्यः पुत्रतां गतः ॥ ८ ॥

धन-धान्य से युक्त पवित्र देश में जन्म लिये और पूर्वजन्म के सम्बन्ध से वैश्य ही पुत्र हुआ ॥ ८ ॥

भार्या तस्य तु भोदेवि ! या पुरा व्यभिचारिणी।
पुत्रोत्पत्तिस्तदा तस्यां मरणं शीघ्रमाप्नुयात् ॥ ९ ॥

और प्रथम जो व्यभिचारिणी उसकी स्त्री थी वह स्त्री हुई और उसका पुत्र होकर शीघ्रही मर गया ॥ ९ ॥

शरीरे महती पीडा सततं चिन्तया युतः।
अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि यथोक्तं शृणु वल्लभे! ॥१०॥

और वह शरीर की पीड़ा से सर्वदा चिन्तित रहती थी, और इसकी यथोक्त शान्ति कहता हूँ—सुनो ॥ ०१ ॥

गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्यं च कारयेत्।
जातवेदेति मंत्रेण पंचायुतजपं तथा ॥ ११ ॥

अपने गृह के धन के आठवें भाग से पुण्य कार्य करावे और "जातवेदसे" इस मंत्र से पचास हजार जप करावे ॥ ११ ॥

दशांशं हवनं कुर्यात्तर्पणं मार्जनं तथा।
पापशांत्यै च भोदेवि ! भोजयेद्ब्राह्मणाञ्छतम् ॥१२॥

और उसके दशांश क्रमसे हवन तर्पण मार्जन तथा सौ ब्राह्मणों को भोजन पापशान्ति के निमित्त करावे ॥ १२ ॥

गोदानं च विशेषेण शय्यादानं तथा प्रिये।
प्रतिमां कारयेद्देवि सुवर्णस्य तदा प्रिये ॥१३॥
एकादशपलेनैव रचितां वस्त्रभूषिताम्।
पूजयेद्विधिवद्देवि ! मंत्रेणानेन वै शिवे ॥ १४ ॥

हे प्रिये ! और विधिपूर्वक गोदान, शय्यादान और ग्यारह

पल (५५ तोले) सुवर्णकी प्रतिमा निर्माण कराकर उसे वस्त्राभूषणों से अलंकृत करके इन मंत्रों द्वारा पूजन करे ॥ १३-१४ ॥

श्रीविष्णो पुण्डरीकाक्ष भुवनानां च पालक ।
चन्दनैः प्रतिमां दिव्यां पूजयामि गृहाण भो ॥१५॥

हे श्रीविष्णो पुण्डरीकाक्ष सब भुवनों के पालनकर्त्ता चन्दनादि से पूजित इस प्रतिमा को आप ग्रहण करें ॥ १५ ॥

नरसिंहाय नमः पादयोः । गोविन्दाय नमः उदरे ।
विश्वजिते नमः कट्याम् । अनिरुद्धाय नमः उरसि ।
शितिकण्ठाय नमः कण्ठे । वैनतेयाय नमः शिरसि ।
असुरध्वंसनाय नमः चक्रे । तोयात्मने नमः शङ्खे ।
वैकुण्ठाय नमः गदायाम् । सर्वात्मने नमः पद्मे ।
भो किरीटिन्महादेव शंखचक्रगदाधर ।
पापं मया कृतं पूर्वं तत्क्षमस्व दयानिधे ॥१६॥
ततः प्रदक्षिणां कुर्यात्पत्न्या सह वरानने ।
प्रतिमां पूजितां चैव ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥ १७ ॥

मैंने पूर्व जन्म में जो दुष्कर्म किया है उसे क्षमा करें पूजन के वाद इस प्रकार प्रार्थना करे और स्त्री सहित उस प्रतिमा की प्रदक्षिणा करके उसे ब्राह्मण को समर्पित करदे ॥ १६-१७ ॥

एवं कृते तदा देवि! पुत्रो भवति नान्यथा ।
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्रकार्य्या विचारणा ॥१८॥

हे देवि! ऐसा करने से पुत्र की प्राप्ति और सब रोगों का नाश हो जाता है इसके करने में विचार न करे ॥ १८ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे हस्तनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम द्विपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥५२॥

बावनवाँ अध्याय समाप्त ॥ ५२ ॥

अथत्रिपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

वंगदेशे महादेवि ! केशवं नाम वै पुरम् ।
खड्गनामेति विख्यातो नापितो वसति प्रिये ॥१॥

शिवजी बोले—हे देवि ! वंगदेश में और केशव नामक नगर में खड्गनाम का एक नाई निवास करता था ॥ १ ॥

महाधनसमायुक्तो भाग्यवान् देवपूजकः ।
तस्य पत्नी विशालाक्षी लीलानाम्नीति विश्रुता ॥२॥

वह भाग्यशाली, धनिक और देवपूजक था, उसकी स्त्री कमल के सदृश नेत्रवाली और लीला नाम की थी ॥ २ ॥

तस्यां पुत्रद्वयं जातं नापितस्य तदा प्रिये ।
एको द्यूतपरः पुत्रो द्वितीयश्चौरसंमतः ॥ ३ ॥

हे प्रिये ! उस नाई के दो पुत्र उत्पन्न हुये उनमें से एक तो जुआड़ी दूसरा चोर हुआ ॥ ३ ॥

परस्त्रीलम्पटो देवि ! नापितस्य च वै सुतः ।
ज्येष्ठपुत्रस्य या भार्या पुंश्चली चातिसुन्दरी ॥ ४ ॥

और उस नाई का पुत्र परस्त्री से प्रेम करता था और बड़े पुत्र की स्त्री कुलटा तथा सुन्दरी थी ॥ ४ ॥

नापितं प्राभजत्सा तु श्वशुरं खड्गनामकम् ।
एवं बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्तदा ॥ ५ ॥

वह अपने खड्ग नामवाले श्वसुर के साथ दुष्कर्म कराती थी, इस प्रकार बहुत समय बीत जाने पर वह नाई मर गया ॥ ५ ॥

तदा पत्नी सती जाता नापितस्य चिताग्निना ।
सत्यलोकमभूद्देवि ! भार्यया सहितस्य वै ॥६॥

हे देवि! और उस नाई की स्त्री अपने पति के साथ चिताग्नि में सती होकर पतिके साथ स्वर्ग को चली गई ॥ ६ ॥

युगमेकायुतं देवि ! सत्यलोकेऽवसत्तदा ।
ततः पुण्यक्षये जाते पुनर्मानुषतां गतः ॥ ७ ॥

और एक युग तक सत्य लोक में निवास कर जब पुण्य नष्ट हुआ तो मनुष्य योनि में उत्पन्न हुआ ॥ ७ ॥

धनधान्यसमायुक्तो ह्यपुत्रश्च सुशोभने ।
पञ्च कन्याः प्रजायन्ते व्याधिस्तस्य प्रजायते ॥८॥

वह धनादि से युक्त और पुत्र रहित हुआ, तथा उसे पाँच कन्यायें हुईं और रोगी हुआ ॥ ८ ॥

अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि पूर्वपापक्षयं यतः ।
गृहवित्ताष्टमं भागं ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥ ९ ॥

अब इसकी शान्ति कहता हूँ जिससे कि पूर्व पापों का क्षय हो, अतः अपने धनका आठवाँ भाग ब्राह्मण को समर्पित करे ॥९॥

गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ।
हवनं तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा ॥१०॥

और गायत्री मूल मंत्र से एक लाख जप और उसके दशांश हवन, तर्पण तथा मार्जन करावे ॥ १० ॥

वाटिकाकूपमार्गांश्च तडागं चैव कारयेत् ।
तुलसीसेवनं नित्यमेकादश्यां व्रतं ततः ॥११॥

और मार्गमें वाटिका, कुआँ, तालाब आदि निर्माण कराकर नित्य तुलसी वृक्षका सेवन और एकादशी व्रतको करे ॥ ११ ॥

वृन्ताकं मूलिकां चैव न भोक्तव्यं कदाचन ।
दशवर्णां ततो दद्याद्धरिवंशश्रुतिं तथा ॥१२॥

वृन्ताक (बैंगन) और मूली न खावे और दशवर्ण की गौवोंका दान करे तथा हरिवंश पुराण सुने ॥ १२ ॥

एवं कृते न सन्देहः पुत्रो भवति तस्य वै ।
कन्यका नैव जायन्ते वन्ध्यात्वं च प्रशाम्यति ॥१३॥

इसके करनेसे अवश्य पुत्र उत्पन्न होता है और कन्या नहीं होती तथा वन्ध्यादोष भी शमन हो जाता है ॥ १३ ॥

रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति काकवन्ध्या लभेत्सुतम् ॥१४॥

और सब व्याधियोंका नाश तथा काकवन्ध्याको भी पुत्रहोवे ॥१४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे हस्तनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामत्रिपञ्चशत्तमोऽध्यायः ॥ ५३ ॥

तिरपनवाँ अध्याय समाप्त ॥ ५३ ॥

अथ चतुःपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

कौशिक्या दक्षिणे कूले कारुको न्यवसत्प्रिये ।
विष्णुभक्तिरतो नित्यं कृषिकर्मसु तत्परः ॥ १ ॥

शिवजीने कहा—हे प्रिये ! कौशिकी नदीके दक्षिण तट पर एक कारुक निवास करता था, वह विष्णुभक्त सदा कृषिकर्म को करनेवाला था ॥ १ ॥

धनं तु सञ्चितं देवि ! कार्पण्यं पुण्यवर्जितम् ।
एकस्मिन्समये रात्रौ क्षेत्रे व्याघ्रेण वै हतः ॥ २ ॥

उसने धन तो संचय किया किन्तु कार्पण्यतासे दान नहीं करता था, एक समय उसे खेतहीमें बाघने मार दिया ॥ २ ॥

यमदूतैर्महाघोरे रौरवे पातितस्तदा ।
षष्ठिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ३ ॥

ततः कर्मवशाद्देवि ! विडालत्वं ततो गतः ।
पुनः कुक्कुटयोनिर्वै शृगालत्वं ततोऽभवत् ॥ ४ ॥

पश्चात् यमदूतोंने उसे घोर नरक में डाल दिया और साठ हजार वर्ष नरक यातनायें भोगकर फिर कर्मानुसार बिल्ली, मुर्गा, शृगाल इन योनियोंमें क्रमशः भोगता हुआ ॥ ३–४ ॥

पुनर्मानुषयोनिश्च मध्यदेशे वरानने ! ।
पुत्रकन्याविहीनश्च अर्शोरोगेण पीडितः ॥ ५ ॥

फिर मध्यदेश में मनुष्य योनिमें उत्पन्न हुआ, और सन्तान रहित तथा अर्श (बवासीर) रोगसे पीड़ित हुआ ॥ ५ ॥

अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि पूर्वपापविशुद्धये ।
सूर्यमाराधयेन्नित्यं व्रतं सूर्यस्य वासरे ॥ ६ ॥

इस पूर्व पाप शुद्धिके लिये शान्ति कहता हूँ—नित्य सूर्यकी आराधना और रविके दिन उनका व्रत करे ॥ ६ ॥

गायत्रीमूलमन्त्रेण दशायुतजपं तथा ।
प्रयागे नियतः स्नाने माघवैशाखकार्त्तिके ॥ ७ ॥

और गायत्री मूल मन्त्रसे एक लक्ष जप करावे तथा नियम से प्रयागमें कार्तिक, माघ, वैशाख इन मासोंमें स्नान करे ॥७॥

भूमिदानं ततो देवि ! वित्तशाठ्यं न कारयेत् ।
गोमिथुनं ततो दद्यात्सर्वालङ्कारभूषितम् ॥ ८ ॥

हे देवि ! पश्चात् भूमि दान करे और इसमें शठता न करे तथा वस्त्राभूषणोंसे अलंकृत जोड़े गौवोंका दान करे ॥ ८ ॥

कूष्मांडं नारकेलञ्च पंचरत्नसमन्वितम् ।
गङ्गामध्ये प्रदातव्यं तुलसीपत्रसंयुतम् ।
मालस्य रचना कार्या स्वर्णदशपलैः शुभा ॥ ९ ॥
विधिपूर्वं विशेषेण विविधं गंधचर्चितम् ।
आचार्याय ततो दद्यात् सर्वपापविशुद्धये ॥१०॥

और सफेद कोहँड़ा या नारियलमें पञ्चरत्न भर कर तुलसी पत्र सहित गङ्गाके मध्यमें दान करे। तथा दशपल सोनेकी माला बनवाकर विधिपूर्वक गन्धादिसे पूजा करके सम्पूर्ण पाप शुद्धिके निमित्त आचार्य को देवे ॥ ९-१० ॥

पुत्रश्च जायते देवि ! कन्यका नैव जायते।
सर्वे रोगाः क्षयं यान्ति वन्ध्यात्वं च प्रणश्यति।
काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं मृतवत्सा च पुत्रिणी ॥११॥

हे देवि ! इस विधानसे केवल पुत्र ही होता है कन्या नहीं, तथा सब रोग और वन्ध्या दोष भी छूट जाता है, और काकवन्ध्या तथा मृतवत्साको भी पुत्र प्राप्त होता है ॥ ११ ॥

अधनो धनमाप्नोति नात्र कार्या विचारणा ॥१२॥

और निर्धन मनुष्य भी धन प्राप्त कर सकता है इसमें संशय नहीं ॥ १२ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे हस्तनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चतुः पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५४ ॥

चौवनवाँ अध्याय समाप्त ॥ ५४ ॥

अथ पञ्चपञ्चाशत्तमोऽध्यायः।

शिव उवाच।

हस्तिनानगरे कश्चित्कायस्थो वसति प्रिये।
केवलेति समाख्यातस्तस्य स्त्री कमला शुभे ॥ १ ॥

शिवजी बोले—हे प्रिये ! हस्तिनापुरमें केवल नामका एक जातिका कायस्थ रहता था कमला नामकी उसकी स्त्री थी ॥१॥

महाधनसमायुक्तो मद्यपानरतः सदा।
वेश्यासुरतसंतृप्तो ब्राह्मणस्य विदूषकः ॥ २ ॥

वह बड़ा धनी तथा सदैव मदिरा पीनेवाला और वेश्यागामी ब्राह्मणोंका निन्दक था ॥ २ ॥

एकस्मिन्समये देवि ! कश्चिद्विप्रः समागतः ।
गङ्गाजलसमायुक्तं याचितं तेन भोजनम् ॥ ३ ॥

हे देवि ! एक समय उसके यहाँ कोई ब्राह्मण आया और उसने गङ्गाजलसे युक्त भोजनकी याचना किया ॥ ३ ॥

तच्छ्रुत्वा देहजक्रोधाद् ब्राह्मणं निरभर्त्सयत् ।
ताडितो भर्त्सितस्तेन विषं पित्वा द्विजो मृतः॥ ४ ॥

उसका यह वाक्य सुनकर क्रोधके आवेशसे कायस्थने उसकी भर्त्सना की और उस ब्राह्मणसे वह अपमान नहीं सहा गया जिससे विष खाकर मर गया ॥ ४ ॥

ततो बहुगते काले मरणं तस्य चाभवत् ।
तस्य पत्नी सती जाता तद्दिने च वरानने ॥ ५ ॥

और बहुत समयके बाद कालान्तरमें उम कायस्थ की भी मृत्यु हुई और उसकी स्त्री भी उसी दिन सती हो गई ॥ ५ ॥

बहून्यब्दसहस्राणि सत्यलोकेऽवसत्तदा ।
सौख्यानि बहुधा तत्र प्रभुक्तानि वरानने ॥ ६ ॥

अतः उसे सत्य लोक प्राप्त हुआ कई हजार वर्ष पर्यन्त अनेक प्रकारके सुखोंका उपभोग करता रहा ॥ ६ ॥

ततः पुण्यक्षये जाते मानुषत्वं पुनर्गतः ।
धनधान्यसमायुक्तो विप्रवंशे प्रजायते ॥ ७ ॥

जब पुण्य नष्ट हो गया तब फिर मनुष्य शरीरसे और धनादिसे युक्त ब्राह्मण कुलमें उत्पन्न हुआ ॥ ७ ॥

जाताश्च बहवः पुत्रा गौराङ्गप्रियदर्शनाः ।
गुणज्ञा रूपसम्पन्ना म्रियन्ते प्रीतिबर्द्धना ॥ ८ ॥

और उसे बहुत पुत्र गौराङ्ग वदन दर्शनीय रूप गुणोंसे युक्त प्रेम करनेवाले उत्पन्न होकर मर गये ॥ ८ ॥

द्वौ पुत्रौ शीलसम्पन्नौ चोद्वाहेन समायुतौ ।
पितुः कर्मवशाद्देवि ! ब्रह्महत्या पुरा यतः ॥ ९ ॥
राजरोगसमायुक्तौ जायागर्भो विनश्यति !
अस्य शान्ति प्रवक्ष्यामि शृणु देवि ! पतिव्रते ॥१०॥

हे देवि ! उसके दो पुत्र शील सम्पन्न और विवाहित जो कि पिताके पूर्वकी ब्रह्महत्याके दोषसे राज रोगी (यक्ष्मा) हो गये तथा उनकेस्त्रीकागर्भ नष्टहोगया, अबइसकी शान्ति कहता हूँ सुनो९-१०

विष्णोरराटमंत्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ।
दशांशं हवनं कुर्यात्तर्पणं मार्जनं तथा ॥११॥

"विष्णोरराट—" इस मंत्रसे एक लाख जप तथा दशांश हवन, तर्पण और मार्जन करावे ॥ ११ ॥

वित्तस्य च षडंशं च ब्राह्मणे दानमाचरेत् ।
वापीकूपतडागानि पथि मध्ये च कारयेत् ॥१२॥

और अपने धनका छठवाँ भाग ब्राह्मणको दान करदे तथा मार्गमें बावली, कुआँ, पोखरा इन सबका निर्माण करावे ॥१२॥

गामेकां कपिलां दद्यात्सवत्सां वस्त्रभूषिताम् ।
सुवर्णस्य कृतं विप्रं पलपञ्चदशस्य तु ॥१३॥

और व्यायी हुई एक कपिला गौ वस्त्रआभूषणों से विभूषित करके ब्राह्मण को दान दे, तथा ब्राह्मण की मूर्ति पन्द्रह पल सोने की बनवावे ॥ १३ ॥

दद्याद्विप्राय विदुषे सर्वप्राणिरताय वै ।
हरिवंशश्रुतिं देवि ! विधिपूर्वं च कारयेत् ॥१४॥

हे देवि ! उस प्रतिमा को सर्वश्रेष्ठ वेदज्ञ ब्राह्मण को देवे और विधि से हरिवंश पुराण को सुने ॥ १४ ॥

पुत्रश्च जायते देवि! गर्भपातश्च शाम्यति।
काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं निश्चयो नात्र संशयः॥१५॥

तब पुत्र हो, गर्भ पात जनित दोष भी न रहे, और काकवन्ध्या भी पुत्र प्राप्त करती है-इसमें सन्देह नहीं ॥ १५ ॥

पुत्राणां मरणं देवि! पूर्वपापप्रसंगतः।
प्रायश्चित्तं विना देवि! कुतःशान्तिमवाप्नुयात्॥१६॥

हे देवि! पूर्व कृत पापसे पुत्रों का मरण होता है और प्रायश्चित्तके विना शान्ति कैसे होगी? अतःशान्त्यर्थप्रायश्चित करे॥१६॥

इति कर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे हस्तनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम पञ्चपञ्चाशत्तमोऽध्यायः॥ ५५ ॥

पचपनवाँ अध्याय समाप्त ॥ ५५ ॥

अथ षट्पञ्चाशत्तमोऽध्यायः।

शिव उवाच।

गयापुर्यां महादेवि! क्षत्री ह्येकोऽवसत्पुरा।
कुकर्मणि रतो नित्यं धनाढ्यः कृपणः शठः॥ १ ॥

शिवजी बोले-हे देवि! प्राचीन समय गयामें एक क्षत्रिय रहता था और उसकी प्रवृत्ति सदा कुकर्म में थी, वह धनिक होते हुए भी कृपण था ॥ १ ॥

स्त्री भवेच्चञ्चला तस्य द्वौ पुत्रौ च वरानने!।
कन्या चैका विशालाक्षी जाता तस्यां वरानने!॥२॥
उद्वाहिता तदा देवि! कन्यकाव्यभिचारिणी।
महिषीपुत्रघातं च प्रत्यब्दमकरोत्प्रिये॥ ३ ॥

उसकी स्त्री चंचल स्वभावकी थी और उसे दो पुत्र तथा एक

सुन्दर पुत्री हुई और उसका विवाह होने पर वह दुष्कर्म में प्रवृत्त होगई। हे प्रिये! वह प्रत्येक वर्ष भैंसे का बलिदान किया करता था॥२-३॥

अनेनैव प्रकारेण वयः सर्वं क्षयं गतम्।
ततः सर्पेण वै दंष्टस्तस्य मृत्युरभूत्तदा ॥ ४ ॥

और इस प्रकार अवस्था व्यतीत होने पर सर्प काटने से उसकी मृत्यु हो गई ॥ ४ ॥

यमदूतैर्महाघोरे निक्षिप्तो नरकार्णवे।
त्रिसप्ततिसहस्राणि वर्षाणि च वरानने! ॥ ५ ॥

तब यमदूतों ने घोर नरक समुद्र में डाल दिया और वह तिहत्तर हजार वर्ष पर्यन्त उसमें भोगता रहा ॥ ५ ॥

भुक्त्वा कष्टं विशालाक्षि गर्भत्वं च ततो गतः।
मध्यदेशे विशालाक्षि नरजन्मा च क्षत्रियः ॥ ६ ॥
पुत्रो न जायते देवि! पूर्वपापानुसारतः।
कन्यका रजसा युक्ता विधवा जायते प्रिये ॥ ७ ॥

हे विशालाक्षि! नरक के कष्टों को भोग कर फिर मध्य देश में एक क्षत्रिय कुल में उत्पन्न हुआ किन्तु पूर्वपाप के कारण पुत्र नहीं हुए और युवावस्था में ही उसकी कन्या विधवा होगई।६-७।

महिषीपुत्रघातेन रोगोत्पत्तिश्च जायते।
अस्य पापस्य शान्त्यर्थं पुण्यं शृणु वरानने ॥ ८ ॥

और महिषी पुत्र [भैंसे] के घात दोष से शरीर में रोग हो गया, अब इस पाप के शान्त्यर्थ पुण्य कहता हूँ सुनो ॥ ८ ॥

स्ववित्तस्याष्टमं भागं ब्राह्मणाय ददेत वै।
एकां कृष्णां च गां देवि! स्वर्णशृङ्गीं सवत्सकाम् ॥९॥

हे देवि! अपने धन का आठवाँ भाग द्रव्य तथा सोने से मढ़ी हुई सींग वाली ब्यायी एक कृष्णा गौ ॥ ९ ॥

सर्वलक्षणसंपन्नां वस्त्रमुक्तादिभूषिताम् ।
ब्राह्मणाय तदा दद्याच्छय्यादानं विशेषतः ॥१०॥

सब लक्षणों से युक्त वस्त्रादि से अलंकृत करके ब्राह्मण को दान दे और सब वस्तुओं सहित शय्या दान भी करे ॥ १० ॥

गायत्रीजातवेदाभ्यामयुतं जपमाचरेत् ।
हवनं तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं ततः ॥११॥

और गायत्री मंत्र तथा "जात वेदसे" मंत्र से दश अयुत जप कराकर उसके दशांश हवन, तर्पण तथा मार्जन कराये ॥११॥

पथिमध्ये वरारोहे पञ्चवृक्षस्य वाटिकाम् ।
कारयेद्विभवेनैव विष्णुवृक्षादिभिर्वृताम् ॥१२॥

हे वरानने ! और मार्ग में पाँच वृक्ष की एक वाटिका लगावे जिसमें एक पीपल का भी वृक्ष हो ॥ १२ ॥

भोजयेद्देवि ! षट्षष्ठिब्राह्मणान्वेदपारगान् ।
निष्कत्रयसुवर्णस्य प्रतिमां वस्त्रभूषिताम् ॥१३॥
ब्राह्मणाय ततो दद्याद्विष्णुभक्ताय सुन्दरि ।
एवं कृत्वा विशालाक्षि पूर्वजन्मकृतं च यत् ॥१४॥
पापं प्रणाशयेद्देवि ! नात्र कार्या विचारणा ।
काकवन्ध्या च या नारी लभते पुत्रमुत्तमम् ॥१५॥
पुत्रश्च जायते देवि ! सुरूपेण समन्वितः ।
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥१६॥

हे देवि ! और वेद में पारङ्गत ऐसे छाछठ ब्राह्मणों को भोजन करावे तथा तीन निष्क प्रमाण की सुवर्णमूर्त्ति वस्त्र से विभूषित कर विष्णु भक्त अर्थात् वैष्णव ब्राह्मण को दे ऐसा करने से पूर्व जन्म के सब पाप नष्ट हो जाते हैं इसमें संदेह नहीं और काकवन्ध्या स्त्री भी उत्तम सन्तति प्राप्त करती है ॥१३-१४-१५॥

मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम् ॥१७॥

और सुन्दर पुत्र उत्पन्न होते हैं तथा सब रोग भी नष्ट होते हैं और मृतवत्साको भी उत्तम चिरंजीवि पुत्र होता है ॥१६-१७॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे चित्रानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्त कथनं नाम षट्पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५६ ॥

छप्पनवाँ अध्याय समाप्त ॥ ५६ ॥

अथ सप्तपंचाशत्तमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

पुण्येन जायते पुत्रः पुण्येन लभते श्रियम् ।
पुण्येन रोगनाशः स्यात् सर्वशास्त्रेण सम्मतः ॥ १ ॥

शिवजी बोले—कि पुण्यसे पुत्र और लक्ष्मी, तथा पुण्य ही से रोगोंका नाश होता है यह सब शास्त्र की सम्मति है ॥ १ ॥

मध्यदेशे वरारोहे ! ब्राह्मणो न्यवसत्प्रिये ।
सरय्वा दक्षिणे कूले कालिकापुरशोभने ॥ २ ॥

हे प्रिये ! मध्यदेशमें सरयू नदीके दक्षिणतट पर कालिका नामकी सुन्दर पुरीमें एक ब्राह्मण रहता था ॥ २ ॥

तत्र कालीपुरे शुभ्रे द्विजोऽतिष्ठन्महाशयः ।
तेन वेश्यापरस्त्रीणां रतिसंसर्गतत्परः ॥ ३ ॥

उस उत्तम पुरीमें वह रहते हुए निन्दित कर्म अर्थात् वेश्यागमन, परस्त्री संसर्गादि कर्म करता था ॥ ३ ॥

मद्यपानं विना देवि निद्रा तस्य न जायते ।
तस्य स्त्री सुभगानाम्नी पतिसेवापरायणा ॥ ४ ॥

और बिना मद्यपान के उसे निद्रा भी नहीं आती थी और उसकी स्त्री सुभगा नामकी पति-सेवा परायण थी ॥ ४ ॥

प्रत्यहं पूजयेद्देवि ! स्वपतिं पापकारिणम् ।
ततो बहुगते काले मरणं व्याघ्रतोऽभवत् ॥ ५ ॥

हे देवि ! वह अपने दुष्कर्मी पतिका नित्य प्रति पूजन किया करती थी, इसी तरह बहुत सा समय बीत जाने पर व्याघ्र द्वारा उसकी मृत्यु हो गयी ॥ ५ ॥

तस्य पत्नी सती जाता चिताग्नौ च तदाहिता ।
सत्यलोके ततो देवि ! कल्पमेकं बुभोज सा ॥ ६ ॥

और उसकी स्त्री चिता में उसके साथ सती होकर सत्यलोक को चली गयी और वहाँ पर एक युग तक सुख भोग किया ॥६॥

पत्या सह वरारोहे ततः पुण्यक्षये सति ।
मृत्युलोकेऽभवज्जन्म कुले महति पूजिते ॥ ७ ॥

फिर पुण्य क्षीण होने पर पतिके साथ मृत्युलोकमें अच्छे कुल में जन्म लिया ॥ ७ ॥

धनधान्यसमायुक्तो बाल्यतो रोगवानपि ।
पुण्यसम्बन्धयोगेन पुण्यस्त्री या च संस्थिता ॥ ८ ॥

और धनादिसे सम्पन्न और बाल्यावस्थासे ही रोगी हुआ तथा पूर्व पुण्यके सम्बन्ध वाली स्त्री मिली ॥ ८ ॥

पुनर्विवाहिता सैव पापात्पुत्रविवर्जिता ।
अस्य पापस्य शान्त्यर्थं पुण्यं शृणु वरानने ॥ ९ ॥

फिर उसके साथ विवाही गई और सन्तान रहित हुई, अब इस पाप के शान्ति के लिये पुण्य कहता हूँ—सुनो ॥ ९ ॥

गृहवित्तषडंशस्य पुण्यकार्यं च कारयेत् ।
गायत्रीमूलमन्त्रेण त्रिलक्षं जपमाचरेत् ॥१०॥
हवनं तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा ।
दशवर्णास्ततो दानं भूमिदानं विशेषतः ॥११॥

अपने धन के छठवें भाग से पुण्य कार्य करे और गायत्री मूल मंत्र से तीन लाख जप कराकर उसके दशांश हवन, तर्पण मार्जन करावे तथा दश प्रकार की गौओं का दान करे, इसमें भूमि दान का विशेष महत्व है ॥ १०-११ ॥

गोविन्देति ततो नाम जपेन्नित्यं वरानने ।
प्रातःस्नानं सदा कुर्यान्माघवैशाखकार्त्तिके ॥१२॥

हे वरानने ! गोविन्दाय नमो नमः, इस मंत्र का नित्य जप करे और कार्त्तिक, माघ तथा वैशाख मास में प्रातःस्नान करे।१२।

कृष्णस्य शतकं देवि ! भूर्जपत्रेण संयुतम् ।
लेखयित्वा विधानेन स्थापयेत्स्वगृहं प्रति ॥१३॥

हे देवि ! श्रीकृष्ण भगवान का नाम एक सौ भोजपत्र पर लिखकर उसे अपने घर में स्थापित कर पूजन करे ॥ १३ ॥

हरिवंशश्रुतिं कुर्यादेकादश्यां व्रतं चरेत् ।
एवं कृत्वा वरारोहे सर्वरोगक्षयो भवेत् ॥१४॥
पुत्रश्च जायते देवि नात्र कार्या विचारणा ॥१५॥

और हरिवंश को सुने एकादशीव्रत करे ऐसा करने से सब रोगोंका नाशऔर पुत्रकी प्राप्ति होती है इसमेंसन्देह नहीं॥१४-१५॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे चित्रानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम सप्तपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५७ ॥

सत्तावनवाँ अध्याय समाप्त ॥ ५७ ॥

अथाष्टपंचाशत्तमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अयोध्यापुरतो देवि ! योजनत्रयदक्षिणे ।
सुधर्मपुरविख्यातो न्यवसन्बहवो जनाः ॥ १ ॥

शिवजी ने कहा—हे प्रिये! अयोध्यापुरी से तीन योजन अर्थात बारह कोश दक्षिण दिशा में सुधर्म नामक एक नगर था जिसमें बहुत से लोग रहते थे ॥१॥

रतिदासेति विख्यातो बभूव वस्तुविक्रयी।
दलाक्षीति समाख्याता तस्य पत्नी च स्वैरिणी ॥२॥

और वहाँ पर रतिदास नाम का एक वस्तु विक्रयी रहता था तथा स्वेच्छाचारिणी दलाक्षी नामकी उसकी स्त्री थी ॥ २ ॥

पतिं न पूजयेद्देवि ! रूपगर्ववशात्तथा।
महिष्यो बहुला आसन्गावो विक्रयकारणात् ॥ ३ ॥

हे देवि! वह अपनी सुन्दरता के गर्वसे पतिकी पूजा नहीं करती थी और व्यापार से भैंस, गाय अधिक हो गई ॥ ३ ॥

महिषीपुत्रघातं च प्रत्यहं खलु जायते।
छागस्य विक्रयो नित्यं छागानां वध एव च ॥ ४ ॥

और वह भैंसे का वध सर्वदा किया करता था बकरियों को तो वेंच देता था किन्तु उसके बच्चों को भी मार देता था ॥४॥

गोप एको महाप्राज्ञो धनार्थी स्वर्णसंयुतः।
तत्र जातो महादेवि! वैश्यमित्रं हि बाल्यतः ॥ ५ ॥

हे महादेवि! और एक अहीर बहुत चतुर और धनिक था जो कि उसका बाल्यावस्था से ही मित्र था ॥ ५ ॥

तस्य गेहे स्थितो देवि! धनधान्यसमन्वितः।
वैश्यपत्नी तदा देवि! गोपं प्रति तदाऽभजत् ॥ ६ ॥

वह उसके गृह में ही सम्पत्ति रखता था और वैश्य की स्त्री जो थी वह अहीर से प्रेम रखती थी ॥ ६ ॥

एवं बहुगते काले तस्य गोपस्य वै मृतिः।
वैश्यगेहे महादेवि! धनं गोपस्य वै खलु ॥ ७ ॥

इस तरह बहुत दिन के बाद उस अहीर की मृत्यु हो गई और उसका जितना धन था ॥ ७ ॥

वैश्येनैव तु तत्सर्वं धनं तस्य व्ययं कृतम् ।
ततः सर्वं वयो यातं वैश्यमृत्युरभूत्तदा ॥ ८ ॥

उसका सब धन वैश्य निजी व्यय में लगाने लगा और कालान्तर में वह भी मर गया ॥ ८ ॥

गङ्गायां च विशालाक्षि पत्नी तस्य तथा मृता ।
वैश्यस्याभूत्तथा स्वर्गो वर्षषष्ठिसहस्त्रकम् ॥ ९ ॥

और उसकी स्त्री का मरण गङ्गा के किनारे हुआ था अतः उस वैश्य की स्थिति साठ हजार वर्ष स्वर्ग में हुई ॥ ९ ॥

वैश्यपत्नी ततो देवि ! कर्दमे नरके गता ।
षष्ठिवर्षसहस्त्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥१०॥
नरकान्निःसृता सा तु सर्पयोनिं तथा गता ।
सर्पयोनिं ततो भुक्त्वा गङ्गायां मरणं खलु ॥११॥

हे देवि ! फिर उसकी स्त्री कर्दम नामक नरक में गयी और साठ हजार वर्ष नरक यातनायें भोग कर फिर सर्प की योनि में उत्पन्न हुई, उसके बाद गंगा तट पर मृत्यु हुई ॥ १०–११ ॥

शूद्रं प्रति पुरा स्नेहस्ततः शूद्रः स चाभवत् ।
वैश्यः स्वर्गफलं भुक्त्वा मानुषत्वं ततोऽगमत् ॥१२॥

पूर्व में उसने शूद्र से प्रेम किया था जिससे कि उसकी उत्पत्ति शूद्र कुल में हुई और वैश्य स्वर्ग फल भोग कर मनुष्य शरीर प्राप्त किया ॥ १२ ॥

धनधान्यसमायुक्तो रूपवानतिथेर्हितः ।
बहुधनी गुणी ज्ञानी पुत्रकन्याविवर्जितः ॥१३॥

और धन-धान्य से युक्त सुन्दर, अतिथि सत्कार को करने वाला कला में प्रवीण तथा सन्तान रहित हुआ ॥ १३ ॥

वैश्यस्य शूद्रजातित्वं पूर्वस्नेहफलं यतः ।
पत्नी सा च समायाता पूर्वसम्बन्धकारणात् ॥१४॥

पूर्व शूद्रस्नेह के कारण शूद्र जाति की वही स्त्री फिर प्राप्त हुई ॥ १४ ॥

यतो द्रव्यं समाभुक्तं सर्वं शूद्रस्य पापिना ।
ततश्चैव समुत्पन्नाः कन्या बाह्वयः सुरेश्वरि ॥१५॥

हे सुरेश्वरि! वह शूद्र का सर्वस्व धन भोग किया था जिससे कि बहुत सी कन्यायें उत्पन्न हुई ॥ १५ ॥

महिषीपुत्रघातित्वाद्वायुरोगादयस्तथा ।
स्वपतेर्वञ्चनं कृत्वा परपुंसि रता यतः ॥१६॥

और जो भैंसे का वध किया था उस पाप से वायु रोग उत्पन्न हुआ, तथा उसकी स्त्री दूसरे से प्रेम रखनेवाली थी ॥ १६ ॥

तस्मात्पुत्रस्य मरणं गर्भपातः पुनः पुनः ।
अस्य शान्तिमहं वक्ष्ये शृणु देवि वरेऽनघे ॥१७॥

उस पाप से पुत्र का मरण तथा गर्भ पात होता था, अब इस पाप की शान्ति मैं कहता हूँ सुनो ॥ १७ ॥

गृहवित्तषडंशेषु पुण्यं कार्यं च यत्नतः ।
वापीकूपतडागादि पथिमध्ये च कारयेत् ॥१८॥

धन का छठवाँ भाग धर्मार्थ में व्यय करे और मार्ग में बावली, कुआँ, तालाब इनका निर्माण करावे ॥ १८ ॥

शिवस्य पूजनं चैव शिवभक्तिमहर्निशम् ।
नमः शिवाय मन्त्रं च पञ्चलक्षं च जापयेत् ॥१९॥

और शिव जी का पूजन करे तथा उनमें सर्वदा प्रेम रक्खे प्रणव सहित नमः शिवाय इस मन्त्र से पाँच लाख जप करावे ॥१९॥

पार्थिवाल्लँक्षसंख्याकान्पूजयेच्च यथाविधि ।
ॐ नमः शिवाय मन्त्रस्तु सर्वपापप्रणाशनः ॥२०॥

इसके बाद एकलक्षपार्थिवार्चन यथाविधि करावे और 'ॐनमः शिवाय" यह मन्त्र सब पापों को नाश करनेवाला तथा मृत्यु लोक में मनोरथ को सिद्ध करते हुए अन्त में मोक्षपद कोदेनेवालाहै ॥२०॥

देहान्ते मुक्तिदश्चैव मर्त्यलोके च कामदः ।
तवनं कारयेद्देवि कुण्डे चैव तु शोभने ॥२१॥
चतुरस्रे विशालाक्षि तिलधान्यादितण्डुलैः ।
ताम्रवर्णां ततो देवि ! गां दद्याद्विदुषे प्रिये ॥२२॥

हे देवि ! चतुरस्र सुन्दर कुण्ड बनवा कर तिल, जव, चावल आदि से हवन करे, इसके बाद लाल रंग की गौ विद्वान् ब्राह्मण को देवे ॥ २१–२२ ॥

निष्कमात्रं तथा स्वर्णं ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ।
एवं कृते न सन्देहो व्याधिनाशो भवेद्ध्रुवम् ॥२३॥

तथा एक निष्क प्रमाण सुवर्ण ब्राह्मण को दे इस विधानको करने से अवश्य कष्ट दूर हो जाता है ॥ २३ ॥

पुत्रश्च जायते देवि ! पुनर्गर्भो न नश्यति ।
काकवन्ध्या पुनः पुत्रं प्रसूयेत न संशयः ॥२४॥

हे देवि! फिर पुत्र उत्पन्न होता है और गर्भ जनित दोषभी निवृत्त होकर काकवन्ध्या को भी पुत्र प्राप्त होता है इसमें सन्देह नहीं ॥ २४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे चित्रानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामाष्टपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५८ ॥

अट्ठावनवाँ अध्याय समाप्त ॥ ५८ ॥

———

अथ एकोनषष्ठितमोऽध्यायः।

शिव उवाच

देशे पुण्यतमे देवि ! प्रतिष्ठानपुरे तथा।
ब्राह्मणो वेदविभ्रष्टस्तत्र वासमकारयेत् ॥ १ ॥

शिवजी बोले—हे देवि ! पुनीत देश में तथा प्रतिष्ठान नामक पुर में वेद कर्म से भ्रष्ट एक ब्राह्मण रहता था ॥ १ ॥

सुरामांसस्य वै भोक्ता नित्यमत्स्यामिषस्य च।
पापकार्ये विशालाक्षि व्ययकर्ता दिने दिने ॥ २ ॥

वह नित्य प्रति मदिरा मछली, माँस आदि को खाता और बेचता था ॥ २ ॥

तस्य स्त्री परमानाम्नी भ्रष्टा चातीव सुन्दरी।
परपुंसि रता नित्यं निर्भया पतिवञ्चिका ॥ ३ ॥

और उसकी स्त्री परमा नामकी परम सुन्दरी थी किन्तु चरित्र भ्रष्ट थी तथा पतिकी अनाज्ञा कारिणी और व्यभिचारिणी थी ॥३॥

एवं सर्वं वयो यातं तयोर्मृत्युरभूत्किल।
पुण्यक्षेत्रे च गङ्गायां देवगन्धर्वपूजिते ॥ ४ ॥

इस प्रकार कालान्तर में देवगन्धर्वों से पूजित पुण्य क्षेत्र में गंगा के किनारे उन दोनों की मृत्यु हो गई ॥ ४ ॥

तस्य विप्रस्य वै स्वर्गं कल्पमेकं वरानने !।
भुक्त्वा च विविधं सौख्यं देवकन्याभिरावृतः॥ ५ ॥
ततः पुण्यक्षये जाते मृत्युलोके सुरेश्वरि।
महाढ्यकुलसम्पन्ने तस्य जन्मोऽभवत्तदा ॥ ६ ॥

हे सुरेश्वरि ! उस ब्राह्मण ने देव कन्यायों से युत अनेक प्रकार के स्वर्ग सुख को एक कल्प तक भोग किया पुनः जब पुण्य क्षीण हुआ तो मृत्युलोक में एक बड़े कुलमें उसका जन्म हुआ ॥५-६॥

जन्मोऽभवत्तस्य नरस्य शुद्धे।
महत्कुले पुण्यजने धनाढ्ये॥
कान्ता तु सैव प्रबभूव या पुरा।
स्थिता तदीया व्यभिचारचित्ता॥ ७॥

उसका उत्तम और बड़े धनिकुल में जन्म हुआ परन्तु वही पहले की व्यभिचारचित्तवाली स्त्री फिर उसकी स्त्री हुई॥ ७॥

मद्यपानादिकं पापं पूर्वजन्मनि यत्कृतम्।
तत्फलेन महादेवि! व्याधिग्रस्तस्ततोऽभवत्॥ ८॥

हे देवि! उसने जो पूर्वजन्म में मद्य पानादि निन्द्य कर्म किया था उसका फल यह मिला कि उसका शरीर व्याधिग्रस्त हो गया॥८॥

अथ शान्तिं प्रवक्ष्यामि यतः पापक्षयो भवेत्।
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं वरानने॥६॥

हे वरानने! अब इस पाप की शान्ति को कहता हूँ जिसके करने से पाप नष्ट हो। अतः गायत्री मूल मन्त्र का एक लक्ष जप करावे॥६॥

हवनं तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा।
देवस्याराधनं नित्यं सूर्य्यस्य व्रतमाचरेत्॥१०॥

और उसके दशांश हवन तर्पण तथा देवताओं की आराधना और सूर्य-व्रत को करे॥ १०॥

प्रयागे नियतः स्नानं माघे मासि यथाविधि।
पत्न्या सह विशालाक्षि ततः पापं प्रणश्यति॥११॥

हे विशालाक्षि! प्रयाग में प्रातःकाल नियम से माघ मास में स्त्री सहित स्नान करे तो सब पाप नष्ट हो जायँ॥ ११॥

षडंशं च ततो देवि! विप्रेभ्यो दानमाचरेत्।
ततो वर्षेण महतीं गां च दद्यात्पयस्विनीम्॥१२॥

और अपने धन के षष्ठांश प्रमाण द्रव्य ब्राह्मणको दान देवे तथा प्रति वर्ष दूध देने वाली अच्छी गाय दान करे॥ १२॥

भूमिं वृत्तिकरीं दद्यात्पुत्रपौत्रानुजीविनीम् ।
एवं कृते न सन्देहो वंशो भवति नान्यथा ॥१३॥

और उपजाऊ भूमि ब्राह्मण को दान दे जिससे कि उसके परिवार का निर्वाह हो और ऐसा करने से अवश्य वंश वृद्धि होती है सन्देह नहीं ॥ १३ ॥

रोगार्तो मुच्यते रोगात्काकवन्ध्या सुतं लभेत् ।
गर्भभ्रष्टा लभेत् पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम् ॥१४॥

और रोगी रोग से मुक्त हो जाय काकवन्ध्या पुत्र प्राप्त करे और गर्भपात दोष वाली स्त्री भी उत्तम पुत्र प्राप्त करे ॥ १४ ॥

इतिश्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे चित्रानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकोनषष्ठितमोऽध्यायः ॥ ५९ ॥

उनसठवाँ अध्याय समाप्त ॥ ५९ ॥

अथ षष्ठितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

कान्यकुब्जे महादेवि ! राजात्येकोऽवसत्पुरा ।
राजधर्मरतः शान्तः प्रजापालनतत्परः ॥ १ ॥

शिवजी ने कहा—हे महादेवि ! कान्यकुब्ज देश में एक राजा रहता था, जो कि राजधर्मानुकूल प्रजापालन करने वाला शान्त बुद्धि था ॥ १ ॥

रुद्रवर्मेति विख्यातो भार्या तस्य प्रभावती ।
एकस्मिन्दिवसे देवि ! ब्राह्मणो भयपीडितः ॥ २ ॥
शरणं श्रावयामास शरणार्थी द्विजोत्तमः ।
तस्य भार्या महादेवि ! सुरूपाप्यतिसुन्दरी ॥

हे देवि ! रुद्रवर्म नामक ब्राह्मण जिसकी स्त्री प्रभावती नाम

की रूपवती थी, वह ब्राह्मण किसी दिन भय से संतप्त होकर शरण के लिये राजा के पास आया ॥ २-३ ॥

राजपुत्रेण तस्यां तु गमनं मोहतः कृतम् ।
शरणं दत्तवान् राजा पुत्रस्नेहेन यन्त्रितः ॥ ४ ॥

उसकी स्त्री की सुन्दरता पर मुग्ध होकर राजपुत्र ने उसके साथ दुष्कर्म किया, फिर इस प्रकार का पुत्र स्नेह देख कर राजा ने उसे शरण दिया ॥ ४ ॥

एवं बहुगते काले नृपस्य मरणं यदा ।
तदा यमाज्ञया दूतैः क्षिप्तो नरककर्दमे ॥ ५ ॥

इस प्रकार बहुत समय बीतजाने पर राजाकी मृत्यु हो गयी तब यमाज्ञा से उनके दूतों ने उसे कर्दम नामक नरक में ले जाकर डाल दिया ॥ ५ ॥

षष्टिवर्षसहस्राणि नरके परिपच्यते ।
नरकान्निःसृतो देवि ! शूकरत्वं ततोऽलभत् ॥ ६ ॥

और वह उसमें साठ हजार वर्ष तक भोगता रहा, उससे छुटकारा पाने पर फिर शूकर की योनि में आया ॥ ६ ॥

पुनः शृगालयोनिं च मानुषत्वं ततोऽगमत् ।
धन-धान्यसमायुक्तो बहुशो गुणवानपि ॥ ७ ॥

फिर उसके बाद शृगाल की योनि प्राप्तकर मनुष्य योनिमें जन्म लिया और धन-धान्य से युक्त गुणवान् हुआ ॥ ७ ॥

पुनर्विवाहिता जाता पत्नी तस्य प्रभावती ।
पूर्वकर्मफलाद्देवि ! तस्य पुत्रो न जायते ॥ ८ ॥

हे देवि ! पूर्व जन्मवाली प्रभावती नामकी स्त्री फिर उसके साथ विवाही गयी और पूर्व दोष से पुत्र नहीं होते थे ॥ ८ ॥

शरीरं सततं देवि ! ज्वरेणैव प्रपीडितम् ।
वातपित्तकफानां च सम्भवः स्याद्वयोगते ॥ ९ ॥

और उसका शरीर हमेशा ज्वर से पीड़ित रहता था तथा कालान्तर में वात, पित्त, कफ तीनों करके पीड़ित हो गया ॥९॥

अस्य दानं शृणु त्वं हि यथा पापक्षयस्तथा।
गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥१०॥

अब इसका दान कहता हूँ जिस प्रकारसे पाप नष्ट हो सुनो। अपने धनका आठवाँ भाग द्रव्य पुण्य कार्यमें व्यय करे ॥१०॥

वापीकूपतडागानां जीर्णोद्धारं यदा भवेत्।
तदा पापं क्षयं याति पूर्वजन्मसमुद्भवम् ॥११॥

और यदि बावली, कुआँ, पोखरा इनका जीर्णोद्धार करावे तो पूर्व जन्मके किये हुए पाप नष्ट हो जायँ ॥ ११ ॥

विष्णोरराट्मन्त्रेण जपं कुर्याद्विचक्षणः।
दद्याद्गां वेदविदुषे सवत्सां चैव शोभने ! ॥१२॥

हे सुशोभने ! किसी विद्वान् से "विष्णोरराट्०" इस मन्त्रका जप कराकर व्यायी हुई गौ वेदज्ञ ब्राह्मणको दान करे ॥ १२ ॥

वस्त्ररत्नसमायुक्तां घण्टाचामरभूषिताम्।
ग्रहणेऽर्कहिमांशोश्च काश्यां स्नानं समाचरेत् ॥१३॥

और उस गौ को वस्त्र, रत्न, घंटा आदि से सुसज्जित करके दे, फिर चन्द्र, सूर्यके ग्रहण समय में काशी में स्नान करे ॥१३॥

निष्कत्रयसुवर्णस्य कमलं कारयेत्ततः।
ब्राह्मणाय वरारोहे ! प्रदद्यात्कमलं शुभम् ॥१४॥

और तीन निष्क प्रमाण सोने का कमल बनवाकर ब्राह्मणको दान करे ॥ १४ ॥

एवंकृते वरारोहे सर्वपापक्षयो भवेत्।
अपि वन्ध्या लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम् ॥
सर्वे रोगाः क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥१५॥

हे वरारोहे ! इस प्रकार के विधान को करने से सब पापों

का नाश और वन्ध्या को भी दीर्घजीवि उत्तम पुत्र प्राप्त हो, तथा सवप्रकार के रोग भी दूर हो जाते हैं, इसे विना विचारे ही करना चाहिये ॥ १५ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे स्वातिनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम षष्टितमोऽध्यायः ॥ ६० ॥

साठवाँ अध्याय समाप्त ॥ ६० ॥

अथैकषष्टितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

गङ्गाया दक्षिणे कूले विन्ध्ये च नगरोत्तमे ।
द्विजोऽप्येकोऽवसद्देवि ! ब्रह्मकर्मविवर्जितः ॥ १ ॥

शिवजी बोले—हे देवि ! गंगा के दक्षिण तट पर विन्ध्य पर्वत के समीप एकही उत्तम नगर था, जिसमें ब्रह्मकर्म से भ्रष्ट एक ब्राह्मण निवास करता था ॥ १ ॥

अनाचाररतो नित्यं परस्त्रीलम्पटः शठः ।
व्यापारं कुरुते नित्यं गोहिरण्यगजादिकम् ॥ २ ॥

वह सदाचार से रहित पर स्त्री गामी और कृपण था, तथा गौ, सुवर्ण हाथी आदि का सर्वदा व्यापार किया करता था ॥२॥

बहुद्रव्यमभूत्तस्य त्रिंशत्कोटिप्रमाणकम् ।
द्रव्यस्य संग्रहं नित्यं न च किञ्चिद्ददाति सः ॥ ३ ॥

इस प्रकार उसके पास बहुत धन अर्थात् तीन करोड़ द्रव्य हो गया परन्तु वह संग्रह किये हुए धन में से कुछ भी दान नहीं करता था ॥ ३ ॥

स्वभार्यां च परित्यज्य परभार्यारतो द्विजः ।
धनेश्वर इति ख्यातं तस्य नाम पुराभवत् ॥ ४ ॥

और वह अपने स्त्री का परित्याग करके दूसरे की स्त्री के साथ प्रेम करता था और धनेश्वर नाम करके प्रसिद्ध था ॥४॥

ततो बहुगते काले तस्य मृत्युर भूत्किल ।
यमदूतेन वै बद्ध्वा निक्षिप्तो नरकार्णवे ॥ ५ ॥

फिर बहुत समय बीत जाने पर उसकी मृत्यु हो गयी तब यमदूतों ने उसे बाँधकर नरक समुद्र में डाल दिया ॥ ५ ॥

महाघोरे सुरश्रेष्ठ ! कल्पमेकं तदाऽवसत् ।
पुनर्व्याघ्रस्य योनिं च वृषयोनिं ततोऽलभत् ॥ ६ ॥

हे सुरश्रेष्ठ ! तब उसने महाघोर नरक में एक कल्प तक वास किया, उसके बाद व्याघ्र की योनि में, फिर बैल की योनि में उत्पन्न हुआ ॥ ६ ॥

पुनर्मानुषयोनिं च मृतवत्सत्वमाप्तवान् ।
महारोगसमायुक्तो न सुखं लभते क्वचित् ॥ ७ ॥

तत्पश्चात् फिर मनुष्य योनि में जन्म लिया और मृतसन्तान वाला महारोगी हुआ और सुख उसे कभी नहीं मिला ॥ ७ ॥

अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि वरानने ! ।
गायत्रीमूलमन्त्रेण दशलक्षजपं यदा ॥ ८ ॥

हे देवि ! अब इसकी शान्ति कहता हूँ उसे सुनो, यदि गायत्री मूल मंत्र से दश लक्ष जप करावे ॥ ८ ॥

दशांशहवनं चैव तदा पापक्षयो भवेत् ।
गोविन्दस्य सदा ध्यानं सदा गोविन्दकीर्तनम् ॥९॥
नित्यं तु पूजयेद्देवं शङ्खचक्रगदाधरम् ।
पीताम्बरधरं श्यामं श्रीवत्सेन विराजितम् ॥१०॥

और दशांश हवन करावे तो सब पाप क्षय हो जायँ, एवं नित्य प्रति विष्णु भगवान् का ध्यान और कीर्तन करे। शंख, चक्र, गदा, पद्म तथा पीताम्बर को धारण करनेवाले श्याम स्वरूप ऐसे लक्ष्मी से सुशोभित विष्णु का पूजन करे ॥९-१०॥

प्रत्यब्दं कार्त्तिके मासि तुलसीं विष्णुरूपिणीम् ।
पूजयेद्दीपदानं च दद्याद्भार्यासमन्वितः ॥११॥

और प्रति वर्ष कार्त्तिक मास में विष्णु रूपी तुलसी वृक्ष का पूजन तथा स्त्री के साथ दीप दान करे ॥ ११ ॥

गोदानं शास्त्ररीत्या च गोदानाच्च वसुन्धराम् ।
यथाशक्ति च भो देवि ! ब्राह्मणाय शिवात्मने ॥१२॥

हे देवि ! शास्त्र रीति से गोदान और भूमि का दान शिव भक्त ब्राह्मण को शक्ति के अनुसार करे ॥ १२ ॥

एवंकृते न सन्देहः पूर्वजन्मकृतं च यत् ।
तत्पापं नाशमायाति सर्वरोगक्षयो भवेत् ॥१३॥

इस प्रकार के विधान को करने से जितने पूर्व जन्म कृत पाप हैं वे सब नष्ट हो जाते हैं और सब रोगों का भी शमन हो जाता है ॥ १३ ॥

वन्ध्यात्वं प्रशमं याति पुत्रलाभो भवेद् ध्रुवम् ।
काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं नात्र कार्या विचारणा ॥१४॥

वन्ध्यापन और काकवन्ध्या ये दोनों दोष निवृत्त होकर अवश्य पुत्र प्राप्त होता है इसमें संशय नहीं ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे स्वातिनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६१ ॥

इकसठवाँ अध्याय समाप्त ॥ ६१ ॥

अथ द्विषष्टितमोऽध्यायः।

शिव उवाच।

कुरुक्षेत्रे महातीर्थे वल्लवो न्यवसत्प्रिये।
कृषिकर्मरतो नित्यं क्रयविक्रयतत्परः॥ १॥

शिवजीने कहा कि—हे प्रिये! कुरुक्षेत्र नामक महातीर्थमें एक अहीर रहता था, वह कृषि कर्मको करनेवाला व्यवसायी था॥१॥

महिषीगोवृषाणां च सङ्ग्रहं चाकरोद्बहु।
तस्य भार्या वरारोहे परपुंसि रता सदा॥ २॥

और वह गाय, भैंस, बैल आदि का बहुत संग्रह किया था, किन्तु उसकी स्त्री दूसरे से प्रेम करनेवाली थी॥ २॥

स्वपतिं तर्जयेन्नित्यं सदा निष्ठुरभाषणात्।
सङ्ग्रहो बहुद्रव्याणां न दानं दत्तवान् क्वचित्॥ ३॥

वह नित्य ही कटुवचनों द्वारा अपने पतिका निरादर कियाकरती थी और पास में बहुत द्रव्य रहते हुए दान कभी नहीं किया॥३॥

एकस्मिन् दिवसे देवि! चन्द्रपर्वणि शोभने।
दशसंख्यं च गोदानं कृतं क्षेत्रे तदा किल॥ ४॥

हे देवि! एक दिन चन्द्रग्रहण के उत्तम पर्व में उसने धर्म क्षेत्र में दश गौवों का दान किया॥ ४॥

ततो बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्किल।
यमदूतेन भो देवि! निक्षिप्तो नरके किल॥ ५॥

इस प्रकार बहुत सा समय बीत जाने पर उसकी मृत्यु हो गयी तब यमदूतों ने उसे नरक में डाल दिया॥ ५॥

त्रिंशद्वर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम्।
पुनर्महिषयोन्यां च जातः खलु वरानने!॥ ६॥

और तीस हजार वर्ष नरक यातनायें भोगकर फिर भैंस की योनि में उत्पन्न हुआ ॥ ६ ॥

नरयोनिं पुनर्लेभे धन-धान्यसमन्वितः ।
जातः खलु वरारोहे ! पुत्रकन्याविवर्जितः ॥ ७ ॥

हे वरारोहे ! उस योनिके बाद धनादि से युक्त मनुष्य योनि में उत्पन्न हुआ, किन्तु सन्तान रहित हुआ ॥ ७ ॥

रोगवान्नात्र सन्देहो जङ्घापीडा ततोऽधिका ।
अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणुत्वं च यथायथम् ॥ ८ ॥

और निःसंदेह वह रोगी था, परन्तु विशेष करके उसके जाँघोंमें पीड़ा होती थी, अब इसकी यथार्थ शान्ति कहता हूँ, तुम सुनो ॥८॥

षडंशं च ततो दानं विप्राय विदुषे तथा ।
गायत्रीलक्षजाप्यं च ततो होमं प्रकल्पयेत् ॥ ९ ॥

तदर्थ अपने द्रव्यका छठवाँ भाग वेदज्ञ ब्राह्मण को दान करे, तथा गायत्री मन्त्र का एक लाख जप कराकर दशांश हवन ॥९॥

दशांशं तर्पणं कुर्यात्तद्दशांशं च मार्जनम् ।
गामेकां कपिलां दद्यात् स्वर्णशृङ्गीसहाम्बराम् ॥१०॥

दशांश तर्पण और मार्जन करे, पश्चात् फिर एक कपिला गौ को सोने से सींग मढ़ाकर वस्त्र के साथ दान दे ॥ १० ॥

ब्राह्मणान्पञ्चपञ्चाशत् पक्वान्नेन च भोजयेत् ।
पञ्चपात्राणि दद्याद्वै शय्यादानं यथाविधि ॥११॥
दशवर्णा प्रदातव्या ब्राह्मणेभ्यो यथाविधि ।
एवं कृते न सन्देहः शीघ्रं पुत्रः प्रजायते ॥१२॥

और ५५ पचपन ब्राह्मणों को पक्वान्न भोजन कराकर शास्त्र विधि से पाँच पात्र (बर्तन) शय्यादान और दशवर्ण की गायों का दान उन ब्राह्मणों को करे ॥ ११-१२ ॥

रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥१३॥

इस प्रकार की विधि को कराने से शीघ्र ही पुत्र की प्राप्ति और सब रोगों का नाश होता है इसमें सन्देह नहीं, इसके करने में विचार न करे ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे स्वातीनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम द्विषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६२ ॥

बासठवां अध्याय समाप्त ॥ ६२ ॥

अथ त्रिषष्टितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

हस्तिनानगरं ख्यातमासीज्जन्तुमनोहरम् ।
अवसंस्तत्र भो देवि! नराः सर्वे विचक्षणाः ॥ १ ॥

शिवजी बोले—हे देवि! हस्तिनापुर नाम का प्रसिद्ध नगर था, जिसमें बसने वाले सभी जन्तु और मनुष्य सुन्दर तथा प्रवीण थे ॥ १ ॥

तन्मध्ये शूद्र एको हि धर्मात्मा ज्ञानवानपि ।
स्वधर्मकर्मणः कृत्वा व्ययकर्त्ता दिने दिने ॥ २ ॥

उनके बीच धर्मात्मा और ज्ञानी एक शूद्र निवास करता था, वह अपना सब समय अपने धर्म-कर्म में ही बिताता था ॥ २ ॥

तस्य पुत्रद्वयं जातं शठं पापयुतं सदा ।
प्रत्यहं जीवघातेन मद्यवेश्यारतौ च तौ ॥ ३ ॥

बादको उसके पापात्मा और शठ दो पुत्र उत्पन्न हुए, वे दोनों नित्य जीवहिंसा और मद्यपान तथा वेश्यागमन में रत रहते थे ॥३॥

द्यूतेनैव महादेवि! राजा वह्निश्च जक्षतः ।
न च वारयितुं शक्यौ शूद्रेणैतौ तदा शिवे ॥ ४ ॥

हे शिवे! उसके दोनों पुत्र नित्यप्रति जुवा खेलते थे और

उनके इस निन्दित कर्म को अनेक तरह से उद्योग करके भी शूद्र दूर न कर सका ॥ ४ ॥

तत्स्तु दैवयोगेन प्रयागे शूद्र आगतः ।
मासमेकं ततः स्थित्वा तस्य मृत्युरभूत्किल ॥ ५ ॥

इसके पश्चात् दैवयोग से वह शूद्र प्रयाग में आया और वहाँ पर एक मास रहा बाद को उसकी मृत्यु हो गई ॥ ५ ॥

विष्णुदासांस्तदा लब्ध्वा मृत्युलोके वरानने ।
विमानवरमारूढो गतः स्वर्गे वरानने ॥ ६ ॥

हे वरानने ! वह विष्णु भक्तों के साथ लोक से विमान द्वारा स्वर्ग लोक में चला गया ॥ ६ ॥

तस्य भार्या विशालाक्षि मृत्युलोके सुरेश्वरि ।
सा जाता विधवा नारी किञ्चित्काले गतेसति ॥ ७ ॥
परपुंसि रता जारे प्रत्यहं व्यभिचारिणी ।
ततो बहुगते काले तस्या मृत्युरभूत्किल ॥ ८ ॥

और उसकी विधवा स्त्री कुछ काल मृत्यु लोक में रही और उसकी प्रवृत्ति दुष्कर्म में अर्थात् पर पुरुष में हो गई, इस प्रकार कालान्तर में उसकी भी मृत्यु हो गई ॥ ७-८ ॥

यमदूतैर्महाघोरे निक्षिप्ता नरके तदा ।
विंशत्यब्दसहस्राणि नरके संप्रपीडिता ॥ ९ ॥

तब यमदूतों ने कठिन नरक समुद्र में ले जाकर उसे डाल दिया और बीस हजार वर्ष नरक की यातनाओं द्वारा संतप्त होकर पीड़ित रही ॥ ९ ॥

शूद्रः पुण्यक्षये जाते मृत्युलोके सुरेश्वरि ।
जन्म सम्प्राप्तवान्देवि मध्यदेशे सुरेश्वरि ॥१०॥

हे देवि ! और वह शूद्र भी पुण्य नष्ट हो जाने पर मृत्यु लोक में आकर मध्यदेश में जन्म लिया ॥ १० ॥

तदा सा तु भवेन्नारी या पुरा व्यभिचारिणी ।

पूर्वजन्मप्रसङ्गाच्च वंशच्छेदो हि जायते ॥११॥

जो पूर्वजन्म में उसकी स्त्री थी वही जन्मान्तर के संस्कार से फिर स्त्री हुई और पूर्व पाप से सन्तान रहित हुई॥ ११ ॥

रोगश्च जायते देवि! कष्टं चैव दिने दिने ।
अस्य पापस्य वै शान्तिं तत्समासेन मे शृणु ॥१२॥

और उसे अनेक प्रकार के रोगों से नित्य प्रति कष्ट हुआ करता था। अब इस पापकी शान्ति संक्षेपतः मुझसे सुनो ॥१२॥

स्वर्णवृक्षवरं कृत्वा स्वाङ्गुष्ठपरिमाणकम् ।
फलपुष्पसमायुक्तं पलपञ्चदशस्य तु ॥१३॥
तस्य वृक्षस्य वै मूले शालिग्रामशिलां शुभाम् ।
पूजयित्वा विधानेन विष्णुरूपं वरानने! ॥१४॥
ब्राह्मणाय ततो दद्याद् गां च दद्यात्पयस्विनीम्।
गायत्रीमन्त्रजाप्यं तु लक्षमेकं तु कारयेत् ॥१५॥

हे वरानने! पन्द्रह पल सोने के फल पुष्पों सहित एक वृक्ष अपने अंगूठे के बराबर बनवाकर उसके नीचे जड़ में शालिग्राम की मूर्त्ति रखकर विधिवत् उस विष्णु प्रतिमा का पूजन करके उस वृक्षको और एक दूध देनेवाली गौ ब्राह्मण को दान करे तथा गायत्री मूल मंत्र से एक लक्ष जप करावे ॥१३-१४-१५॥

ततः पापविशुद्धिःस्यात्पुत्रो भवति नान्यथा ।
सर्वे रोगाःक्षयं यान्ति काकवन्ध्या लभेत्सुतम् ॥१६॥

तब पाप की शुद्धि और पुत्र प्राप्ति होती है, तथा सब रोग दूर होकर काकवन्ध्या को भी पुत्र होता है ॥ १६ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे
स्वातिनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं
नामत्रिषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६३ ॥

तिरसठवाँ अध्याय समाप्त ॥ ६३ ॥

अथ चतुःषष्टितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

कपिले नगरे देवि ! क्षत्री वै न्यवसत्पुरा ।
क्षत्रधर्मविहीनश्च वैश्यकर्मरतः सदा ॥ १ ॥

शिवजी बोले—हे देवि ! प्राचीन समय कपिल नगर में एक क्षत्री रहता था, वह क्षत्रिय धर्म से रहित होकर वैश्य (व्यापार) कर्म को करता था ॥ १ ॥

प्रत्यहं वैश्यवृत्त्या तु व्ययं कुर्याद्दिने दिने ।
बहु द्रव्यं तदा तेन सञ्चितं त्यक्तधर्मणा ॥ २ ॥

वह अपना धर्म अर्थात् क्षत्रिय धर्म का परित्याग कर वैश्य कर्म द्वारा द्रव्य उपार्जन कर संचित किया ॥ २ ॥

महालोभेन संयुक्तो धर्मचर्चा न कुत्रचित् ।
पत्नीपुत्राय भोगार्थं नादात्कृपणकेशरी ॥ ३ ॥

और लोभ के वश होकर वह कभी भी धर्म की चर्चा नहीं किया और इतना कृपण था कि अपने स्त्री बच्चों को भी व्यय के लिये कुछ नहीं देता था ॥ ३ ॥

एवं बहुगते काले मरणं सर्पतस्तदा ॥ ४ ॥

इस प्रकार बहुत काल के बाद सर्प के काटने से उसकी मृत्यु हो गई ॥ ४ ॥

आसीत्तदीया प्रमदापि तादृक् ।
यतो जानो योग्यमुपैति सर्वम् ॥
यथार्थतः क्षिप्तमतीवदुःखे ।
यमस्य दूतैः कृतपादशृङ्खलः ॥५॥

और उसकी स्त्री उसी तरह की थी कारण की जो जिस धर्म कर्म में रहता है उसकी उसी प्रकार की प्रवृत्ति हो जाती

है, वैश्य को यमदूत पाँव में शृंखला (बेड़ी) लगाकर दुःसह नरक में डाल दिये ॥५॥

युगमेकं वरारोहे कष्टं भुक्त्वा सुदारुणम् ।
ततोऽभूत्स ततो देवि ! महिषी वृषभो हयः ॥ ६ ॥

और वह एक युग पर्यन्त नरक कष्ट भोगकर फिर भैंस तथा वृष योनि में प्राप्त हुआ बाद को घोड़े की योनि में गया ॥६॥

पुनश्च मानुषो भूत्वा तस्य भार्या च या पुरा ।
विवाहिता च सा देवि । तस्य पुत्रो न जायते ॥ ७ ॥

हे देवि ! क्रमशः उन योनियों को भोगकर फिर नर योनि में जन्म लिया और पूर्व जन्म में जो उसकी स्त्री थी वही फिर इसकी स्त्री एवं पुत्र रहित हुई ॥ ७ ॥

पुरा ह्येकाभवत्कन्या पुनः सूतिविवर्जिता ।
रोगो भवति देहे च मध्ये मध्ये ज्वरो भवेत् ॥ ८ ॥

प्रथम उसे एक कन्या हुई उसके बाद फिर कोई सन्तान न हुई और शरीर में रोग तथा बीच बीच में ज्वर हो जाया करता था ।

अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि ! वरानने ।
कल्पवृक्षवरं कुर्यात स्वाङ्गुष्ठपरिमाणकम् ॥ ९ ॥

हे देवि ! अब इसकी शान्ति कहता हूँ सुनो। पन्द्रह पल सुवर्ण का सुन्दर एक कल्प-वृक्ष अपने अँगूठे बराबर बनवावे ॥ ९ ॥

सुवर्णस्य महादेवि ! पलपञ्चदशस्य तु ।
वेदीं रौप्यमयीं कुर्यात् पलञ्चदशस्य तु ॥१०॥
तत्र वृक्षं समारोप्य फलपुष्पेण संयुतम् ।
अष्टम्यां च चतुर्दश्यां नवम्यां च सुरेश्वरि ! ॥११॥
तस्य वृक्षस्य वै मूले वृषकेतुं सुरेश्वरि ।
सगणं देवमीशानमर्चयित्वा यथाविधि ॥१२॥

और १५ पल चाँदी की एक वेदी निर्माण करे उस वेदी पर फल पुष्प सहित वृक्ष का रोपण करके उसके मूल में अष्टमी, चतुर्दशी या नवमी तिथि को गणों के सहित शिवजी का यथाविधि पूजन करे ॥ १०-१२ ॥

यथाशक्ति वरारोहे गन्धधूपादिभिस्तथा ।
साष्टाङ्गदण्डवत्तत्र देवदेवं समापयेत् ॥१३॥

फिर यथा शक्ति गन्धादि से पूजा करने के बाद अन्त में साष्टांग दण्डवत् करके समाप्त करे ॥ १३ ॥

मन्त्रेणानेन भो देवि ! विसर्जनमथाचरेत् ।
ॐ नमः शिवाय देवाय शिवायै सततं नमः ॥१४॥

हे देवि ! "ॐ नमः शिवाय देवाय शिवायै सततं नमः" इस मन्त्र द्वारा शिव-पार्वती का विसर्जन करे ॥ १४ ॥

मम पूर्वकृतं पापं जन्मजन्म-समुद्भवम् ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव ! देव्या सह महेश्वर ॥१५॥

हे महेश्वर ! उमा सहित आप मेरे अनेक जन्मों के किये हुये पापों का शमन करें ॥ १५ ॥

ततो वै पूजयेद्विप्रं वेदब्रह्मस्वरूपिणम् ।
पट्टावस्त्राद्यलङ्कारैर्विविधैर्मोदकैरपि ॥१६॥

इसके बाद ब्रह्मस्वरूप वेदज्ञ ब्राह्मण का अनेक प्रकार के वस्त्र भूषणादि से विधिवत् पूजन करे ॥ १६ ॥

ततो वृक्षं च वेदीं च कपिलां गां सवत्सकाम् ।
ब्राह्मणाय ततो दद्यात् पूर्वपापविशुद्धये ॥१७॥

और पूर्वकृत पाप शुद्धि के निमित्त वेदी सहित वृक्ष को तथा सवत्सा गौ ब्राह्मण को दान करे ॥ १७ ॥

भक्त्या मम महादेवि ! शिवरात्र्यां विशेषतः ।
आजन्ममरणाद्देवि व्रतं कुर्यात् प्रयत्नतः ॥१८॥

हे देवि विशेष श्रद्धा से शिवरात्रि के दिन जीवन पर्यन्त मेरा व्रत करे ॥ १८ ॥

एवंकृते महादेवि ! शीघ्रं पुत्रः प्रजायते ।
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति वन्ध्या च लभते सुतम् ॥ १९॥
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरजीविनमुत्तमम् ॥२०॥

इस प्रकार के विधान को करने से शीघ्र पुत्र प्राप्त होकर रोग भी दूर हो जाते हैं, और वन्ध्या तथा मृतवत्सा को भी दीर्घजीवी उत्तम पुत्र लाभ होता है ॥ १९–२० ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे विशाखानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चतुष्षष्टितमोऽध्यायः ॥ ६४ ॥

चौसठवाँ अध्याय समाप्त ॥ ६४ ॥

अथ पञ्चषष्टितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

विष्णुकांच्यां महादेवि ! ब्राह्मणो वेदपारगः ।
अत्याचाररतः शान्तो विष्णुभक्तिपरायणः ॥ १ ॥

महादेव जी बोले—हे देवि ! अचार प्रिय शान्त चित्त, विष्णु भक्ति परायण और वेदपारंगत एक ब्राह्मण विष्णुकाँचीपुरी में निवास करता था ॥ १ ॥

लक्षितो विष्णुचक्रेण विप्रो विद्याविवर्जितः ।
न वेदः पाठ्यते तेन न विप्रःस्पृश्यते क्वचित् ॥ २ ॥

वह ब्राह्मण विष्णु चिन्ह से चक्राङ्कित विद्या विहीन और वेद को न पढ़ाने वाले ब्राह्मण को कभी स्पर्श नहीं करता था ॥२॥

द्विजानां स्मार्त्तवृत्तीनां विद्वेषं च करोति सः ।
शिवशक्तिरतानां च नाभिवादनमाचरेत् ॥ ३ ॥

और वह स्मार्त वृत्ति वाले याने, शैव ब्राह्मणों से द्वेष भाव रखता शिवभक्तिवालों को प्रणाम भी नहीं करता था ॥ ३ ॥

एवं वयोगते देवि ! वृद्धे जाते वरानने ।
मरणं तस्य वै जातं ब्राह्मणस्य वरानने ॥ ४ ॥

हे वरानने ! इस तरह से अवस्था व्यतीत होते-होते जब वृद्धावस्था को प्राप्त हुआ तब उस ब्राह्मण की मृत्यु हुई ॥ ४ ॥

यमदूतैर्महाघोरे नरके पातितस्तदा ।
रौरवे च तदा देवि ! षष्टिवर्षसहस्रकम् ॥ ५ ॥

उसे यम दूतों ने रौरव नामक महा दुस्सह नरक में ले जाकर साठ हजार वर्ष तक छोड़ दिया ॥ ५ ॥

भुक्त्वा नरककष्टं च पुनर्जातः सरीसृपः ।
मानुषत्वं पुनर्जातः कष्टानि विविधानि च ॥ ६ ॥

वह उस नरक के कष्टों को भोगकर बिच्छू की योनि में उत्पन्न हुआ, इस प्रकार अनेक योनियों में भोगता हुआ फिर मनुष्य योनि में जाकर जन्म लिया ॥ ६ ॥

पुत्रस्य मरणं कान्ते ! प्रतिवर्षे महाव्यथा ।
पुनः स्त्री काकवन्ध्या स्यात्पूर्वजन्मप्रसंगतः ॥ ७ ॥

हे कान्ते ! उस ब्राह्मण के पुत्र का मरण और महाकष्ट प्रति वर्ष होता रहा तथा पूर्वजन्म के कर्मवश उसकी स्त्री काकवन्ध्या हो गई ।७

धन-धान्यसमायुक्तोऽप्येवं दुःखं महद्भवेत् ।
अथ वक्ष्ये महादेवि ! पूर्वपापस्य निष्कृतिम् ॥ ८ ॥

और धन-धान्य से सम्पन्न होते हुए भी वह बहुत दुःखी हुआ । हे देवि ! अब इसके पूर्वजन्मकृत पापों का निस्तार कहता हूँ सुनो ॥ ८ ॥

गङ्गामध्ये प्रदातव्यं पूर्वपापविशुद्धये ।
निष्कत्रयसुवर्णस्य कमलं निर्मितं शुभम् ॥ ९ ॥

पूर्व पापशुद्धि के लिये तीन निष्क प्रमाण सोने का एक कमल बनवाकर गंगा के मध्य में ब्राह्मण को दान करे ॥ ९ ॥

दद्याद्वेदविदे देवि ! ब्राह्मणाय शुभार्थिने ।
अष्टांशं विभवं देवि ! ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥१०॥

हे देवि ! शुभचिन्तक वेदज्ञ ब्राह्मण को घर के धन का आठवाँ भाग (द्रव्य) दान करे ॥ १० ॥

गायत्रीजातवेदाभ्यां दशायुतजपं तथा ।
कूष्मांडं नारिकेलञ्च पञ्चरत्नसमन्वितम् ॥११॥

और गायत्री तथा "जातवेदसे" इस मंत्र का दश अयुत (एक लक्ष) जप कराकर सफेद कोहड़ा या नारियल में पञ्चरत्न भरकर दान करे ॥ ११ ॥

एवंकृते भवेद्देवि ! पूर्वपापविशुद्धता ।
पुत्रं चैव लभेद्देवि ! चिरञ्जीविनमुत्तमम् ॥१२॥

इस विधि को करने से पूर्वपाप की शुद्धि हो तथा उत्तम दीर्घजीवी पुत्र प्राप्त करे ॥ १२ ॥

व्याधयः प्रशमं यान्ति ज्वराःसर्वे तथाविधाः ।
काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम् ॥१३॥

और सब व्याधि तथा ज्वर भी दूर हो जाता है, और काकवन्ध्या स्त्री भी आयुष्मान पुत्र प्राप्त करे ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे विशाखानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामपञ्चषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६५ ॥

पैंसठवाँ अध्याय समाप्त ॥ ६५ ॥

अथाषट्षष्टितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

विदर्भनगरे देवि ! क्षत्री ह्येकोऽवसत्पुरा ।
तेजवर्मेति विख्यातो द्विजानां वृत्तिहारकः ॥ १ ॥

शिवजी कहे कि—हे देवि ! पूर्व विदर्भ नगर में तेजवर्मा नाम करके एक क्षत्री ब्राह्मणों की जीविका हरण करने वाला रहता था ॥ १ ॥

प्रजानां दुःखदो नित्यं वेदानां चैव निन्दकः ।
तस्य त्रासवशात्सर्वाः प्रजा ग्रामात्पलायिताः ॥ २ ॥

वह नित्य प्रजाओं को कष्ट देता और वेदों की निन्दा करता था, इस तरह के व्यवहार तथा उसके त्रास से त्रसित होकर सारी प्रजा नगर से भागने लगी ॥ २ ॥

एवं बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्किल ।
यमदूतैर्महाघोरे निक्षिप्तो नरके ततः ॥ ३ ॥

इसके अनन्तर बहुत समय के बाद उसकी मृत्यु हो गई। तब यमदूतोंने उसको घोर नरक में लेजाकर रखा ॥ ३ ॥

द्विसप्ततिसहस्राणि घोरे नरककर्दमे ।
भुक्तं नरककष्टं च सूचीमुखसमुद्भवम् ॥ ४ ॥
नरकान्निर्गतो देवि ! गर्दभत्वं ततोऽगमत् ।
रासभत्वात्ततो देवि ! मानुषत्वं ततोऽभवत् ॥ ५ ॥

वहाँ पर वह बहत्तरहजार वर्ष तक सूई के समान मुख वाले जीवों द्वारा कष्ट को भोगा, फिर नरक से जब बाहर हुआ तो गधे की योनि में उसके बाद मनुष्ययोनि में उत्पन्न हुआ ॥ ४-५ ॥

तस्य भार्याऽभवद् वन्ध्या पूर्वजन्मफलाच्छिवे ! ।
तस्माद्गात्रे भवेद्रोगो दद्रुरर्शादयस्तथा ॥ ६ ॥

हे शिवे! पूर्व पाप के दोष से उसकी स्त्री वन्ध्या हो गई और उसके शरीर में खाज, बवासीर आदि रोग उत्पन्न हो गये ॥६॥

न सुखं लभते देवि चिन्तया व्याकुलेन्द्रियः ।
शृणु सर्वं वरारोहे पूर्वं पापस्य निग्रहम् ॥ ७ ॥

वह चिन्तासे व्यग्र रहता था और सुख कभी नहीं मिला अब इसप्रकार के पूर्वपाप के निग्रह को कहता हूँ सुनो ॥ ७ ॥

दशांशं विभवं देवि ! ब्राह्मणाय समर्पयेत् ।
वापी-कूप-तडागादि पथिमध्ये च कारयेत् ॥ ८ ॥

हे देवि ! अपने गृह–स्थित धन का दशांश द्रव्य ब्राह्मण को दान करे, तथा मार्ग में बावली, कुआँ तालाब इनको बनवावे ८

गृहदानं ततो देवि ! सर्ववस्तुसमन्वितम् ।
प्रदद्याद्वेदविदुषे ब्राह्मणाय वराय च ॥ ९ ॥

और उत्तम वेद को जानने वाले ब्राह्मण को सब सामान के साथ गृह का दान करे ॥ ९ ॥

आकृष्णेति जपं देवि ! लक्षमेकं च कारयेत् ।
होमं कुर्याददद्रिसुते ! तिलाज्यमधुतण्डुलैः ॥१०॥

हे पार्वती ! "आकृष्णेन रजसा" इस मंत्र से एक लक्ष जप करा कर तिल, घृतादि से हवन करावे ॥ १० ॥

ततो गां कपिलां देवि ! ब्राह्मणाय प्रपूजिताम् !
प्रदद्याद्विधिवच्चैव सर्वालङ्कारभूषिताम् ॥११॥

पश्चात् एक कपिला गौ वस्त्रभूषणादि से अलंकृत विधिवत् पूजन करके ब्राह्मण को दान देवे ॥ ११ ॥

सुवर्णनिष्कमात्रं तु ब्राह्मणाय ततो ददेत् ।
एवंकृते वरारोहे रोगनाशो भवेद् ध्रुवम् ॥१२॥

और ब्राह्मण को तुलादान दे, यदि इस विधान को करे तो अवश्य ही रोगों का नाश हो ॥ १२ ॥

पुत्रश्च जायते देवि ! वन्ध्यात्वं च प्रणश्यति ।
काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं नात्र कार्या विचारणा ॥१३॥

हे देवि ! पुत्र उत्पन्न हो और वन्ध्यापन भी दूर हो जाय, तथा काकवन्ध्या भी पुत्रवती होवे इसके करने में विचार न करे ॥१३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे विशाखानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम षट्षष्टितमोऽध्यायः ॥ ६६ ॥

छाछठवाँ अध्याय समाप्त ॥ ६६ ॥

अथ सप्तषष्टितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

मायापुर्यां महादेवि ! क्षत्री ह्येकोऽवसत्पुरा ।
स शूरश्च धनी मानी देवताऽतिथिपूजकः ॥ १ ॥

शिवजी बोले-हे देवि ! प्राचीन समय माया पुरी में एक क्षत्री रहता था, वह सामर्थी, धनवान् और देवता अतिथि पूजक था ।१।

तस्य भर्या विशालाक्षी शतानाम्नी वराङ्गना ।
ब्राह्मणातिथिवेदानां पूजने चातितत्परा ॥ २ ॥

उसकी कमलनयनी सब स्त्रियों में श्रेष्ठ शता नाम की स्त्री थी, वह भी ब्राह्मण, अतिथि, देवता इनके सत्कार, पूजन में अत्यन्त प्रेम रखने वाली थी ॥ २ ॥

एकस्मिन् समये देवि ! हेमकारः समागतः ।
धनाढ्यः स्वर्णसंयुक्तो गृहे तस्याऽवसत्स च ॥ ३ ॥

हे देवि ! एक समय उसके यहाँ कोई धनिक सोनार सुवर्ण युक्त आया और वह उसके घर में रहने लगा ॥ ३ ॥

क्षत्रियाय स्वमित्राय शतं स्वर्णस्य वै पलम् !
प्रदत्तं हेमकारेण चान्यत्स्वर्णं समर्पितम् ॥ ४ ॥

उस सोनार ने अपने मित्र क्षत्री को सौ पल सुवर्ण के साथ साथ और भी जितना सोना था वह भी सब दे दिया ॥ ४ ॥

अत्रान्तरे महादेवि ! स्वर्णकारस्ततो मृतः ।
दष्टः सर्पेण तीव्रेण पुत्रहीनः सुवर्णकृत् ॥ ५ ॥
स्वर्णं सर्वं गृहीत्वा तु प्रभुक्तं क्षत्रियेण तत् ।
पुत्रदारयुते जाते न दत्तं तद्‌द्विजाय च ॥ ६ ॥

हे देवि ! इसके अनन्तर विषैले सर्प के काटने से सन्तान हीन उस सोनार की मृत्यु हो गयी, तब क्षत्रिय उसका सब सोना सपरिवार उपभोग करने लगा और उसमें से किञ्चित् मात्र ब्राह्मण को दान भी नहीं दिया ॥ ५–६ ॥

ततो बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्किल ।
क्षत्रियस्य महादेवि ! सुरलोकस्ततोऽभवत् ॥ ७ ॥

इस प्रकार बहुत सा समय बीत जाने पर वह क्षत्री मर गया और उसे स्वर्ग प्राप्त हुआ ॥ ७ ॥

सौख्यं सुराङ्गनार्द्धं च षष्टिवर्षप्रमाणकम् ।
ततः पुण्यक्षये जाते बभूव मनुजः क्षितौ ॥ ८ ॥

और वहाँ पर वह देवताओं की स्त्रियों के साथ सुख पूर्वक साठ हजार वर्ष तक रह पुण्य नष्ट होने पर मृत्यु लोक में मनुष्य शरीर धारण किया ॥ ८ ॥

धनधान्ययुतस्तस्य भूयो भार्याऽभवत् किल ।
कन्यका चव पत्रौ च जातौ तस्यां वरानने ! ॥ ९ ॥

धनादि से युक्त उसको फिर वही स्त्री प्राप्त हुई और उसे दो पुत्र तथा एक कन्या उत्पन्न हुई ॥ ९ ॥

गर्भश्च जायते देवि ! तद्‌गर्भपतनं भवेत् ।
रोगमुग्रं भवेद्देवि ! न सुखं जायते खलु ॥१०॥

हे देवि ! उसके बाद उसकी स्त्री को गर्भ रहता था और उसका पतन हो जाया करता था, फिर रोग उग्र रूप धारण कर लिया जिससे सुख कभी नहीं मिला ॥ १० ॥

शान्तिं शृणु वरारोहे ! यतः पापक्षयो भवेत् ।
षडंशं च ततो देवि ! ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥११॥

अब इस पाप की शान्ति सुनो जिससे पूर्व पाप नष्ट हो इसके लिये अपने धन का छठवाँ भाग द्रव्य ब्राह्मण को दान करे ॥११॥

दशवर्णां ततो दद्याद्विप्राय ज्ञानिने प्रिये ।
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ॥१२॥

फिर दशवर्ण वाली गौवों का दान उत्तमज्ञानी ब्राह्मण को देवे, तथा गायत्री मूल मंत्र से एक लाख जप कराये ॥ १२ ॥

पक्वान्नेनैव भोदेवि ! ब्राह्मणान् भोजयेच्छतम् ।
वृक्षस्वर्णस्य वै देवि ! फलपुष्पसमन्वितम् ॥१३॥
दद्याद्विप्राय विदुषे पलं दशप्रमाणकम् ।
सूर्यस्य पूजनं चैव रविवारे विशेषतः ॥१४॥

और सौ ब्राह्मणों को पकान्न (मालपूआ आदि) भोजन करावे, फिर दशपल प्रमाण का एक सुवर्ण वृक्ष फल पुष्पों सहित बनाकर विद्वान् ब्राह्मण को दान देवे और विधिवत् रविवार के दिन सूर्यनारायण का पूजन करे ॥ १३-१४ ॥

एवंकृते वरारोहे ! शीघ्रं पुत्रश्च जायते ।
ज्वरस्य वै भवेन्मुक्तिः काकवन्ध्या सुतं लभेत् ॥१५॥
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरजीविनमुत्तमम् ॥१६॥

इस प्रकार के आचरण करनेवाले पुरुष को शीघ्र पुत्र की प्राप्ति एवं ज्वर से निवृत्ति होती है और काकवन्ध्या तथा मृतवत्सा स्त्री भी दीर्घायु उत्तम सन्तान पाती हैं ॥ १५-१६ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसम्वादे विशाखानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम सप्तषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६७ ॥

सरसठवाँ अध्याय समाप्त ॥ ६७ ॥

अथाष्टषष्टितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

कल्याणनगरे गौरि ! मायापुर्याः समीपतः ।
वणिग्जनोऽवसत्तत्र धनाढ्यो धनगर्वितः ॥ १ ॥

शिवजी बोले—हे गौरि ! माया पुरी के समीप कल्याण नगर में अपने धन के मद से गर्वित एक धनिक वैश्य रहता था १

क्रयकृत्सर्ववस्तूनां विक्रयं च सदाऽकरोत् ।
महालोभवशाद्देवि ! न दत्तं पापिना क्वचित् ॥ २ ॥

वह सब वस्तुओं का सर्वदा क्रय-विक्रय व्यापार को करने वाला था और लोभ के वश उस पापीने दान कुछ नहीं किया ॥२॥

तस्य भार्या विशालाक्षी पुंश्चली कुलटाधमा ।
यमौ पुत्रौ वरारोहे ! पुंश्चल्यां जज्ञिरे तदा ॥ ३ ॥

उसकी मृगके समान नेत्र वाली स्त्री पुंश्चली, कुलटा तथा दुष्कर्मी थी, उसे दो यमल (जोड़े) उत्पन्न हुए ॥ ३ ॥

एको द्यूतरतः पुत्रो द्वितीयो ब्राह्मणीरतः ।
वैश्येनैव विशालाक्षि ! धनं च बहु सञ्चितम् ॥ ४ ॥

उसमें एक जुआड़ी, दूसरा ब्राह्मणी के साथ रमण करने वाला हुआ, उस वैश्य ने बहुत धन एकत्रित किया था ॥ ४ ॥

प्रत्यहं भुज्यते छागविक्रयं कुरुते सदा ।
वृद्धे सति महादेवि ! वैश्यस्य मरणं ह्यभूत् ॥ ५ ॥

हे देवि ! उस धन का उपयोग उसके लड़के सर्वदा करते और बकरियों का व्यापार भी करते थे, इस प्रकार बहुत सा समय बीत जाने पर वैश्य का मरण हो गया ॥ ५ ॥

यमदूतैस्तदा बद्ध्वा निक्षिप्तो नरकार्णवे ।
स्वरूपं दर्शयामास तस्मै वैश्याय सूर्यजः ॥ ६ ॥

नवत्यब्दसहस्राणि घोरे नरकदारुणे ।
महाकष्टं तदा दत्तं कृमिभिर्घोररूपिभिः ॥ ७ ॥

तब सूर्यपुत्र यमराज ने अपना दर्शन दिया और उनके दूतोंने उस वैश्यको शृंखला (बेड़ी) से बाँधकर नरक समुद्रमें डाल दिया और नव्वे हजार वर्ष घोर नरकमें कीटाणुओं द्वारा कष्टको पाया ॥६-७॥

ततो व्याघ्रस्य वै योनिं काककुक्कुटयोः पुनः ।
मानुषत्वं ततो यातः पुत्रकन्याविवर्जितः ॥ ८ ॥

जब नरक से बाहर आया तब व्याघ्र, कौए तथा मुर्गे की योनियों में भोगता हुआ फिर मनुष्य शरीर प्राप्त किया और सन्तान रहित हुआ ॥ ८ ॥

पुनर्विवाहिता सा तु या पत्नी पूर्वजन्मनि ।
रोगवान् साऽपि रोगार्त्ता मृतवत्सा पुनः पुनः ॥ ९ ॥

जो पूर्वजन्म की स्त्री थी सम्बन्ध वश वही फिर उसकी पत्नी हुई और दोनों रोगार्त हुए तथा मृतसन्तान वाली हुई ॥ ९ ॥

एकापत्या भवेद् दुष्टा न स्यादन्यसुतः प्रिये ।
यदा सर्वस्वदानं वै सूर्यस्याऽऽराधनं तदा ॥१०॥
हरिवंशश्रुतिश्चैव दुर्गास्तोत्रजपस्तदा ।
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं यदा भवेत् ॥११॥
तदा पुत्रो भवेद्देवि ! व्याधिनाशो भवेद्ध्रुवम् ॥१२॥

हे प्रिये ! उसे एक दुष्ट कन्या उत्पन्न होकर फिर कोई सन्तान न हुई, यदि सर्वस्वदान तथा सूर्य की आराधना व हरिवंश सुने, दुर्गास्तोत्र का पाठ और गायत्री मूल मंत्र से एक लक्ष जप करावे तब पुत्र की प्राप्ति तथा व्याधियों का नाश अवश्य हो ॥१०-१२॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे
अनुराधानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं
नामाष्टषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६८ ॥

अरसठवाँ अध्याय समाप्त ॥ ६८ ॥

अथैकोनसप्ततितमोऽध्यायः

शिव उवाच

मगधे वै शुभे देशे काष्ठकारोऽवसत्प्रिये ।
पुत्रपौत्रसमायुक्तो धनाढ्यो गुणवानपि ॥ १ ॥
यदा चार्द्धं वयो यातं दरिद्रत्वं तदाऽगमत् ।
गृहीतं यतिनो द्रव्यं शतपञ्चपलं तथा ॥ २ ॥
व्ययं कृत्वा तदा तेन न दत्तं यतिने शिवे ।
ततस्तस्य ह्यभून्मृत्युः काष्ठकारस्य मागधे ॥ ३ ॥

शिवजी बोले—हे प्रिये ! मगध देश में एक बढ़ई पुत्रादि से युक्त, धनिक और गुणवान् निवास करता था । जब उसकी अर्ध अवस्था जा चुकी तब दरिद्रता ने आ घेरा और निर्धन हो गया, इसके बाद उसने किसी यति से सौ पल प्रमाण धन उधार लेकर खर्च किया और उस यति का धन नहीं दिया, इसके अनन्तर फिर उसकी मृत्यु होगई ॥ १–३ ॥

द्वे दत्त्वा कपिले गावौ स्वर्णरौप्याविभूषिते ।
पुत्रेणापि कृतं श्राद्धं शास्त्ररीत्या गयादिकम् ॥ ४ ॥

तब उसके लड़कों ने शास्त्रानुसार श्राद्ध कर्म करके सोने तथा चाँदी के सहित दो कपिला गौवों का भी दान दिया तथा गया आदि में श्राद्ध भी किया ॥ ४ ॥

यक्षलोकं तदा यातो वर्षं शतसहस्रकम् ।
पुनः पुण्यक्षये जाते कपियोनिं ततोऽलभत् ॥ ५ ॥

तब वह बढ़ई यक्षलोक में गया और वहाँ पर एक लाख वर्ष वास कर पुण्य नष्ट होने पर-फिर वन्दरकी योनिमें उत्पन्न हुआ ॥

ऋक्षस्यैव पुनर्योनिं मानुषत्वं ततोऽगमत ।
धन-धान्यसमायुक्तो गुणज्ञोऽप्यतिसुन्दरः ॥ ६ ॥

फिर रीछ (भालू) की योनि में, उसके बाद धनादि से युक्त, गुणवान् और सुन्दर शरीर से मनुष्य हुआ ॥ ६ ॥

पूर्वजन्मनि भो देवि ! काष्ठच्छेदः कृता सदा ।
तेन पापेन भो देवि ! शरीरे महती व्यथा ॥ ७ ॥

हे देवि ! पूर्वजन्म में उसने सर्वदा वृक्षों का छेदन किया था उस पाप से उसके शरीर में बहुत पीड़ा उत्पन्न हुई ॥ ७ ॥

यतिद्रव्यं गृहीतं च न दत्तं यतिने तदा ।
तेन जातः सुतो देवि ! ऋणसम्बन्धकारणात् ॥ ८ ॥

और पूर्व में यति का धन लेकर फिर नहीं दिया उस ऋण सम्बन्धसे यति पुत्र हुआ ॥ ८ ॥

द्यूतवेश्यारतो नित्यं पितृमात्रोर्विरोधकृत् ।
युवारूपो यदा जातस्तदा मृत्युर्भवेद् ध्रुवम् ॥ ९ ॥

द्यूत और वेश्या प्रसंग में नित्य रत रहता तथा माता पिता का विरोधी था, जिस समय वह युवावस्था का हुआ तब उसकी मृत्यु हो गई ॥ ९ ॥

पुनः पुत्रस्य सन्देहः काकवन्ध्यात्वमाप्नुयात् ।
पत्नी तस्य वरारोहे ! मृतवत्सा पुनः पुनः ॥१०॥

पूर्व पाप के दोष से और पुत्र के सन्देह वश उसकी स्त्री काकवन्ध्या तथा मृतवत्सापन को प्राप्त हुई ॥ १० ॥

अस्य शान्तिमहं वक्ष्ये शृणु देवि ! प्रयत्नतः ।
गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥११॥

हे देवि ! अब इस पापकी शान्ति कहता हूँ ध्यान से सुनो. गृह के धनका आठवाँ भाग द्रव्य से पुण्य कार्य करे ॥ ११ ॥

सूर्यमन्त्रस्य वै जाप्यं वैदिकस्य वरारोहे ! ।
आकृष्णेति महामन्त्रः सर्वव्याधिविनाशनः ॥१२॥

और वैदिक सूर्य मंत्र का जप और सर्वव्याधि विनाशक "आकृष्णेन रजसा" इस मंत्र का जप करे ॥ १२ ॥

सर्वकामप्रदो देवि ! मोक्षदो मुक्तिकारणम् ।
सूर्यदेवस्य यो भक्तिं कुरुते नियतो नरः ॥१३॥
न किंचिद्दुर्लभं तस्य पुत्रश्चैव धनं बहु ।
ममाऽतीव प्रियो नित्यं सूर्यदेवे ह्युपासिते ॥१४॥

हे देवि ! सब मनोरथ को पूर्ण करने वाला मोक्षदायक यह जो सूर्य भगवान का मन्त्र है, मोक्ष चाहने वाला मनुष्य भक्ति पूर्वक नियम से जो इसका जप करता है, पुत्रादि के अतिरिक्त उसे और कुछ भी दुर्लभ नहीं, और नित्य सूर्य की उपासना करने वाला मेरा बड़ा प्रिय होता है ॥ १३–१४ ॥

मद्गणास्तं हि रक्षन्ति यतश्च मत्कलारविः ।
कमलं सूज्ज्वलं देवि ! वंशपात्रं सुशोभनम् ॥१५॥

हे देवि ! जो सूर्य उपासक हैं उनकी रक्षा मेरे गणों द्वारा होती है, क्योंकि सूर्य मेरी कला रूप हैं। अतः उज्वल कमल बनवा कर उसको उत्तम बाँस के बर्तन में धरे ॥ १५ ॥

तस्योपरि सुवर्णस्य सूर्यं रत्नविभूषितम् ।
पलपञ्चमितं देवि ! मन्त्रेणानेन पूजयेत् ॥१६॥

और उसके ऊपर पाँच पल (२५ तोले) प्रमाण सुवर्ण की सूर्य की प्रतिमा बनवाकर रत्नों से अलंकृत कर निम्न लिखित मंत्र से पूजन करे ॥ १६ ॥

ॐनमः सूर्याय देवाय भद्राय भद्ररूपिणे ।
पूर्वजन्मकृतं सर्वं मम पापं व्यपोहतु ॥१७॥
प्रतिमां पात्रसंयुक्तां ब्राह्मणाय च दापयेत् ।
ततो गां कपिलां शुभ्रां सवत्सां स्वर्णभूषिताम् ॥१८॥

हे सूर्य भगवान् पूर्वजन्म कृत मेरे पाप सब दूर करें, इस

प्रकार प्रार्थना कर उस पूजित प्रतिमा को पात्र सहित ब्राह्मण को देदे और सुन्दर व्यायी एक कपिला गऊभी सुसज्जित करके देवे॥

ब्राह्मणाय ततो दद्यात् पट्टवस्त्रेण संयुताम् ।
सप्तमी रविसंयुक्ता पोष्टन्याज्ञनया सह ॥१६॥
पूर्वजन्मकृतं पापं नश्यत्येवं कृते प्रिये ! ।
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति पुत्रलाभो भवेद्ध्रुवम् ॥२०॥
काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं मृतवत्सा च पुत्रिणी ॥२१॥

हे प्रिये ! इस प्रकार के विधान के करने से पूर्वकृत सब पाप तथा रोग नाश हो जाते हैं और निश्चय पुत्र प्राप्त होता है ॥२०॥ और बन्ध्यापन दूर होकर मृतवत्सा को भी पुत्रलाभ होता है॥२१॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे अनुराधानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकोनसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ६९ ॥

उनहत्तरवाँ अध्याय समाप्त ॥ ६९ ॥

अथ सप्ततितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

सुकर्मनगरं ख्यातं सौराष्ट्रविषये शुभे ।
तत्राऽतिष्ठत्खलो विप्रो ब्रह्मकर्मविवर्जितः ॥ १ ॥

शिवजी ने कहा—हे देवि ! सौराष्ट्र देश में सुकर्मनामक नगर में ब्रह्म कर्म से भ्रष्ट और पतित एक ब्राह्मण रहता था ॥ १ ॥

विक्रेता सर्ववस्तूनां गोवाजि-करिणां तथा ।
राजमृत्युं समालोक्य ग्रामदाहस्तथा कृतः ॥ २ ॥

वह गौ आदि पशुओं के साथ और अन्य वस्तुओं का भी व्यापार करता था, उसने नगर के राजा की मृत्यु देख ग्राम को जला दिया ॥ २ ॥

ब्राह्मणा बहवस्तत्र ब्राह्मण्यश्च तथा शिवे ।
मृता ग्रामस्य वै दाहे बह्व्यो गावो मृताः खलु ॥ ३ ॥

हे शिवे ! वहाँ पर बहुत से ब्राह्मण तथा उनकी स्त्रियाँ ग्रामके दाह से जल कर मर गयीं तथा बहुत सी गायें भी मर गईं ॥३॥

ततो बहुतिथे काले मृतः सोऽपि द्विजाधमः ।
ततस्तु यमदूतेन नरके घोरकर्दमे ॥ ४ ॥
यमाज्ञया च निक्षिप्तः कष्टं भुक्तं मुहुर्मुहुः ।
नरकान्निर्गतो देवि गजयोनिं ततोऽलभत् ॥ ५ ॥

इसके अनन्तर बहुत समय व्यतीत हो जाने पर वह नीच ब्राह्मण भी मर गया, तब यमाज्ञा से उनके दूतों ने उसे कर्दम नामक घोर नरक में ले जाकर रक्खा और अनेक दुःखों को भोग कर वह हाथी की योनि में उत्पन्न हुआ ॥ ४–५ ॥

कच्छपत्वं ततो यातः काकयोनिस्ततोऽभवत् ।
मानुषत्वं ततो यातः कुले महति शोभने ॥ ६ ॥

उसके बाद कछुए की योनि फिर कौवे की योनि में भोगकर फिर उत्तम धनिक कुल में मनुष्य शरीर से जन्म लिया ॥ ६ ॥

सर्वसंपत्तिसंयुक्तो वंशस्तस्य न जायते ।
बहुकन्यासमायुक्तो रोगयुक्तो भवेन्नरः ॥ ७ ॥

वह सब सम्पत्तियुक्त होते हुए भी पुत्रहीन था, उसे बहुत सी कन्या ही हुइ और रोग से दुःखी रहता था ॥ ७ ॥

भार्या तस्य ज्वरग्रस्ता मासे वर्षे भवेज्ज्वरः ।
अतः शान्तिं प्रवक्ष्यामि यतः खलु सुखी भवेत् ॥८॥

और उसकी स्त्री को प्रतिवर्ष महीने-महीने ज्वर हुआ करता था जिससे वह दुःखी रहती थी, इसलिये उसकी शान्ति कहता हूँ कि जिससे निश्चय वह सुखी हो ॥ ८ ॥

चतुर्भागं गृहद्रव्यं ब्राह्मणाय समर्पयेत् ।
प्रयागे मकरे मासि पत्न्या सह वरानने ! ॥ ९ ॥

हे वरानने ! अपने गृहके धन का चौथाई भाग द्रव्य ब्राह्मण को दान करे और माघ महीनेमें मकर के सूर्य होने पर प्रयाग में स्त्री सहित स्नान करे ॥ ९ ॥

स्नानं तु नियतः कुर्य्यात्सप्ताहं च ततः शिवे ।
हेमदानं ततः कुर्य्याद्भूमिदानं च पार्वति ॥१०॥

हे शिवे ! वहाँ पर नियम पूर्वक सात दिन तक स्नान करे और भूमि तथा सोने का दान करे ॥ १० ॥

गायत्रीजातवेदाभ्यां त्र्यम्बकेण तदा जपम् ।
दशायुतप्रमाणेन हवनं मार्जनं तथा ॥११॥

और गायत्री मंत्रसे अथवा "जातवेदसे" तथा त्र्यम्बक इन मंत्रों से एक लक्ष जप कराकर उसके दशांश हवन, तर्पण तथा मार्जन करावे ॥ ११ ॥

ब्राह्मणान् भोजयेद्भक्त्या पक्वान्नैः पायसेन च ।
विप्रेभ्यो दक्षिणां दद्याद्वस्त्ररत्नविभूषिताम् ॥१२॥

और ब्राह्मणों को श्रद्धापूर्वक खीर पकान्न (मालपूआ) आदि का भोजन कराकर, दक्षिणा में वस्त्रादि ब्राह्मणोंको दे ॥ १२ ॥

दशवर्णास्ततो दद्याद्धरिवंशश्रुतिस्तथा ।
एवंकृते वरारोहे ! शीघ्रं पुत्रमवाप्नुयात् ॥१३॥

हरिवंश पुराण सुने और दश प्रकार की गौवों का दान करे हे देवि ! इसके करने से शीघ्र पुत्र प्राप्त होता है ॥ १३ ॥

काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं पुनर्देवि न संशयः ।
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति मृतवत्सा लभेत् सुतम् ॥१४॥

हे देवि ! काकवन्ध्या तथा मृतवत्सा स्त्री को भी पुत्रसुख प्राप्त हो इसमें सन्देह नहीं और सब रोग भी नष्ट हो जाते हैं ॥१४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे अनुराधानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम सप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७० ॥

सत्तरवाँ अध्याय समाप्त ॥ ७० ॥

अथैकसप्ततितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

बन्दीजनोऽवसच्चैकः सौराष्ट्रविषये शुभे ।
स कविर्भाग्यवान्देवि ! स्वधर्मनिरतः सदा ॥ १ ॥

शिवजी बोले—कि हे देवि ! सौराष्ट्र देश में एक बन्दीजन (भाँट) रहता था, वह भाग्यवान् और अपने धर्म में सर्वदा निरत रहनेवाला कवि था ॥ १ ॥

तस्य स्त्री सुन्दरी देवि ! पतिसेवासु तत्परा ।
एकस्मिन् दिवसे देवि ! ब्रह्मचारी समागतः ॥२॥
आतिथ्यकरणे तस्य चाऽसमर्थस्तथा शिवे ।
उपोषणं कृतं तेन द्वारे वन्दिजनस्य च ॥ ३ ॥

हे देवि ! उसकी पत्नी अति सुन्दरी और पतिकी सेवा करने वाली थी । एक दिन उसके यहाँ एक ब्रह्मचारी आया, परन्तु उसका सत्कार बन्दीजन न कर सका और उसके द्वारपर वह उपवास करके रह गया ॥ २-३ ॥

प्रभाते स वरारोहे ! शापं दत्त्वा गतस्तु वै ।
ततस्तु दैवयोगेन मार्जारी तत्र सूतिका ॥ ४ ॥

हे वरारोहे ! वह ब्रह्मचारी प्रातः काल उठा और शाप देकर चला गया फिर संयोगकी बात उसके यहाँ एक बिल्ली ब्यायी थी ॥४॥

पञ्चपुत्रा वरारोहे घातितास्तस्य च स्त्रिया ।
मार्जारी च तदा देवि ! क्षुधार्ता च तदा मृता ॥ ५ ॥

जो कि पाँच बच्चा दी थी और उन सबको वन्दी की स्त्री ने मार डाला तब बिल्ली दुखित हो अन्न त्याग कर मर गई ॥५॥

ततो बहुतिथे काले तस्य मृत्युरभूत्पुरा ।
पत्नी पतिव्रता तस्य सती जाता च तत्क्षणात् ॥६॥

इसके बाद कालान्तर में जब वन्दीजन की मृत्यु हुई तब उसकी पतिव्रता पत्नी भी उसके साथ ही सती हो गई ॥ ६ ॥

सत्यलोके वरारोहे ! युगमेकमुवास सः ।
पत्न्या सह वरारोहे ! सौख्यं हि मानसेप्सितम् ॥ ७ ॥

हे वरारोहे ! तब सत्य लोक में जाकर एक युग तक पत्नी सहित उसने मनवांछित उत्तम फल भोग किया ॥ ७ ॥

भुक्तं देवाङ्गनासार्द्धं पुनः पुण्यक्षये सति ।
मानुषत्वं ततो लेभे सह पत्न्या वरानने ! ॥ ८ ॥

और देवाङ्गनाओं के साथ सुख भोगते जब पुण्य क्षय हो चला तब स्त्री सहित मनुष्य योनि में जन्म लिया ॥ ८ ॥

धन-धान्यसमायुक्तो वरा भार्य्या विवाहिता ।
पुत्राश्च बहवो जातास्तेषां मृत्युरभूत्किल ॥ ९ ॥

वह धन-धान्य से युक्त हुआ तथा श्रेष्ठ स्त्री से विवाह किया, उससे कई एक पुत्र हुए किन्तु सबकी मृत्यु होती गई ॥ ९ ॥

सा ज्वरेण समुद्विग्ना मध्ये तापयुता पुनः ।
तस्य पापस्य वै शान्तिं शृणु त्वं गिरिजे वरे ॥१०॥

हे गिरिजे ! उसकी पत्नी सर्वदा ज्वर रोग से पीड़ित रहती थी, अब उस पाप की शान्ति को कहता हूँ तुम सुनो ॥ १० ॥

जातवेदस्य मन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ।
विडालीप्रतिमां कृत्वा पञ्चबालेन संयुताम् ॥११॥

"जातवेदसे०" इस मंत्र से एक लक्ष जप कराकर फिर पाँचबच्चों सहित बिल्ली की एक प्रतिमा बनवाकर ॥ ११ ॥

स्वर्णस्यास्थ च रौप्यस्य पलपञ्चदशस्य तु ।
सवस्त्रां वै तदा दद्याद्ब्राह्मणाय वरानने ! ॥१२॥

हे देवि ! वह प्रतिमा सोने या चाँदी की बनवानी चाहिये और उसको वस्त्रादि सहित ब्राह्मण को दान करदे ॥ १२ ॥

गामेकां रक्तवर्णां च तां विप्राय प्रदापयेत् ।
अमायां पिण्डदानं च सोमवारे तथा गुरौ ॥१३॥

और लाल वर्ण की एक गौ भी उस ब्राह्मण को देवे या सोमवती या गुरुवार से युक्त अमावस्या को पिण्डदान (नियमतः ब्राह्मण भोजन) करावे ॥ १३ ॥

व्रतं च रविसप्तम्यां कुर्य्याद्वै भार्यया सह ।
ततः पुत्रो भवेद्देवि ! चिरंजीवी तथोत्तमः ॥१४॥

और स्त्री सहित अर्थात् स्त्री पुरुष दोनों रवियुक्ता सप्तमी व्रत करें, तो दीर्घायु उत्तम पुत्र प्राप्त हो ॥ १४ ॥

व्याधिनाशो भवेद्देवि ! वन्ध्यात्वं च प्रशाम्यति॥१५॥

इससे समस्त व्याधियों का नाश तथा वन्ध्यापन दोष भी दूर हो जाता है ॥ १५ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे अनुराधानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७१ ॥

एकहत्तरवाँ अध्याय समाप्त ॥ ७१ ॥

अथ द्विसप्ततितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

ब्राह्मणो न्यवसच्चैको महाराष्ट्रपुरे शुभे ।
स वेदपाठतत्त्वज्ञो वेदपाठं सदाऽकरोत् ॥ १ ॥

शिवजी कहे कि—हे देवि ! महाराष्ट्र देश के किसी उत्तम

नगर में एक ब्राह्मण निवास करता था, वह हमेशा वेद पाठको करता और उनके तत्त्वों को भी समझता था ॥ १ ॥

तडागं खानयामास तत्र द्रव्यं च लब्धवान् ।
द्रव्यस्यार्थं तदा देवि ! विग्रहो भ्रातरं प्रति ॥ २ ॥

हे देवि ! उसने एक पोखरा बनवाया और उसमें उसको बहुतसम्पत्ति मिली,तथा उसधनके लिये भाईसे झगड़ा भीहोगया।२।

भ्रात्रा तस्य महादेवि ! द्रव्यार्थं भक्षितं विषम् ।
बहुकाले तदा देवि ! व्ययं सर्वधनं कृतम् ॥ ३ ॥

और उसका भाई धनके लिये विष खाकर मर गया, तबब्राह्मण स्वयं उस धनका उपयोग बहुत दिनों तक करता रहा था ॥ ३ ॥

ततश्च पञ्चतां यातो ब्राह्मणश्च सुरेश्वरि ।
यमदूतैर्महाघोरे नरके देवि ! कर्दमे ॥ ४ ॥

कुछ कालके बाद जब उस ब्राह्मण की मृत्यु हुई, तब हे देवि ! यमदूतों ने उसे ले जाकर कर्दम नरक में डाल दिया ॥ ४ ॥

षष्टिवर्षसहस्राणि निक्षिप्तश्च यमाज्ञया ।
भुक्त्वा नरकजं दुःखं काकयोनिरभूत्पुनः ॥ ५ ॥

और यमराजकी आज्ञा से साठ हजार वर्ष तक नरक के कष्टोंको सहन कर फिर कौए की योनि में उत्पन्न हुआ ॥ ५ ॥

पुनर्मानुषयोनिं च पुत्रकन्यायवर्जितः ।
पूर्वजन्मनि भो देवि ! भ्रात्रंशं नैव दत्तवान् ॥ ६ ॥

हे देवि ! उसके बाद फिर मनुष्य शरीर धारण किया और सन्तान रहित हुआ क्योंकि जन्मान्तर में उसने भाई का अंश नहीं दिया था ॥ ६ ॥

तेन पापेन भो देवि ! महारोगसमुद्भवः ।
अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं गिरिजे वरे ॥ ७ ॥

और उस पाप के दोष से उसको कठिन रोग उत्पन्न हो गया, जिसकी शान्ति कहता हूँ, तुम सुनो ॥ ७ ॥

गृहवित्ताष्टमैर्भागैः पुण्यकार्यं च कारयेत्।
वापी-कूप-तडागादिजीर्णोद्धारं प्रयत्नतः ॥ ८ ॥

अपने गृह के धनके आठवाँ भाग द्रव्य से पुण्य कार्य करे, और पुराने बावली कुएँ, पोखरे इन सबका जीर्णोद्धार करावे ॥८॥

प्रतिमां कारयेद्देवि स्वर्णं पलदशस्य तु।
भ्रातुश्चित्रं तदा देवि! पूजयित्वा यथाविधि ॥ ९ ॥

हे देवि! दशपल (पचास तोले) प्रमाण सुवर्ण की एक भाई की प्रतिमा बनाकर विधिवत्-पूजन करे ॥ ९ ॥

गन्ध-धूपादिभिर्देवि भूषणैर्विविधैरपि।
गायत्रीलक्षजाप्येन दशांशहवनेन तु ॥१०॥

गन्ध, धूप तथा अनेक प्रकार के आभूषणोंसे पूजन कर ब्राह्मण को दान दे और गायत्री मूल मंत्र से एक लक्ष जप तथा उसके दशांश हवन, मार्जनादि करे ॥ १० ॥

प्रयागे मकरे स्नानं सर्वपापक्षयो भवेत्।
ब्राह्मणाय ततो दद्याद्गां च दद्यात् पयस्विनीम् ।११।

और मकर के सूर्य में प्रातःकाल प्रयाग में स्नान करे, तथा उस प्रतिमा के साथ दूध देनेवाली गौका दान करे तो सब पाप नष्ट हों ॥ ११ ॥

भूमिं वृत्तिकरीं दद्यात् पुत्रपौत्रानुयायिनीम्।
अश्वदानं ततो दद्याद्ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः ॥१२॥

और इस प्रकार की उपजाऊ भूमि का दान करे जिससे ग्रहण करनेवाले के परिवार की जीविका निर्वाह हो, तथा अश्व (घोड़े) का दान करे और ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ १२ ॥

एवंकृते वरारोहे! पुत्रो भवति नाऽन्यथा।
व्याधिस्तस्य निवर्तेत काकवन्ध्या लभेत्सुतम् ॥१३॥
मृ[illegible]वत्सा लभेत्पुत्रं चिरंजीविनमुत्तमम् ॥१४॥

इस प्रकार के विधान को करने से पुत्र की प्राप्ति होकर व्याधियों का नाश हो काकवन्ध्या तथा मृतवत्सा भी चिरंजीवी सन्तान प्राप्त करें ॥ १३-१४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे
ज्येष्ठानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं
नाम द्विसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७२ ॥

बहत्तरवाँ अध्याय समाप्त ॥ ७२ ॥

अथ त्रिसप्ततितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

पट्टने च पुरे शुभ्रे लोहकारोऽवसत्पुरा ।
गोवर्द्धनाभिधः पत्नीयुक्तोऽभूत्परमेश्वरि ! ॥ १ ॥

शिवजी ने कहा—हे देवि ! प्राचीन समय में पट्टनपुर (पटना में) जोकि उस समय अत्यन्त सुन्दर नगर था, उसमें अपनी स्त्री के साथ गोवर्धन नाम का एक लोहार रहता था ॥ १ ॥

धन-धान्यसमायुक्तो धर्मकर्मरतस्तथा ।
तस्य पुत्रद्वयं जातं लोहकारस्य पार्वति ॥ २ ॥

वह अपने धर्म-कर्म में रत और धनादि से सम्पन्न था, उसके दो पुत्र उत्पन्न हुए ॥ २ ॥

ज्येष्ठपुत्रश्च भो देवि ! भार्यया तेन वै सह ।
निस्सारितो गृहाद्देवि ! दत्तं तस्मै न किञ्चन ॥ ३ ॥

हे देवि ! उस लोहार ने स्त्री सहित जेठे पुत्रको विना कुछ दिये ही अपने घर से बाहर निकाल दिया ॥ ३ ॥

एको गृहे स्थितः पुत्रो द्रव्यं तस्मै प्रदत्तवान् ।
लोहकारेण भो देवि ! स्वभार्या पुत्रसंयुता ॥ ४ ॥

और घर में जो छोटा पुत्र था उसको अपना सब धन देकर उसी के साथ स्त्री को भी कर दिया ॥ ४ ॥

त्यक्ता चैव महादेवि गोपालस्य तु कन्यका।
भार्या कृता पुनस्तेन पत्न्यास्त्यागश्च वै कृतः ॥ ५ ॥

हे देवि ! लोहार ने अपनी स्त्री और छोटे लड़के को त्याग कर एक (गोपाल) अहीर की पुत्री के साथ रहने लगा ॥ ५ ॥

ततो बहुगते काले लोहकारस्य वै शिवे ।
व्याघ्रेण मरणं जातं यमदूतैर्यमाज्ञया ॥ ६ ॥
निक्षिप्तो नरके घोरे कृमिविष्टादिसंयुतः ।
त्रिंशद्वर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ७ ॥

हे शिवे ! इस प्रकार बहुत समय बीत जाने पर व्याघ्र द्वारा उसकी मृत्यु हो गयी, तब यमाज्ञा से उनके दूत कृमि (कीटाणुओं) तथा मलमूत्रादि से युक्त ऐसे घोर नरक में डाल दिये कि तीस वर्ष नरक-यातनायें भोगता हुआ पड़ा रहा ॥ ६-७ ॥

नरकान्निर्गतो देवि मानुषत्वं ततोऽलभत् ।
पुनः सर्पस्य योनिश्च ततो नकुलतां गतः ॥ ८ ॥
मानुषत्वं ततो देवि ! धनधान्यसमाकुलः ।
शूरोऽभूत्किल विज्ञश्च ज्ञानवान् राजवल्लभः ॥ ९ ॥

फिर नरक शरीर भोग कर जब उसके बाहर आया तब मनुष्य शरीर पाया, उसकेबादसर्पऔरनकुल (नेवले) कीयोनियों में क्रमशः भ्रमता हुआ फिर मनुष्य शरीरप्राप्तकिया, धन-सम्पत्तिभीहुई और शूरवीर, ज्ञानी तथा सब गुणोंमें प्रवीण राजा का प्रिय हुआ ।८-९।

पुरैव यत्कृतं सर्वं तत्प्राप्नोति न संशयः ।
पुरैव कार्त्तिके मासि पौर्णमास्यां सदाशिवे ॥१०॥

हे शिवे ! उसने पूर्वजन्म में जोकुछ कर्म किया था उसका फल उसे प्राप्त हुआ और पूर्वजन्म में उसने कार्तिक की पूर्णिमा को।१०।

धेनुः प्रदत्ता युवती विधिवन्मम वल्लभे ।
तेन दानफलेनेह धनाढ्यत्वं प्रलब्धवान् ॥११॥

विधिवत् युवा गौ का दान किया था जिससे कि प्रचुर धन उसे प्राप्त हुआ है ॥ ११ ॥

स्वभार्यां च परित्यज्य परकीया रतः स वै ।
अतः पुत्रस्य वै मृत्युः पुनः पुत्रो न जायते ॥१२॥

और वह अपनी पत्नी का परित्याग कर पर-स्त्री से प्रेम करता था, उस पाप से पुत्र की मृत्यु हुई फिर दूसरा पुत्र नहीं हुआ ॥१२॥

कन्यका जनयित्री च तस्य भार्या भवेत्खलु ।
पुत्रस्त्रियश्च कृतवान् त्यागं परकलत्रवान् ॥१३॥
तत्पापेन महादेवि रोगग्रस्तकलेवरः ।
व्याधयश्च समुत्पन्ना दद्रु-पामादयस्तदा ॥१४॥

हे देवि ! उसकी स्त्री को केवल कन्यायें होती थीं और पुत्र सहित स्त्री का त्याग कर पर स्त्री से प्रेम किया था उस पाप से शरीर व्याधि ग्रस्त हो गया और दद्रु (दाद) खुजली आदि रोग भी उसे हो गया ॥ १३-१४ ॥

ख्यातवंशे समुत्पन्नो भूमिभागं न लब्धवान् ।
अथ शान्तिं प्रवक्ष्यामि पूर्वपापविशुद्धये ॥१५॥

प्रसिद्ध कुल में जन्म लेने पर भी प्रारब्ध से भूमि हाथ न लगी, अब पूर्व पाप शुद्धि के लिये शान्ति कहता हूँ ॥ १५ ॥

एकादशीव्रतं नित्यं षडंशं दानमाचरेत् ।
षडङ्गं पाठयेन्नित्यं रुद्रपूजनपूर्वकम् ॥१६॥
हरिवंशश्रुतिं कुर्याच्चण्डीपाठं निरन्तरम् ।
तिलधेनुप्रदानं वै ह्यमाश्राद्धं विशेषतः ॥१७॥

प्रत्येक एकादशी व्रत का आचरण करता हुआ अपने धन से दुर्गा पाठ और हरिवंश पुराण का निरन्तर श्रवण कर तिल, धेनु का दान करे तथा अमावस्या तिथि को पितरों के निमित्तक श्राद्ध करे ॥ १६-१७ ॥

एवंकृते महादेवि ! पुत्रस्तस्य भविष्यति ।
वन्ध्यात्वं प्रशमं याति सर्वरोगक्षयो भवेत् ॥१८॥

हे देवि ! इस प्रकार के कथित विधानको यदि करे तो अवश्य पुत्र उत्पन्न होगा और बन्ध्यापन तथा रोग भी दूर हो जायगा ॥१८॥

इतिश्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसम्वादे ज्येष्ठानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामत्रिसप्ततितमोऽध्यायः ॥७३॥

तिहत्तरवाँ अध्याय समाप्त ॥ ७३ ॥

अथ चतुःसप्ततितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच

बीजापुरमिति ख्यातं पुरं देवि ! मनोहरम् ।
न्यवसन् बहवो वर्णा ब्राह्मणाश्च वणिग् जनाः ॥१॥

शिवजी बोले–हे देवि ! बीजापुर नाम का एक अत्यन्त रमणीक ग्राम था, जिसमें ब्राह्मण, वैश्य आदि सभी जाति के लोग रहते थे।

तन्मध्ये शूद्र एको हि ताम्बूलं च करोति सः ।
सुरापी च स वै नित्यं ताम्बूलविक्रयी शिवे ॥ २ ॥

हे शिवे ! उसमें एक शूद्र था जो कि पान का विक्रयादि व्यवसाय करने वाला और मदिरा पीने वाला भी था ॥ २ ॥

तस्य पुत्रद्वयं जातं धनं च बहु सञ्चितम् ।
ततस्तद्दैवयोगेन महाधनमदेन च ॥ ३ ॥

और उसे दो पुत्र हुए तथा बहुत सा धनभी संचित कर लिया था, बाद को दैव संयोग से वह धन के गर्व में आकर ॥ ३ ॥

ज्येष्ठपुत्रस्य हननं कृतं तेन वरानने ! ।
स्वभार्यार्थे तदा नीता पत्नी तस्य तु तेन हि ॥ ४ ॥

हे वरानने ! वह अपने ज्येष्ठ पुत्र को मार कर उसकी स्त्री को अपनी स्त्री के रूप में लाकर घर में रख लिया ॥ ४ ॥

पुत्राभ्यां च भवेद्वैरं यत्न्या सह विशेषतः ।
प्रत्यहं भजते सोऽपि पुत्रपत्नीं तथाऽधमः ॥ ५ ॥

उसके इस प्रकार के आचरण को देख पुत्र तथा स्त्री से विशेषरूप से विरोध हो गया, किन्तु वह शूद्र उस पुत्रवधू पतोहू के साथ नित्य रतिक्रीड़ा करने लगा ॥ ५ ॥

एवं बहुदिने जाते तस्य मृत्युरभूच्छिवे ।
ततो वै नरके घोरे यमदूतैर्यमाज्ञया ॥ ६ ॥
निक्षिप्तो वै ततो देवि षष्टिवर्षसहस्रकम् ।
कृमिभिर्घोरवक्त्रैश्च भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ७ ॥

हे शिवे ! इस प्रकार बहुत सा समय बीत जाने पर उसकी मृत्यु हो गयी, तब यमकी आज्ञा पाय उनके दूतों ने उसे घोर नरक में रक्खा और साठहजार वर्ष महा कृमियों द्वारा घोर संताप को सहता हुआ ॥ ६–७ ॥

नरकान्निर्गतो देवि शुनो योनिं ततोऽलभत् ।
ततो वृषभयोनिं च मानुषत्वं ततो गतः ॥ ८ ॥

जब उससे उद्धार हुआ तब कुत्तेकी योनि पाया, फिर उसके बाद बैल की योनि में जन्म लेकर मनुष्य शरीर प्राप्त किया ॥८॥

पूर्वजन्मनि भो देवि दशवर्णा ददौ बहु ।
तत्फलेनेह भो देवि धन-धान्ययुतस्तदा ॥ ९ ॥

हे देवि ! उसने पूर्वजन्म में दशवर्ण वाली बहुत सी गौओं का दान किया था, उस पुण्य के प्रभाव से धन-धान्ययुक्त हुआ ॥९॥

पुत्रपत्न्यां च भोगार्थे पुत्रस्यैव वधः कृतः ।
तत्पापफलतो देवि ह्यपुत्रश्च ज्वरी तथा ॥१०॥

औरपुत्रवधू के साथ भोगकरनेके लियेजो पुत्रकावधकर दिया था उस पापके प्रभावसे पुत्ररहित तथा ज्वरसे दुःखी हुआ ॥१०॥

व्याधिश्च बहुधा तस्य चाङ्गे च महती तथा ।
महाचिन्ता समापन्ना ह्यतः शान्तिं शृणु प्रिये !॥११॥

और नाना प्रकार के व्याधियों से संतप्त होकर चिन्तित हो गया, अब इस पापकी शान्ति कहता हूँ सुनो ॥ ११ ॥

स्ववित्तस्य तृतीयांशं प्रगृह्य हरवल्लभे ।
कूपं च खनयेत्कान्ते तडागं जीर्णमुद्धरेत् ॥१२॥

अपने गृह के धनके तीसरे भाग द्रव्य से कुआँ खनावे, और पुरातन तालाबादि का जीर्णोद्धार करावे ॥ १२ ॥

पौर्णमासीव्रतं देवि ! सकलत्रः समाचरेत् ।
शिवस्य पूजनं लक्षं ब्राह्मणेभ्यश्च कारयेत् ॥१३॥

हे देवि ! प्रत्येक पूर्णिमाका व्रत अपने स्त्री सहित करे और एकलाख शिवलिङ्ग अर्थात् पार्थिवार्चन ब्राह्मण द्वारा करावे ॥१३॥

कृष्णां च गां च वृषभं ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ।
गायत्रीमूलमन्त्रेण तथा लक्षप्रमाणतः ॥१४॥

और एक काली गऊ तथा बैलका दान ब्राह्मणको दे तथा गायत्री मूल मंत्र से एक लाख जप करावे ॥ १४ ॥

जपं वै कारयेत्तत्र हवनं तद्दशांशतः ।
मार्जनं तर्पणं देवि ! दशांशं स च कारयेत् ॥१५॥

और जपका दशांश हवन, तर्पण तथा मार्जन करावे ॥१५॥

पुत्रस्य प्रतिमां तद्वत्स्वर्णवस्त्रसमन्विताम् ।
पलपञ्चदशस्यैव निर्मितां रत्नभूषिताम् ॥१६॥

और पन्द्रह पल सोने की एक पुत्र की प्रतिमा बनवाकर वस्त्रादि से सुसज्जित ब्राह्मण को दान दे ॥ १६ ॥

पूजां कृत्वा विधानेन ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ।
एवं कृते न सन्देहः शीघ्रं पुत्रमवाप्नुयात् ॥१७॥

इस प्रकार विधि-विधान से पूजन कर ब्राह्मणको दान करने से अवश्य पुत्र की प्राप्ति होती है ॥ १७ ॥

व्याधिश्च प्रशमं यायात्काकवन्ध्या लभेत्सुतम् ।
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम् ॥ १८ ॥

और सब व्याधियोंकानाशहोकरसुख प्राप्तहोताहै। काकवन्ध्या तथा मृतवत्सा भी दीर्घजीवि उत्तम पुत्र प्राप्त करती है ॥ १८ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे ज्येष्ठानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चतुःसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७४ ॥

चौहत्तरवाँ अध्याय समाप्त ॥ ७४ ॥

अथ पञ्चसप्ततितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

चतुर्भुजाभिधे क्षेत्रे वेणीपश्चिमतः शिवे ।
पट्टकारोऽत्रसद्देवि ! लक्ष्मणेति च संज्ञकः ॥ १ ॥

शिवजी बोले कि--हे देवि ! वेणी से पश्चिम दिशा में चतुर्भुज नामक नगर में लक्ष्मण नाम का एक वस्त्र बनाने वाला (जुलाहा) रहता था ॥ १ ॥

तस्य पत्नी विशालाक्षी परपुंसि रता सदा ।
पुत्राश्च बहवो जाता धनं च बहु सञ्चितम् ॥ २ ॥

और बड़े नेत्रवाली उसकी स्त्री परपुरुष में सर्वदा रत रहती थी । उसने बहुत सा धन भी संचय किया और उसको बहुत पुत्र भी हुए ॥ २ ॥

क्रय-विक्रयधर्मेण व्ययकारी दिने दिने ।
तस्य गेहेऽकरोद्वासं चटकानामपक्षिणी ॥ ३ ॥

वह प्रतिदिन क्रय-विक्रय व्यापार द्वारा व्यय करता हुआदिन व्यतीत करता था और उसके घर एक चटक पक्षी वास कररही थी

एकस्मिन् समये देवि! चाण्डान्सा ऽसूततत्र वै ।
बहून्वै पोषितांश्चाण्डान् सपक्षान्कृतवांस्तथा ॥ ४ ॥
फलं गृह्य सदा पक्षी मध्याह्ने बालकान्प्रति ।
भोजनं प्रददौ नित्यं स्वकुलाय तदा शिवे ॥ ५ ॥

हे देवि! एक समय किसी दिन उस पक्षीने अण्डे दियेऔर उन अण्डोंको पाल कर तैयार किया, जब वे पंख वाले हो गये तब वह पक्षी बाहर से उनके खाने के लिये चारे लाकर मध्याह्न वेला में उनके वृद्धि के लिये दिया करती थी ॥ ४-५ ॥

ततस्तु दैवयोगेन पट्टकारस्तु तद्गृहे ।
भोजनार्थं गतो देवि! पत्नी चान्नं तदाऽप्यदात् ॥६॥

हे देवि! एक दिन संयोग कि बात है कि जुलाहा अपने गृह में जब भोजन करने बैठा और उसकी स्त्री भोजन लाकर उसके समक्ष रख दिया ॥ ६ ॥

भुक्तं च विविधं चान्नं तत्क्षणे पक्षिबालकः ।
विष्ठां चक्रुस्तथा दृष्ट्वा पट्टकारो रुषा खलु ॥ ७ ॥
कुलं तस्याकरोन्नष्टं बालानां हननेन सः ।
एवं बहुगते काले पट्टकारस्य सुव्रते ॥ ८ ॥

तब वह वस्त्रबुनकार भोजन करने लगा। उसी समय ऊपर से पक्षीके बच्चों ने विष्टा (मल) कर दिया ऐसा देख वह क्रोधित हुआ और उनको समूल नष्ट कर दिया, इस प्रकार बहुत सा समय बीत जाने पर उसकी ॥ ७-८ ॥

गङ्गायां मरणं जातं भार्यया सहितस्य वै ।
स्वर्गवासोऽभवद्देवि पट्टकारस्य सुव्रते ॥ ९ ॥

स्त्री सहित गङ्गा के तट पर मृत्यु हो गयी और उन दोनों स्त्री पुरुषको स्वर्ग प्राप्त हुआ ॥ ९ ॥

सप्ततिर्वै सहस्राणि स्वयं भुक्त्वा फलं बहु ।
पुनः पुण्यक्षये जाते स्वर्गभ्रष्टो यदाऽभवत् ॥१०॥

और सत्तर हजार वर्ष तक नाना प्रकारके स्वर्ग सुखों का भोग करने के बाद जब पुण्य नष्ट होकर वहाँ से च्युत हुआ ॥ १० ॥

मनुष्यश्चाऽभवद्देवि गङ्गागण्डकिमध्ययोः ।
धन-धान्यसमायुक्तो विवाहमकरोद्यदा ॥११॥
पूर्वजन्मस्थिता भार्या सा तस्य गृहमेधिनी ।
प्रेष्ययुक्ताऽभवत्सा तु गर्भस्य पतनं मुहुः ॥१२॥

हे देवि ! तब गंगा और गण्डकी नदी के मध्य प्रदेश में तथा सम्पत्ति से युक्त मनुष्य शरीर धारण किया और उसने जब अपना विवाह किया तो उसकी जन्मान्तर की जो स्त्री थी वही फिर स्त्री हुई और वह जब गर्भवती होती थी तब उसका पतन हो जाया करता था ॥ ११–१२ ॥

कन्यका नैव जायन्ते पुत्रस्यैव तु का कथा ।
ज्वरयुक्ता सदा नारी स्वशरीरेऽभवत्खलु ॥१३॥

उसे एक कन्या भी उत्पन्न नहीं हुई और पुत्र की तो बात ही न्यारे रही, और शरीर भी ज्वर से सर्वदा पीड़ित रहने के कारण दुःखी था ॥ १३ ॥

सुखं न लभते क्वापि दुःखं याति दिने दिने ।
अस्य शान्ति प्रवक्ष्यामि शृणु सर्वं वरानने ॥१४॥

सुख तो लेशमात्र भी नहीं मिला दुःख से ही दिन बीते, हे वरानने ! अब उसकी शान्ति कहता हूँ सब सुनो ॥ १४ ॥

चन्द्रार्कयोर्मन्त्रजपं गायत्रीजपमाचरेत् ।
लक्षमेकं वरारोहे पूर्वपापविशुद्धये ॥१५॥

अपने पूर्व पाप की शुद्धि के लिये चन्द्रमा और सूर्यके मंत्रों का जप तथा गायत्री मूल मंत्र से एक लक्ष जप करावे ॥ १५ ॥

गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्यं च कारयेत्।
कपिलां गां सवत्सां च ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ॥१६॥

और अपने गृह के धन का आठवाँ भाग द्रव्य से पुण्य कार्य करावे और सवत्सा अर्थात् ब्याई हुई एक कपिला गौ ब्राह्मण को दान करे ॥ १६ ॥

दशवर्णास्ततो दद्याद्ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः।
चटकस्याकृतिं कृत्वा सार्भकस्य वरानने ! ॥१७॥
रौप्यस्य ताम्रस्वर्णस्य पञ्चविंशपलस्य तु।
ब्राह्मणाय ततो दद्याद् भूमिदानं विशेषतः ॥१८॥
हरिवंशश्रुतिं कुर्याद्भार्यया सहितस्तु वै।
हवनं तर्पणं कुर्यान्मार्जनं तु ततः परम् ॥१६॥

और ब्राह्मणों को इच्छानुसार भोजन कराकर दश प्रकार की गौवों का दान तथा बच्चों सहित पत्नी की मूर्ति ताँबा, चाँदी अथवा सुवर्ण की बनवाकर ब्राह्मण को दान करदे, इसमें भूमि दान करने का विशेष महत्व है, पश्चात् फिर स्त्री पुरुष दोनों हरिवंश कथाको सुनकर हवन, तर्पणआदि कार्य करें ॥१७-१६॥

जातवेदेति मन्त्रेण दशायुतजपं तथा।
गोपालमन्त्रजपनात्पुत्रलाभो भवेदनु ॥२०॥

"जातवेदसे—" इसमंत्र काएक लक्ष जप तथा गोपाल सन्तान मंत्र का जप करावे तो अवश्य सन्तान लाभ हो ॥ २० ॥

रोगनाशो भवेद्देवि ! काकवन्ध्या लभेत्सुतम् ॥२१॥

हे देवि ! ऐसा करने से रोग दूर होकर काकवन्ध्या को भी पुत्र सुख प्राप्त होवे ॥ २१ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे
ज्येष्ठानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं
नाम पञ्चसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७५ ॥

पचहत्तरवाँ अध्याय समाप्त ॥ ७५ ॥

अथ षट्सप्ततितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अयोध्यानगरे देवि ! कायस्थोऽत्रसदद्विजे ।
रामदास इति ख्यातस्तस्य भार्या तु देविका ॥ १ ॥

शिवजी ने कहा—हे देवि ! अयोध्यापुरी में रामदास नाम का एक कायस्थ और देविका नाम की उसकी स्त्री वे दोनों निवास करते थे ॥ १ ॥

विष्णुभक्तिरतो नित्यं ब्राह्मणस्य च सेवकः ।
भार्या पतिव्रता तस्य पतिसेवासु तत्परा ॥ २ ॥

वह नित्य विष्णु भगवान् में भक्ति रखने वाला और ब्राह्मणों की सुश्रूषा करने वाला परम सेवक था, उसकी स्त्री जो थी वह पतिव्रता और पति की सेवा नित्य किया करती थी ॥ २ ॥

भाग्यवान् सर्ववस्तूनां विक्रेता गज-वाजिनाम् ।
तस्य सखाऽभवद्विप्रो ब्राह्मणो वेदपारगः ॥ ३ ॥

वह बड़ा भाग्यवान् और हाथी आदि सब वस्तुओं का विक्रेता था, उसका मित्र एक ब्राह्मण जो कि वेद को अच्छी तरह जानने वाला हुआ ॥ ३ ॥

आगतो वै गृहे तस्य प्रेम्णा मित्रस्य भामिनि ।
चातुर्मास्ये स्थितेस्तत्र स्वर्णं शतपलं तदा ॥ ४ ॥

हे प्रिये ! वह ब्राह्मण एक मित्रताके नाते और प्रेम वश वर्षाऋतु में आकर उसके (कायस्थ के) यहाँ रहने लगा और उसके पास सौ पल सुवर्ण भी था ॥ ४ ॥

कायस्थस्य गृहे तत्तु स्थापितं ब्राह्मणेन वै ।
वाराणस्यां गतो देवि ! स्नानार्थं स द्विजोत्तमः ॥५॥

वह ब्राह्मण अपना सब धन कायस्थ के घर में रख अपने काशी स्नान करने चला गया ॥ ५ ॥

शरीरं त्यक्तवाँस्तत्र ब्रह्मचारी द्विजस्तदा ।
ततो बहुगते काले कायस्थस्य दरिद्रता ॥ ६ ॥

और वह ब्रह्मचारी ब्राह्मण उस पवित्र काशीपुरी में ही अपना शरीर त्याग कर दिया इसके बाद कालान्तर में कायस्थ भी दरिद्र हो गया ॥ ६ ॥

तद्धनं ब्राह्मणस्यैव भुक्तं तेन वरानने ।
कालव्यालस्य कवलः कायस्थः कामिनीयुतः ॥ ७ ॥

हे वरानने ! तब कालरूपी सर्प का ग्रास जो ब्राह्मण का धन था उसका उपभोग उस कायस्थने स्त्री सहित किया ॥७॥

अयोध्यायामभूद्देवि तयोः स्वर्गो ह्यजायत ।
नवत्यब्दसहस्राणि ब्रह्मलोके वरानने ॥ ८ ॥

और पुनीत अयोध्यापुरीमें मरकर स्त्री पुरुष दोनों स्वर्गको चले गये और वहाँ पर नब्बे हजार वर्ष वास किये ॥ ८ ॥

भुक्तं सौख्यमनेकं तु देवानामपि दुर्लभम् ।
ततः पुण्यक्षये जाते मर्त्यलोके सुरेश्वरि ॥ ९ ॥

हे सुरेश्वरि ! वहाँ पर अनेक प्रकार के सुखों का भोग किये जो कि देवताओं को भी दुर्लभ है, बाद को जब पुण्य नाश हो गया तब मर्त्यलोक में जाकर जन्म लिया ॥ ९ ॥

तत्पापेनाभवद्देवि कन्यापुत्रप्ररोधनम् ।
अस्य पापस्य वै शान्तिं शृणु त्वं परमेश्वरि ॥१०॥

हे देवि ! पूर्वपाप के प्रभाव से उसके सन्तान का अवरोध हो गया । अब उस पाप की शान्ति कहता हूँ तुम सुनो ॥१०॥

प्रायश्चित्तं महादेवि पूर्वजन्मसमुद्भवम् ।
गृहवित्तषडंशेन ततो दानं प्रकल्पयेत् ॥११॥

पूर्वजन्मार्जित पाप के प्रायश्चित के लिये अपने गृहके धन का छठाँ भाग द्रव्य दान करदे ॥ ११ ॥

गायत्रीत्र्यम्बकाभ्यां च जातवेदेन चानघे ।
जपं वै कारयेत् कान्ते प्रतिमन्त्रं दशायुतम् ॥१२॥

हे कान्ते ! गायत्री मंत्र त्र्यम्बक मंत्र तथा "जातवेदसे" इन प्रति मंत्रों से एक एक लक्ष जप करावे ॥ १२ ॥

ततो होमं दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा ।
पलैर्दशमितैर्होमैर्ब्राह्मणस्य तदाकृतिम् ॥१३॥

और उसके दशांश हवन तर्पण तथा मार्जन कराकर पन्द्रह पल सोने की एक प्रतिमा ब्राह्मण की (नराकार) बनवावे ॥१३॥

पूजयित्वा यथान्यायं ब्राह्मणाय ततो ददेत् ।
ततो गां कपिलां दद्यात्स्वर्णवस्त्रविभूषिताम् ॥१४॥

और विधिवत् उसका पूजन करके ब्राह्मण को देदे, तथा वस्त्रादि से अलंकृत कर एक कपिला गऊ भी दान करे ॥१४॥

प्रतिवर्षं ततो देवि दशवर्णां ददेत्पुनः ।
एवंकृते न सन्देहो वंशो ह्यस्य भवेत् खलु ॥१५॥

फिर इसी प्रकार यदि प्रत्येक वर्ष दशवर्ण की गौवोंका दान करता रहे तो करने वाले की वंशवृद्धि अवश्य होवे ॥ १५ ॥

रोगः शरीरजन्यो यस्तस्य नाशः प्रजायते ।
काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं मृतवत्सा ततः प्रिये ॥१६॥
लभेत्तु सुसुतं चैव नात्र कार्या विचारणा ॥१७॥

और शरीरजन्य जितना भी रोग हो उसका समूल नाश हो जाता है और काकवन्ध्या तथा मृतवत्सा भी उत्तम पुत्र प्राप्त करें, इसके करने में विचार न करे ॥ १६–१७ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे
मूलनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं
नाम षट्सप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७६ ॥

छिहत्तरवाँ अध्याय समाप्त ॥ ७६ ॥

अथ सप्तसप्ततितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

पश्चिमस्यामयोध्यायां योजनानां त्रयोपरि ।
राघवस्य पुरे देवि ! न्यवसन् बहवो जनाः ॥ १ ॥

शिवजी बोले—हे देवि ! अयोध्या से पश्चिम दिशा में तीन योजन अर्थात् बारह कोश की दूरी पर एक राघव नाम की पुरी में बहुत से लोग निवास करते थे ॥ १ ॥

तन्मध्ये ब्राह्मणो ह्येको योगशर्माद्रिनन्दिनि ।
तस्य पत्नी समाख्याता गुणज्ञा परमा शुभा ॥ २ ॥

उनके मध्य योगशर्मा नाम करके एक ब्राह्मण तथा परमा नाम की गुण सम्पन्न और सुन्दरी उसकी स्त्री वे वहाँ ही रहते थे ॥२॥

तत्र वासो भवेद्देवि ज्ञाननिस्तस्य कामिनी ।
स पुरोधा महादेवि ! धनाढ्यः कृपणस्तथा ॥ ३ ॥

हे देवि ! उस कृपण ब्राह्मण ने वहाँ पर अपने बुद्धि द्वारा पुरोहिती (यजमानी) वृत्ति से बहुत धन संचित कर लिया ॥३॥

प्रतिग्रहेण भो देवि ! व्ययकारी दिने दिने ।
तस्य भ्राता कनिष्ठश्च व्यापारकरणे रतः ॥ ४ ॥

और प्रति दिन प्रतिग्रह [कुत्सित दान] वह लेता और व्यय करता था, उसका छोटा भाई हमेशा व्यापार में रहता था ॥४॥

उभौ द्वौ ब्राह्मणौ देवि ! शान्तिमन्तौ परस्परम् ।
ततो बहुगते काले वैरं जातं तदा शिवे ! ॥५॥

हे शिवे ! इस प्रकार दोनों भाई वे ब्राह्मण परस्पर शांति से अपना जीवन बिताते थे, संयोगवश कुछ काल के बाद उनमें फुटमत हो गयी ॥ ५ ॥

स्वधनस्य विभागार्थं युद्धं जातं सुदारुणम् ।
तदुद्देशेन भो देवि मृतो भ्राता कनिष्ठकः ॥ ६ ॥

और अपने अपने हिस्से के लिये विलग होते समय घोर युद्ध छेड़ दिये, उस झगड़े का परिणाम यह हुआ कि छोटे भाई की मृत्यु हो गयी ॥ ६ ॥

तद्धनं गृह्य वै स्वर्णं सर्वं पुत्राय दत्तवान् ।
दानं नैव कृतं तेन ततो वै मरणं खलु ॥ ७ ॥

उसके मरने के बाद उसका सब धन बड़ा भाई अपने पुत्र को दे दिया, और धर्मार्थ कुछ भी व्यय नहीं किया बाद को उसकी भी मृत्यु हो गई ॥७॥

यमदूतैर्महाघोरे निक्षिप्तो रक्तकर्दमे ।
बहु यब्दसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ८ ॥

तब यमदूतों ने उसे लेजाकर रुधिर वाले नरक में डाल दिया और कई एक हजारवर्ष तक नरक यातनायें भोग कर ॥८॥

नरकान्निर्गतो देवि गर्दभत्वमजायत ।
वृकयोनिस्ततो भूत्वा मानुषत्वं ततोऽभवत् ॥ ६ ॥

जब नरक से उद्धार हुआ तो क्रमशः गधे, भेड़िये इन योनियों में भोगता हुआ मनुष्य योनि में फिर उत्पन्न हुआ ॥६॥

वेदविद्यारतो देवि कन्यावान् पुत्रवर्जितः ।
रोगयुक्तो महादेवि सदा भिक्षारतो नरः ॥१०॥

हे देवि ! वह वेदज्ञ होता हुआ भी भिक्षाचारी, रोगी, पुत्र रहित और कन्यावान् अर्थात् केवल कन्या ही थी ॥१०॥

पूर्वपापविशुद्ध्यर्थं प्रायश्चित्तं शृणुष्व मे ।
हरिवंशश्रुतिं कुर्याच्छिवपूजनमेव च ॥११॥

अब पूर्वपाप शुद्धि के लिये प्रायश्चित्त मुझसे सुनो ! हरिवंश पुराण का श्रवण और शिवार्चन करे ॥११॥

अमायां पिण्डदानं च गोदानं च विशेषतः ।
षडक्षरं तथा मन्त्रं शुद्धं मम सुरेश्वरि ॥१२॥

और अमावस्या तिथि को पिण्ड दान तथा गौ दान शास्त्र रीति से करके मेरे षडक्षर "ॐ नमः शिवाय" इस मंत्रका दशलाख जप और चित्रित उत्तम कुण्ड बनाकर हवनं करे ॥१२॥

जपं वै कारयेत्सत्यं दशलक्षं वरानने ।
होमं वै कारयेत्कान्ते कुण्डे चित्रे वरानने ॥१३॥
चतुरस्रे वरारोहे तिल-धान्यादि-तण्डुलैः ।
प्रतिमां कारयेत् कान्ते भ्रातुः स्वर्णस्य वै शिवे ॥१४॥

हे कान्ते ! चतुष्कोण निर्मित उस कुण्ड में तिलादि से हवन करने के बाद बावन पल प्रमाण सुवर्ण की प्रतिमा भाई की बनवाकर आगे कथित मंत्रों से उसकी पूजा करे ॥१३-१४॥

पलैर्द्विपञ्चसंख्याकैर्मन्त्रेणानेन पूजयेत् ।
ॐ नमः सवित्रे देवाय वेदवेदाङ्गधारिणे ॥१५॥
पूर्वजन्मकृतं सर्वं मम पापं व्यपोहतु ।
अज्ञानाद्वा प्रमादाद्वा भ्रातुरंशापहारतः ॥१६॥

"ॐ नमः सवित्रे देवाय वेदवेदाङ्गधारिणे" इस प्रकार कहता हुआ कहे कि मेरा पूर्व जन्म का किया हुआ सब पाप नष्ट हो और अज्ञान या प्रमाद वश जो मैंने भाई का अंश अपहरण कर भोग किया उसके निमित्त यह गौ आपको मैं अर्पित करता हूँ और आपके प्रति मेरा नमस्कार है ॥१५-१६॥

त्वदर्थं गौर्मया दत्ता सूर्यदेवाय ते नमः ।
प्रतिमां पूजयित्वा तु ब्राह्मणाय ददेत्ततः ॥१७॥
एवंकृते विधाने च शीघ्रं पुत्रमवाप्नुयात् ।
काकवन्ध्या पुनः पुत्रजनयित्री भवेद्ध्रुवम् ॥१८॥

इस प्रकार उस प्रतिमा का पूजन करके वह ब्राह्मण को दे दे, इस प्रकार के विधान के करने से शीघ्र ही पुत्र की प्राप्ति और काकवन्ध्या भी फिर पुत्र प्राप्त करे यह निश्चित है ॥१७-१८॥

व्याधयो नाशमायान्ति तूलराशिर्यथाऽनले ॥ १९॥

और व्याधि तो इस प्रकार नष्ट होती है जैसे कपास के ढेर को अग्नि भस्म करे ॥ १९ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे मूलनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम सप्तसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७७ ॥

सतहत्तरवाँ अध्याय समाप्त ॥ ७७ ॥

अथाष्टसप्ततितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

सरय्वाश्चोत्तरे कूले मङ्गलं नाम वै पुरम् ।
तत्र क्षत्त्रयवसञ्चैको मद्यमांसस्य भोगकृत् ॥ १ ॥

शिव जी कहे—कि हे देवि ! सरयू नदी के उत्तरीय तट पर एक क्षत्री निवासकरताथाऔर वहमदिरा माँस को भक्षणकरनेवालाथा॥

भावसेनश्च नाम्ना स तस्य पत्नी मनोहरा ।
वेश्या-द्यूतरतश्चासौ लुब्धश्चौरेषु सम्मतः ॥ २ ॥

वह भावसेन नाम करके था और मनोहर नाम की उसकी स्त्री थी, वह वेश्यागामी, जुआड़ी, लोभी और चोर था ॥ २ ॥

प्रत्यहं चौरकृत्येन धनसञ्चयसंमुखः ।
ततो बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्किल ॥ ३ ॥
सर्पेणापि महादेवि ! यमदूतैर्यमाज्ञया ।
रौरवे नरके क्षिप्तः षष्टिवर्षसहस्रकम् ॥ ४ ॥

वह नित्य चोरी करके बहुत सा धन संचित कर लिया था। इस प्रकार बहुत सा समय बीत जाने पर सर्प द्वारा उसकी मृत्यु हो गयी और यमाज्ञा से उनके दूत उसे लेजाकर रौरव नामक नरक में डाल दिये और उसमें साठ हजार वर्षतक वह वास किया ॥३-४॥

नरकान्निर्गतो देवि व्याघ्रयोनिं ततोऽलभत् ।
मानुषत्वं ततो लेभे कुले महति पूजिते ॥ ५ ॥

हे देवि ! फिर नरक से निकलने के बाद व्याघ्र (बाघ) की योनि उत्पन्न हुआ, उसके बाद एक उत्तम कुल में जन्म लिया ॥

पूर्वजन्मनि भो देवि ! दीपदानं कृतं यतः ।
तत्फलेन महादेवि ! धनाढ्यत्वमजायत ॥ ६ ॥

और पूर्वजन्म में वह दीपदान किया था, जिसके फल-स्परूप धनिक हुआ ॥ ६ ॥

मद्यपानफलाद्देवि ! नानाज्वरसमुद्भवः ।
वेश्यासुरतसंयुक्तो यतोऽभूत्पूर्वजन्मनि ॥ ७ ॥

हे देवि ! जो मद्यपान किया था उसके दोष से अनेक प्रकार के शरीर में ज्वरादि उत्पन्न हो गये और पूर्व में जो वेश्या प्रसङ्ग किया था ॥ ७ ॥

तेन पापेन भो देवि ! पुत्राणां मरणं खलु ।
मनस्युद्विग्नता नित्यं जातो द्यूतरतः पुरा ॥ ८ ॥

उस पाप से उसके पुत्रों का मरण और द्यूत (जुआ) खेलने में जो रत रहा करता था उससे मन में उद्वेगता रहती थी ॥ ८ ॥

अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि सर्वपापविशुद्धये ।
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥ ९ ॥
वापी-कूप-तडागांश्च पथिमध्ये च कारयेत् ।
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं वरानने ! ॥१०॥

अब पूर्वजन्म के सब पापों की शुद्धि के लिये शान्ति कहता

हूँ, अपने गृह के धन का छठवाँ भाग द्रव्य से पुण्य कार्य करावे और मार्ग में बावली, कुआँ, पोखरा, इनका निर्माण कराकर गायत्री मूल मंत्र से एक लक्ष जप करावे ॥ ९-१० ॥

दशांशं हवनं तद्वत्तर्पणं मार्जनं तथा ।
दशवर्णां ततो दद्याद्वृषभेण समन्विताम् ॥११॥

और उसके दशांश हवन, तर्पण, मार्जन करावे तथा बैल के साथ दश वर्ण की गौवों का दान करे ॥ ११ ॥

एवं पापविशुद्धिः स्यान्नात्र कार्या विचारणा ।
पुत्रश्च जायते देवि ! वन्ध्यात्वं च प्रणश्यति ॥१२॥

हे देवि ! इस प्रकार के विधान का आचरण करने से पापों की शुद्धि हो जाती है, इसे विना विचारे ही करे तो पुत्र भी हो और वन्ध्यापन भी दूर हो जाय ॥ १२ ॥

मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम् ।
रोगाःविनाशमायान्ति व्याधयश्च तथा शिवे ॥१३॥

हे शिवे ! और मृतवत्सा स्त्री भी चिरजीवि उत्तम पुत्र प्राप्त करे तथा सब रोग भी दूर हो जायँ ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे मूलनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामाष्टसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७८ ॥

अठहत्तरवाँ अध्याय समाप्त ॥ ७८ ॥

अथैकोनाशीतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

मध्यदेशे विशालाक्षि हिडम्बं नाम वै पुरम् ।
लवणकारोऽवसत्तत्र भोमो गुणविचक्षणः ॥ १ ॥

शिवजी ने कहा—हे विशालाक्षि ! मध्यदेश में हिडम्ब नाम

का एक नगर था, जिसमें एक लवणकार (नोनिया) भीम नामक और गुणज्ञ निवास करता था ॥ १ ॥

प्रत्यहं लवणं कृत्वा विक्रयं चाकरोत् सदा ।
तस्य भार्या पुण्यवती पुत्रत्रयमजीजनत् ॥ २ ॥

वह नित्यप्रति नमक बनाकर बेचा करता था। उसकी स्त्री पुण्यवती थी और उसे तीन पुत्र उत्पन्न हुए ॥ २ ॥

धन-धान्य-वृष-च्छाग-गोमहिष्यादिकं तथा ।
बहूनि सञ्चितानि स्युर्लवणस्यालयः प्रिये ॥ ३ ॥

हे प्रिये! उस नोनियेके पास धन-धान्य, बैल, बकरी, गौ, भैंस आदि बहुत संचित हो गया था और नमक भी उसके पासबहुत था॥३

तस्य ज्येष्ठः सुतो देवि वेश्यासुरततत्परः ।
एकस्मिन्समये देवि लवणाब्धौ निशामुखे ॥ ४ ॥
स्त्रियां सहाद्रितनये वृषभौ पतितौ तदा ।
श्रुत्वा तत्र तदा देवि निशायां न गतोऽपि सः ॥ ५ ॥

और उसका बड़ा लड़का वेश्या के साथ रमा करता था, संयोग वश एक दिन रात्रि के समय दो बैलों के सहित उसकी स्त्री नमक समुद्र में गिर गई परन्तु यह सुनकर भी रात्रि के समय वह नोनिया नहीं गया ॥ ४-५ ॥

त्रयाणां वै भवेन्मृत्युः स्वकाले ज्ञातिना सह ।
भार्या निःसारिता तेन वृषभौ मृत्युसंयुतौ ॥ ६ ॥

और वहाँ ही तीनों की मृत्यु हो गयी, इसके बाद उसने अपने परिवार की सहायता से मृत उन तीनोंको बाहर निकाला ॥६॥

ततः सर्वं वयो जातं वृद्धे सति वरानने ।
मरणं तस्य वै जातं लवणकारस्य पार्वति ॥ ७ ॥

हे पार्वती! इस प्रकार सब अवस्था बीत जाने और वृद्धावस्था आने पर उस नोनिये की भी मृत्यु हो गयी ॥ ७ ॥

यमदूतैर्महाघोरैर्नरके घोरसंज्ञके ।
पातितस्तत्र देवेशि द्वाविंशतिसहस्रकम् ॥ ८ ॥
वर्षं सुभुज्यते देवि कृमिसूचिमुखैर्युतम् ।
नरकान्निःसृतो देवि व्याघ्रयोनावजायत ॥ ९ ॥

तब यमाज्ञा से उनके दूतों ने उसे घोर नरक में गिरा दिया और बाइस हजार वर्ष सूई के समान तीक्ष्ण मुख वाले कृमियों द्वारा पीड़ित हो दुःखोंको भोगा, नरक शरीर भोग लेने के बाद जब उससे बाहर आया तब व्याघ्र (बाघ) की योनि पाया ॥८-९॥

पुनश्छागस्य वै योनिं बिडालस्य ततोऽगमत् ।
मानुषत्वं ततो लेभे देशे पुण्यतमे शुभे ॥१०॥

उसके बाद फिर बकरे की और बिल्ली की योनि पायी इन योनियों में भोग लेने के बाद उत्तम पुनीत देश में मनुष्य शरीर से जन्म लिया ॥ १० ॥

स्वकर्मवशगो नित्यं धन-धान्यसमन्वितः ।
गुणज्ञः सर्वविद्यानां कन्यापुत्रैश्च वर्जितः ॥११॥

और अपने कर्म को नित्य करने वाला, सम्पत्तिशाली तथा सब विद्याओं में पटु हुआ, किन्तु सन्तान रहित हुआ ॥ ११ ॥

लवणकारस्य मरणं गङ्गायां पूर्वजन्मतः ।
तत्फलेन महादेवि ! धनाढ्यत्वं प्रजायते ॥१२॥

हे देवि ! पूर्व जन्म के संस्कार से उस नोनिये का शरीरत्याग गङ्गा तट पर ही हुआ था, उस फल के प्रताप से धनवान् हुआ १२

स्वभार्या पतिता देवि ! लवणकूपे निशामुखे ।
नैव निःसरिता तेन ततः कन्या प्रजायते ॥१३॥

और रात्रि समय नमक-कूप में गिरी हुई अपनी स्त्रीका उद्धार नहीं किया था जिससे कि उसे केवल कन्यायें ही होती थीं ॥१३॥

वृषभौ पतितौ कूपे पातितौ मृत्युमागतौ ।

तेन दोषेण देवेशि पुत्रो नैव प्रजायते ॥१४॥

और जो गिरे हुए दोनों बैलों का उद्धार नहीं किया था उस पाप से पुत्र रहित हुआ ॥ १४ ॥

परस्त्रीरतिसंयोगं यत्कृतं पूर्वजन्मनि ।
तेन पापेन भो देवि! शरीरे रोगसम्भवः ॥१५॥

हे देवि! उसने पूर्व जन्म में पर स्त्री के साथ जो प्रसङ्ग किया था, उस पाप के दोष से शरीर रोगी हो गया ॥ १५ ॥

अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि! सुशोभने ।
गृहवित्ताष्टमं भागं ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥१६॥

हे देवि! अब इस पाप की शान्ति कहता हूँ सुनो, अपने गृह के धनका आठवाँ भाग द्रव्य ब्राह्मणको दान करे ॥ १६ ॥

गायत्रीलक्षजाप्यं च विप्रद्वारा च कारयेत् ।
हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं तथा ॥१७॥

और गायत्री मंत्र का एक लक्ष जप ब्राह्मण द्वारा कराकर उसके दशांश हवन, तर्पण तथा मार्जन करावे ॥ १७ ॥

सुवर्णप्रतिमां कृत्वा लक्ष्म्याः पञ्चपलेन वै ।
रौप्यस्यैव वरारोहे वृषभौ द्वौ सुनिर्मलौ ॥१८॥
पलैर्दशमितैः कुर्यात्पूजयित्वा यथाविधि ।
मन्त्रेणानेन देवेशि स्वोपचारैः पृथक् पृथक् ॥१९॥

और पाँच पल (२५ तोले) प्रमाण सोने की एक प्रतिमा लक्ष्मी की बनवावे और दशपल (५० तोले) प्रमाण चाँदी की दोनों बैलों की उत्तम प्रतिमा बनवाकर उसे शास्त्ररीति से पृथक् पृथक् अग्रिम मंत्र द्वारा उपचार सहित पूजन करे ॥ १८-१९ ॥

ॐ लक्ष्मि देवि! महालक्ष्मि कमले सर्वसिद्धिदे!
मम पूर्वकृतं पापं तत्क्षमस्व दयानिधे! ॥२०॥

हे लक्ष्मि! हे देवि! हे महालक्ष्मी, हे कमले! सब सिद्धियों

को देने वाली! दया के समुद्र! यह कहता हुआ कहे कि मेरा पूर्वजन्म कृत पाप आप क्षमा करें ॥ २० ॥

मन्त्रः—ॐलक्ष्म्यै नमः पाद्यं समर्पयामि ॐलक्ष्म्यै नमः अर्घ्यं० ॥ ॐदेव्यै नमः स्नानं० ॥ॐकमलायै नमः गन्धं० ॥ सर्वायै नमः धूपं० ॥ॐसिद्धिदायै नमः दीपं०॥ एवं ॐपाद्यादीनि सर्वाणि दापयेत् ॥

ॐनन्दिकेश्वर भूतेश! गणानामधिपोभवान् ।
मम पूर्वकृतं पापं क्षम्यतां परमेश्वर! ॥२१॥
इति मन्त्रेण वृषभौ पूजितौ शुभ्ररूपिणौ ।
पूजयित्वा यथान्यायं ब्राह्मणाय ददेत्ततः ॥२२॥

उपरोक्त कथित इन मंत्रों द्वारा रौप्य निर्मित बैलों की प्रतिमा संकल्प पूर्वक पूजन कर ब्राह्मण को दे दे ॥ २१-२२ ॥

ततो गां कपिलां दद्यात्स्वर्णशृङ्गीं सुभूषिताम् ।
एवं कृते वरारोहे! यत्कृतं पूर्वजन्मनि ॥२३॥

इसके बाद एक कपिला गौ सोने से मढ़ी हुई सींगवाली सुसज्जित कर ब्राह्मण को देवे, ऐसा करने से पूर्वजन्म का किया हुआ पाप ॥ २३ ॥

तत्सर्वं नाशमायाति शीघ्रमेव न संशयः ।
पुत्रोऽपि जायते देवि! वन्ध्यात्वं च प्रशाम्यति॥२४॥

शीघ्र ही सब दूर हो जाता है इसमें संशय नहीं, वन्ध्यापन दूर होकर पुत्र उत्पन्न होता है ॥ २४ ॥

रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ।
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम् ॥२५॥

और समस्त रोग भी नष्ट हो जाते हैं इसे बिना विचारे ही करना चाहिये, क्योंकि इसके करने से मृतवत्सा स्त्री भी उत्तम दीर्घायु पुत्र लाभ करती है ॥ २५ ॥

काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं पुनर्देवि न संशयः ॥२६॥

हे देवि ! और काकवन्ध्या स्त्री भी फिर पुत्र पाती है–इसमें सन्देह नहीं ॥ २६ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसम्वादे मूलनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकोनाशीतितमोऽध्यायः ॥७९॥

उनासीयवाँ अध्याय समाप्त ॥ ७९ ॥

अथाशीतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अयोध्यायां महादेवि ! वशिष्ठस्यैव चाश्रमे ।
श्रीधनेश्वरशर्म्मेति ब्राह्मणो न्यवसत् प्रिये ॥ १ ॥

शिवजी बोले कि–हे देवि ! अयोध्यापुरी में और वशिष्ठ जी के आश्रममें एक 'धनेश्वर' नामका ब्राह्मण निवास करता था ।१॥

स पण्डितो गुणज्ञश्च धनी मानी विचक्षणः ।
स्त्री च पतिव्रता तस्य पतिसेवासु तत्परा ॥ २ ॥

वह पण्डित और गुणी तथा धनिक था और उसकी पतिव्रता जो स्त्री थी वह सर्वदा पति की सेवा में तत्पर रहती थी ॥ २ ॥

पुत्रद्वयं तथा जातं विद्यावृत्तिर्बभूव सः ।
भागिनेयस्ततो देवि तद्धनेश्वरशर्मणः ॥ ३ ॥

हे देवि ! उसे दो पुत्र उत्पन्न हुए और वे विद्यावृत्ति में प्रवृत्त हुआ, कुछ काल बाद उस धनेश्वर शर्मा ब्राह्मण का भानजा आया ॥ ३॥

तत्र वासार्थमायातः सपत्नीको वरानने ! ।
तीर्थयात्राप्रसङ्गेन गृहे तस्याऽवसद्द्विजः ॥ ४ ॥

उसका वह भानजा स्त्री सहित तीर्थाटन के ध्येय से उसके यहाँ आकर घर में वास करने लगा ॥ ४ ॥

मासमेकं स्थितस्तत्र भागिनेयस्ततो मृतः ।
दष्टः सर्पेण देवेशि कालपाशावृतो द्विजः ॥ ५ ॥

हे देवेशि ! उसे रहते एक महीना भी नहीं हुआ कि कालग्रास में होकर सर्प काटने से उसकी मृत्यु हो गयी ॥ ५ ॥

वर्षमात्रे ततो जाते भागिनेयस्य या वधूः ।
धनेश्वरे महाप्रीतिमकरोत्सा मम प्रिये ॥ ६ ॥

हे प्रिये ! उसके मरने के एक वर्ष बाद उसकी स्त्री जो थी वह धनेश्वर शर्मा से प्रेम करने लगी ॥ ६ ॥

पुत्राणां मरणं देवि जातं तस्याघरूपिणः ।
गृहे स्वर्णं च रौप्यं च सर्वं तस्यै न्यवेदयत् ॥ ७ ॥

इस तरह से भानजे की स्त्री से रमण करने के पाप रूपी दोष से उसके पुत्रों का मरण हो गया, तब धनेश्वर शर्मा ने अपना सब धन उस भानजे की स्त्री को दे दिया ॥ ७ ॥

ततो बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्किल ।
यमदूतैर्महाघोरे नरके पातितः शिवे ॥ ८ ॥
यमाज्ञया वरारोहे षष्टिवर्षसहस्रकम् ।
अन्यत्रापि कृतं पापं प्रयागे च विनश्यति ॥ ९ ॥

हे शिवे ! इस प्रकार बहुत सा समय बीत जाने पर उस धनेश्वर शर्मा की भी मृत्यु हो गई। यमाज्ञा से उनके दूतों ने उसे घोर नरक में डाल दिया और वह साठ हजार वर्ष तक नरक यातनायें भोगता रहा ॥८—९॥

प्रयागे यत्कृतं पापं रामपुर्यां विनश्यति ।
अयोध्यायां कृतं पापं वज्रलेपो भविष्यति ॥१०॥

अन्यत्र का किया हुआ पाप प्रयाग में नष्ट हो जाता

है, और प्रयाग में किया हुआ पाप अयोध्या पुरी में नष्ट होता है, अयोध्या पुरी में किया पाप वज्रलेप के समान हो जाता है, वह कहीं भी नष्ट नहीं होता ॥ १० ॥

नरकान्निःसृतो देवि वकयोनावजायत ।
पुनर्दर्दुरयोनिं वै काकयोनिं ततोऽगमत् ॥११॥

हे देवि ! वह नरक शरीर भोगने के बाद वक (बगुले) की योनि में उसके बाद दर्दुर (मेढक) की योनि, उसके बाद फिर काक (कौए) की योनि में उत्पन्न हुआ ॥ ११ ॥

पुनर्मानुषयोन्यां वै धन-धान्यसमन्वितः ।
जातः पुण्यतमे देशे देवगन्धर्वसेविते ॥१२॥

फिर गन्धर्वों से सेवित वह पुनीत देश में धनादि युक्त मनुष्य योनि में उत्पन्न हुआ ॥ १२ ॥

सर्वविद्यासु विख्यातो गुणज्ञो रूपवांस्तथा ।
पूर्वजन्मनि देवेशि भागिनेयवधूं प्रति ॥१३॥

हे दवेशि ! सुन्दर शरीर तथा सब विद्याओं में पटु और गुणी हुआ, एवं पूर्वजन्म में भानजे की स्त्री से ॥ १३ ॥

सम्भोगं कृतवान् विप्रः कुक्षिपीडा ततः परम् ।
वंशच्छेदो विशालाक्षि कन्या वै बहवस्तथा ॥१४॥

उस ब्राह्मण ने जो संभोग किया था उस पाप से उसके उदरमें पीड़ाउत्पन्नहोगई औरवंश नष्टहोकर बहुतसी कन्याएँ उत्पन्न हुई

भागिनेयस्य वै द्रव्यं भुक्तं पूर्वमनेन वै ।
शरीरे बहुधा पीडा परस्त्रीगमनादनु ॥१५॥

और भागिनेय का सब धन उसने पूर्वजन्म में जो भोग किया था इस कारण और परस्त्री गमनादि दोप से उसका सम्पूर्ण शरीर पीड़ा से पीड़ित हो गया ॥ १५ ॥

अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं मम वल्लभे ! ।
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यञ्च कारयेत् ॥१६॥

गायत्रीजातवेदाभ्यां जापं वै कारयेत्ततः ।
दशांशं हवनं कृत्वा तर्पणं मार्जनं तथा ॥१७॥

हे वल्लभे ! अब इसकी शान्ति को कहता हूँ तुम सुनो, अपने गृह के धन का छठवाँ भाग द्रव्य धर्मार्थ व्यय करे और गायत्री, जातवेदसे, इन मंत्रों से जप कराकर उसके दशांश हवन, तर्पण तथा मार्जन करावे ॥ १६-१७ ॥

जीर्णोद्धार वरारोहे कूपं चैव तडागकम् ।
तद्वदेव च वै कुर्य्यात् षष्टि वृक्षप्ररोपणम् ॥१८॥

हे वरारोहे ! पुराने टूटे फूटे कूएँ, तालाब आदि का जीर्णोद्धार कराये और साठ वृक्ष की एक वाटिका (बगीचा) लगावे ॥१८॥

प्रयागे माघमासे तु तुलादानं प्रयत्नतः ।
धूम्रवर्णां तथा गां वै दद्याद्विप्राय सत्कृताम् ॥१९॥

और प्रयाग में माघ महीने में तुला दान करे और धूम्र वर्ण की एक उत्तम गौ ब्राह्मण को दान करे ॥ १९ ॥

एवंकृते वरारोहे ! पूर्वपापं विशुद्ध्यति ।
पुत्रोऽपि जायते देवि ! वन्ध्यात्वञ्च प्रशाम्यति ॥२०॥

हे देवि ! इस प्रकार के नियम से पूर्वकृत सब पाप नष्टहोकर पुत्र उत्पन्न होता है और वन्ध्यापन दोष भी दूर हो जाता है ॥२०॥

काकवन्ध्यात्वशान्त्यर्थं रवियुक्तां तु सप्तमीम् ।
कृत्वा व्रतं वरारोहे ! सुवर्णं दानमाचरेत् ॥२१॥

और काकवन्ध्यापन की शान्ति के लिये रवियुक्त सप्तमी व्रत का आचरण तथा सुवर्ण दान करे ॥ २१ ॥

शय्यादानं ततो दद्यान्मृतवत्सा सुपुत्रिणी ।
सर्वे रोगाः क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥२२॥

और शय्यादान करने से मृतवत्सा स्त्री भी सुपुत्र वाली होतीहै, तथा सब रोग भी नष्ट हो जाते हैं। इसकेकरने में कुछ विचार न करे ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे पूर्वाषाढनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नामाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८० ॥

अस्सीयवाँ अध्याय समाप्त ॥ ८० ॥

अथैकाशीतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

कर्णाटे वै ततो देवि पुरं च शिवसञ्ज्ञकम् ।
वसन्ति तत्र बहवो वैश्याः पण्योपजीविनः ॥ १ ॥

शिवजी बोले हे देवि ! कर्णाटक देश में एक शिवपुर नामक नगर था जिसमेंव्यापारसेजीविकाचलाने वाले वैश्यजन निवास करते थे १

तन्मध्ये वैश्य एको हि धरणीकरविश्रुतः ।
तस्य रूपवती भार्या सुन्दरी बहुसंयुता ॥ २ ॥

उनके मध्य में एक धरणीकर नाम का वैश्य और रूप में अत्यन्त सुन्दर उसकी स्त्री रहती थी ॥ २ ॥

व्यापारेण महादेवि ! धनं च बहु सञ्चितम् ।
ततो बहुदिने काले तस्य मित्रं द्विजोऽप्यभूत् ॥ ३ ॥

हे देवि ! वह व्यापार द्वारा प्रचुर धन सञ्चित किया और बहुत काल बीत जाने पर उसकी मित्रता एक ब्राह्मण से हो गयी ॥३॥

ब्राह्मणः सोऽपि वै भ्रष्टः कष्टं भुक्त्वा दिने दिने ।
स्वर्णं शतपलं देवि ! हीरकं मौक्तिकं तथा ॥ ४ ॥

अभाग्य वश ऐश्वर्य से च्युत होकर ब्राह्मण दिनों दिन कष्ट भोगता हुआ सौ पल सोना और हीरा, मोती वह सब रत्न ॥४॥

स्थापितं ब्राह्मद्रव्यं स्वगृहे मित्रकारणात् ।
ततो वृद्धे तु सञ्जाते वैश्यमृत्युरभूत्पुरा ॥ ५ ॥

उस वैश्य ने मित्रता के नाते उस ब्राह्मण का धन अपने घर में धर दिया और बुढ़ापे में वह मर गया ॥ ५ ॥

पश्चात्पत्नी मृता तस्य व्रतिनी गर्ववर्जिता ।
वैश्यस्य चाऽभवत्स्वर्गं दिव्यवर्षसहस्रकम् ॥ ६ ॥

उसके मरनेके बाद गर्व रहित व्रत करनेवाली उसकी स्त्री भी मर गयी और उसके पुण्य से वैश्य को दिव्य स्वर्ग की प्राप्ति हुई ॥६॥

पत्न्या सह वरारोहे ! भुक्त्वा स्वर्गफलं ततः ।
चक्रयोनिं ततो लेभे चक्रवाकस्ततोऽभवत् ॥ ७ ॥

हे वरारोहे ! वह वैश्य पत्नी के साथ स्वर्ग सुख भोगकर, फिर बक (बगुले) की योनिके बाद चक्रवाक (चकवे) की योनि में उत्पन्न हुआ ॥ ७ ॥

हंसयोन्यां ततो जातो मानुषत्वं ततोऽगमत् ।
पूर्वसम्बन्धतः पूर्वपुण्यात्पातिव्रतादपि ॥ ८ ॥

फिर हंस योनिमें उत्पन्न होकर पूर्वजन्म कृत पुण्यके प्रतापसे और पतिव्रता धर्मवाली स्त्री के पुण्य से मनुष्य शरीर प्राप्त किया ॥८॥

पुनर्विवाहिता देवि ! ब्राह्मणस्वापहारतः ।
वन्ध्या जाता तु सा नारी दुःखिता साऽप्यहर्निशम् ९

हे देवि ! उपर्युक्त सम्बन्ध से फिर वही स्त्री उसके साथ विवाही गयी और पूर्व में ब्राह्मण का धन लेकर नहीं दिया था इससे वन्ध्या होकर रातदिन दुःखित रहा करती थी ॥ ९ ॥

तस्य देहेऽभवद्व्याधिः कफ-वातसमन्वितः ।
धनाढ्यो बहुधा कन्या जायन्ते च पुनः पुनः ॥१०॥

और कफ, वातादि दोष करके उसका शरीर रोग ग्रस्त और धनिक हुआ, उसे सर्वदा कन्या ही होती थी ॥ १० ॥

अस्य निग्रहहेत्वर्थं शृणु सर्वं वरानने ! ।
यद्गृहे वित्तमर्द्धं तद् ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥११॥

अब इसकी शान्ति के लिये निग्रह कहता हूँ वह सब सुनो जो धन अपने घरमें हो उसका आधा ब्राह्मण को दान कर दे ॥११॥

ॐ लक्ष्म्यै नमोऽथ मन्त्रेण दशायुतजपं ततः ।
दशांशहवनं तद्वत्तर्पणं मार्जनं तथा ॥१२॥

"ॐ लक्ष्म्यै नमः" इस मंत्रसे दश अयुत जप कराकर उसके दशांश हवन, तर्पण तथा मार्जन करावे ॥ १२ ॥

गामेकां कृष्णवर्णां वै स्वर्णयुक्तां सवत्सकाम् ।
ब्राह्मणाय ततो दद्यान्मुक्तालाङ्गूलसंयुताम् ॥१३॥

और व्याई हुई एक कपिला गौ स्वर्ण-आभूषणों से अंलकृत ब्राह्मण को दान करे ॥ १३ ॥

भोजनं कारयेत्पूज्यान् ब्राह्मणान् वेदपारगान् ।
शतं वा द्विशतं देवि ! त्रिशतं वा विशेषतः ॥१४॥

उसके बाद सुपूजनीय वेदज्ञ दो या तीन सौ ब्राह्मणों को श्रद्धा से भोजन करावे ॥ १४ ॥

पलैः शतैः सुवर्णस्य वेदीं कृत्वा विचक्षणः ।
तन्मध्ये च द्विजस्यैव रौप्यस्यैव चाकृतिम् ॥१५॥

और सौ पल सोने की एक वेदी बनवाकर उसपर चाँदी की ब्राह्मण की प्रतिमा बनवाकर स्थापित करे ॥ १५ ॥

पूजयेच्छ्रद्धया देवि ! मन्त्रेणैवं पुनः पुनः ॥१६॥
ब्रह्मंस्त्वं कपिलो विष्णुः सर्वसाक्षी जगन्मयः ।

हे देवि ! और श्रद्धा पूर्वक इस मंत्र से पूजन करे ॥ १६ ॥

ममापराधं देवेश ! क्षम्यतां पूर्वजन्मनः ।
द्रव्यं मित्रस्य भो देव ! स्थापितं स्वगृहे मया ॥१७॥
न दत्तं वै मयाऽज्ञानात् क्षम्यतां परमेश्वर ! ।
मन्त्रेणानेन देवेशि पूजनं विधिपूर्वकम् ॥१८॥

हे ब्रह्मन्! आप कपिल स्वरूप विष्णु हो तथा सर्वसाक्षी, सर्वव्यापक, हे देवेश! पूर्वजन्मकृत मेरा अपराध क्षमा करें, और हे देव! मित्र का धन अपने गृह में रखकर अज्ञान वश नहीं दिया उसका अपराध भी क्षमा करें ऐसा कहता हुआ विधिवत् पूजन करे॥ १७-१८॥

पूजयित्वा ततो देवि! ब्राह्मणाय प्रदापयेत्।
एवं कृत्वा वरारोहे! शीघ्रं पुत्रः प्रजायते॥१९॥

हे देवि! इसके बाद उस पूजित प्रतिमा को ब्राह्मण को दे दे ऐसा करने से शीघ्र ही पुत्र प्राप्त हो जाता है॥ १९॥

काकवन्ध्या पुनर्देवि! कन्यका जननी तथा।
पुत्रं प्रसूयते देवि! न च कन्यां प्रसूयते॥२०॥

हे देवि! काकवन्ध्या और केवल कन्या ही जनन करनेवाली स्त्री भी पुत्र उत्पन्न करती है॥ २०॥

मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम्।
व्याधयः संक्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा॥२१॥

और मृतवत्सा स्त्री भी दीर्घायु उत्तम सन्तान पाती है तथा सब व्याधियाँ भी नष्ट हो जाती हैं इसमें सन्देह नहीं है॥२१॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे
पूर्वाषाढनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं
नामैकाशीतितमोऽध्यायः॥ ८१॥

एकासीयवाँ अध्याय समाप्त॥ ८१॥

अथ द्व्यशीतितमोऽध्यायः।

शिव उवाच।

अन्तर्वेदे विशालाक्षि लोध्रोऽवात्सीत् स पुण्यकृत्।
गन्धर्वाख्ये पुरे देवि! विख्याते यमुनान्तरे॥१॥

शिवजी बोले—हे देवि ! गंगा और यमुना के मध्यभूमि पर तथा यमुना तट के निकटवर्ती स्थान में गन्धर्व नामका एक नगर था जिसमें एक धर्मात्मा लोध्र (लोधी) रहता था ॥ १ ॥

सुभाग्यवान् गुणज्ञो हि बहुभृत्यैः सुपूजितः ।
भूपतिस्तस्य देशस्य दाता भोक्ता विचक्षणः ॥ २ ॥

वह भाग्यशाली, गुणज्ञ और बहुत से नौकरों से सेवित उस देश का राजा था तथा बुद्धिमान् और दान भोग करनेवाला भी था ॥२॥

ब्राह्मणस्य हृता भूमिरज्ञानाद्धै सुरेश्वरि ! ।
ब्राह्मणोऽपि विषं भुक्त्वा मृतस्तस्योपरि प्रिये ! ॥३॥

हे प्रिये ! उसने अज्ञान वश ब्राह्मण की भूमि अपहरण कर लिया और उस शोक से विष खाकर ब्राह्मण मर गया ॥ ३ ॥

ततो बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्पुरा ।
यमदूतैर्महाघोरे कुम्भीपाके निपातितः ॥ ४ ॥
यमाज्ञया वरारोहे ! युगमेकं च पातितः ।
महादुःखेन संतप्तो बहु कष्टं प्रलब्धवान् ॥ ५ ॥

इसके अनन्तर बहुत सा समय बीत जाने पर मृत्यु के बाद यमराज की आज्ञा से उनके दूतों ने कुम्भीपाक नामक घोर नरक में डाल दिया और एक युग पर्यन्त कठिन यातना से संतप्त होकर कष्ट को भोगता रहा ॥ ४–५ ॥

नरकान्निःसृतो देवि ! सूकरत्वं ह्यजायत ।
ऋक्षयोनिं ततो भुक्त्वा शुकयोनिं ततोऽगमत् ॥६॥

हे देवि ! नरक से निकल कर शूकर की योनि में उसके बाद रीछ (भालू) की योनि में फिर शुक (सुग्गे) की योनि में जन्म लिया ॥

पुनर्मानुषयोनिर्वै मध्यदेशे वरानने ! ।
धन-धान्यसमायुक्तो वंशहीनोऽभवत्तदा ॥ ७ ॥

हे वरानने ! फिर मध्यदेश में धनादि युक्त और सन्तान रहित मनुष्य शरीर धारण किया ॥ ७ ॥

पूर्वजन्मनि देवेशि हृता भूमिर्वरानने ! ।
ब्राह्मणो वै मृतः पूर्वं तदुद्देशेन वै शिवे ! ॥ ८ ॥

हे शिवे ! वह पूर्व जन्म में जो ब्राह्मण की भूमि का अपहरण किया था, उसके शोक में ब्राह्मण अपने शरीर का त्याग किया ।८।

अतः पुत्रविहीनोऽयं कन्यको बहु जायते ।
महारोगेण संतप्तो मृतपुत्रः पुनः पुनः ॥ ९ ॥

इसलिये वह पुत्र रहित हुआ और उसे बहुत-सी कन्यायें उत्पन्न हुईं, तथा महारोग से संतप्त हुआ और बारम्बार पुत्रों का मरण होता था ॥ ९ ॥

अस्य शान्तिमहं वक्ष्ये पूर्वपापस्य शान्तये ।
गायत्रीजातवेदाभ्यां त्र्यम्बकेण वरानने ॥१०॥

हे वरानने ! अब इस पूर्वजन्मकृत पापकी शुद्धि के लिये शान्ति कहताहूँ,गायत्रीमंत्र जात वेदसे,त्र्यंम्बकइन मंत्रों से जापकरावे ।१०।

दशायुतं जपं कार्यं प्रतिमन्त्रैः सुरेश्वरि ।
दशांशं हवनं तद्वत् तर्पणं मार्जनं तथा ॥११॥

उपर्युक्त प्रति मंत्र से दश अयुत (एकलक्ष) जप तथा उसके दशांश हवन, तर्पण, मार्जन करावे ॥ ११ ॥

दशवर्णा ततो दद्याच्छतब्राह्मणभोजनम् ।
भूमिदानं ततो कुर्याच्छतविग्रहमानकम् ॥१२॥

इसके बाद दशवर्णवाली गौ का दान और सौ ब्राह्मणों को भोजन कराकर सौ बीघे जमीन का दान करे ॥ १२ ॥

पलपञ्चसुवर्णस्य ब्राह्मणस्य तथाऽऽकृतिम् ।
पूजयित्वा यथान्यायं ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ॥१३॥

और पाँचपल (२५ तोले) सोने की एक प्रतिमा ब्राह्मण की बनाकर शास्त्र रीति से पूजन करके ब्राह्मण को दान दे देवे ॥ १३ ॥

प्रयागे मकरे मासि पत्न्या सह वरानने ! ।

स्नानं कुर्याच्च देवेशि पूर्वपापस्य शुद्धये ॥१४॥

हे वरानने ! मकर मास अर्थात् जब राशिके सूर्यमाघ महीने में हों तब प्रयाग में पूर्वपाप की शुद्धिके लिये स्नान करे ॥१४॥

एवं कृत्वा वरारोहे ! पुत्रोत्पत्तिर्भवेच्छिवे ।
वन्ध्यात्वं नाशमायाति काकवन्ध्या च गर्भिणी॥१५॥

हे शिवे ! ऐसे विधान को करने से शीघ्र ही पुत्रोत्पत्ति, बन्ध्यापन का नाश, और काकवन्ध्या स्त्री गर्भवती होती है । १५॥

मृतवत्सा लभेत् पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम् ।
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥१६॥

और मृतवत्सा चिरञ्जीवि उत्तम संतति लाभ करे और सब रोगों का शमन हो—इसके करने में विचार न करे ॥ १६ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे पूर्वाषाढनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम द्व्यशीतितमोऽध्यायः ॥ ८२ ॥

बयासीयवाँ अध्याय समाप्त ॥ ८२ ॥

अथ त्र्यशीतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अयोध्यायां विशालाक्षि मालाकारोऽवसत्पुरा ।
साधुवृत्तिरतः श्रीमान् ब्राह्मणानां च सेवकः ॥१॥

शिवजी बोले हे विशालाक्षि ! अयोध्यापुरी में एक माली रहता था । वह साधु वृत्तिक (विरक्त) और श्रीमान् ब्राह्मणों का सेवक था ॥ १ ॥

तस्य पत्नी महादुष्टा कुलटा च व्यभिचारिणी ।
माल्यं कृत्वा विशालाक्षि जीवयामास बान्धवान्॥२॥

उसकी पत्नी जो थी वह महादुष्ट स्वभाव वाली कुलटा

तथा व्यभिचारिणी थी और माली नित्य माला बनाकर उसके द्वारा अपने बांधवों का पोषण किया करता था ॥ २ ॥

तस्य मित्रं द्विजोऽप्येकः स्वर्णं लक्षद्वयं तथा ।
स्थापितं स्वगृहे तस्य गताश्च बहुवासराः ॥३॥

और उसका एक ब्राह्मण मित्र दो लाख सोना उसे देकर विदेश चला गया। जब उसे बहुत दिन बीत चुके ॥ ३ ॥

याचितं तेन स्वं द्रव्यमर्धं प्राप्तं तदा प्रिये ।
तदर्धं च व्ययं जातं मालाकारस्य वै गृहे ॥ ४ ॥

हे प्रिये ! तब वह आकर धन माँगने लगा और आधा द्रव्य पाया तथा आधा माली ने खर्च कर डाला ॥ ४ ॥

एवं बहुगते काले मालाकरो मृतः पुरा ।
अयोध्यायां विशालाक्षि स्वर्गस्तस्याऽभवत्किल॥५॥

इस प्रकार बहुत काल व्यतीत होने पर अयोध्या में मरने के कारण माली का स्वर्गवास हुआ ॥ ५ ॥

लक्षवर्षं वरारोहे ! भुक्तं स्वर्गं फलं शुभम् ।
ततः पुण्यक्षये जाते मानुषत्वेऽभवत्पुनः ॥ ६ ॥

और एक लाख वर्ष तक स्वर्ग के फलों का भोग कर पुण्य क्षीण हो जाने पर फिर मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ ॥ ६ ॥

तस्य पत्नी पुनर्देवि ! या स्थिता पूर्वजन्मनि ॥ ७ ॥
मध्यदेशे च देवेशि पुत्रकन्याविवर्जितः ।

हे देवेशि ! मध्य देश में जन्म लेकर वह सन्तान रहित हुआ और जो पूर्वजन्म में स्त्री थी वही फिर उसकी भार्या हुई ॥७॥

विवाहिता च सा देवि ! व्याधियुक्ता ज्वरातुरा ।
अस्य शान्तिं वरारोहे ! शृणु मे परमेश्वरि ॥८॥

हे देवि ! विवाह होते ही उसकी स्त्री व्याधि तथा ज्वर से पीड़ित हो गई, अब इसकी शान्ति मुझसे सुनो ॥ ८ ॥

षडङ्गं जापयेत्प्राज्ञैः शिवपूजनपूर्वकम् ।
षडक्षरेण मन्त्रेण लक्षजाप्यं वरानने ! ॥ ९ ॥

हे वरानने ! पण्डितों द्वारा षडंग का पाठ तथा शिवपूजन पूर्वक षडक्षर मंत्र का एक लाख जप करावे ॥ ९ ॥

हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं तथा ।
श्रवणं मासमेकं तु चण्डिकाचरितत्रयम् ॥१०॥

और उसके दशांश हवन, तर्पण, मार्जन करावे और एक महीना तक दुर्गापाठके तीनों चरितोंका पाठ श्रवण करे ॥१०॥

ततः षडंशं देवेशि ! ब्राह्मणाय समर्पयेत् ।
ततो गां कपिलां दद्यात्तिल-धेनुसुपूजिताम् ॥११॥

हे देवि ! अपने गृहके धनका छठवाँ भाग द्रव्य तथा गौ दान करे और एक कपिला गौ तथा तिल धेनुका पूजन करके दान दे ॥११॥

अश्वं दद्याद्विशालाक्षि महिषीं दुग्धसंयुताम् ।
सुवर्णस्य कृतं वृक्षं फल-पुष्पसमन्वितम् ॥१२॥

और घोड़े तथा दूध देने वाली भैंस का दान दे और फल-पुष्प सहित सुवर्ण का एक वृक्ष ॥ १२ ॥

दद्याद्दशपलं देवि ! ततः पुत्रः प्रजायते ।
मृतवत्सा च या नारी काकवन्ध्या च रोगिणी॥१३॥

हे देवि ! दश पल (५० तोले) प्रमाण सोने की प्रतिमा बनवाकर दान देवे इससे पुत्रकी प्राप्ति होती है और मृतवत्सा, काकवन्ध्या स्त्री तथा जो रोगिणी हैं ॥ १३ ॥

सर्वासां वाञ्छितं कार्यं जायते नात्र संशयः ॥१४॥

उसका भी मनोरथ सिद्ध हो जाता है, इसमें संदेह नहीं करना चाहिये ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे पूर्वाषाढनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम त्र्यशीतितमोऽध्यायः ॥ ७३ ॥

तिरासीयवाँ अध्याय समाप्त ॥ ७३ ॥

अथ चतुरशीतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच

श्वेतपर्वे महातीर्थे रामपुर्यां वरानने ।
कान्यकुब्जोऽवसद्विप्रो व्यापारकरणे रतः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं—कि हे वरानने ! श्वेतपर्व नामक महातीर्थ में रामपुरी थी उसमें एक कान्यकुब्ज ब्राह्मण व्यापार करने वाला रहता था ॥ १ ॥

अश्वादिकं वरारोहे वृषचर्माऽजिनाम्वरम् ।
प्रत्यहं गृह्यते देवि ! विक्रयं क्रियते सदा ॥ २ ॥

और वह घोड़े तथा वृषादि के चर्म को खरीद कर बेंचा करता था ॥ २ ॥

द्यूतवेश्यारतो नित्यं परस्त्रीगमनं तथा ।
प्राकरोच्च सुरापानं गुरुदेवोऽपमानकृत् ॥ ३ ॥

और जूआ, वेश्यागमन, परस्त्रीगमन, मदिरापान आदि कर्म करने वाला और गुरु तथा देवताओं का निन्दा किया करता था ।३।

एवं बहुगते काले मरणं प्रबभूव ह ।
यमदूतैर्महाघोरे लब्ध्वा क्षिप्तः सुदारुणे ॥ ४ ॥

इस प्रकार बहुत सा समय व्यतीत होजाने पर उसकी मृत्यु होगई । और यमराज के दूतों ने उनकी आज्ञा से दारुण नरक में डाल दिया ॥ ४ ॥

षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ।
नरकान्निःसृतो देवि ! वानरस्य गतिं गतः ॥ ५ ॥

हे देवि ! वह साठ हजार वर्ष नरक के दुःखों को भोग कर फिर नरक से निकल वानर की योनि को प्राप्त हुआ ॥ ५ ॥

ततो रासभयोन्यां वै तुरगस्य ततोऽगमत् ।
मानुषत्वं ततो लेभे पूर्वजन्मफलाच्च सः ॥ ६ ॥

उसके बाद गधे की योनि फिर घोड़े की योनि को प्राप्त हुआ पूर्व जन्म के कर्म से अब मनुष्य शरीर प्राप्त किया ॥ ६ ॥

धन-धान्यसमायुक्तो रोगयुक्तोऽप्यपुत्रकः ।
कदाचिद् दैवयोगेन पुत्रो भवति भामिनि ! ॥ ७ ॥

हे भामिनि ! धन-धान्य से युक्त और रोगी पुत्ररहित उसे दैवयोग से पुत्र भी पैदा हुआ ॥ ७ ॥

मरणं तस्य वै शीघ्रं ततः कन्या प्रजायते ।
अस्य शान्तिं शृणुष्वादौ यथापापं निवर्तते ॥ ८ ॥

तो उसका मरण शीघ्र ही हो जाता था और केवल कन्या की ही प्राप्ति हुई, प्रथम उसकी शांति कहता हूँ जिससे पाप की निवृत्ति हो सुनो ॥ ८ ॥

गृहवित्तषडंशं च पुण्यकार्यं च कारयेत् ।
पूर्वजन्मनि देवेशि ! कनिष्टं भ्रातरं निजम् ॥ ९ ॥

हे देवेशि ! अपने घर के द्रव्य में से छठवाँ भाग धर्मार्थ करे, वह पूर्वजन्म में अपने छोटे भाई को ॥ ९ ॥

रात्रौ खड्गेन हतवान् तत्पापाच्च सुतक्षयः ।
गायत्रीमूलमन्त्रेण पञ्चलक्षं वरानने ॥१०॥

रात्रिमें तलवार से मारा था, उस पाप से उसके पुत्र नष्ट हो गये, गायत्री मूल मंत्र से पाँच लक्ष ॥ १० ॥

जपं वै कारयेत्प्रज्ञैर्नित्यं गोविन्दकीर्तनम् ।
होमं वै कारयेत्कान्ते कुण्डे षट्कोणसंयुते ॥११॥

विद्वान् से जप करावे और नित्य गोविन्द का कीर्तन करावे और षट्कोण कुंड बनवाकर उसमें हवन करावे ॥ ११ ॥

पायसेन विशालाक्षि तिलसर्पियुतेन च ।
दशवर्णां ततो दद्याद् ब्राह्मणाय शिवात्मने ॥१२॥

हे विशालाक्षि ! घृत, तिल युक्त खीर इससे हवन करावे और दश वर्णवाली गौवों का दान करे ॥ १२ ॥

भूमिदानं ततो दद्याच्छय्यादानं विशेषतः ।
भ्रातुश्चैवाकृतिं कृत्वा रौप्येणैव वरानने ॥१३॥
पलसप्तप्रमाणेन पूजां कृत्वा प्रसन्नधीः ।
"देवदेव ! महादेव ! चर्मभस्मविभूषण ! ॥१४॥
पूर्वजन्मनि देवेशि भ्रातृनाशः कृतो मया ।
तत्पापं क्षम्यतां देव ! प्रपद्ये शरणं तव ॥१५॥

और भूमि दान दे तो सबसे उत्तम हो और शय्या का दान देना चाहिये । सात पल चाँदी की भाई की मूर्ति बनवावे और प्रसन्न चित्त होकर इन मन्त्रों से उसका पूजन करे और कहे कि पूर्व जन्म कृत अघ का आप नाश करें ॥ १३-१५ ॥

प्रतिमां पूजितां देवि ! मन्त्रेणानेन वै शिवे ।
दद्याद्विप्राय विदुषे श्रोत्रियाय द्विजात्मने ॥१६॥

हे शिवे ! इस उपरोक्त मंत्र से प्रतिमा का पूजन कर वेद पढ़े हुए ब्राह्मण को देवे ॥ १६ ॥

ततो वै भोजयेद्भक्त्या ब्राह्मणान् वेदपारगान् ।
एकाधिकशतं देवि ! पायसैर्मोदकेन च ॥१७॥

इसके बाद भक्तिभाव से वेद के जानने वाले ऐसे सौ ब्राह्मण को खीर, लड्डू आदि से भोजन करावे ॥ १७ ॥

एवं कृत्वा वरारोहे पूर्वपापस्य संक्षयः ।
वन्ध्यात्वं प्रशमं याति पुत्रः सत्यं प्रजायते ॥१८॥

हे वरारोहे ! ऐसा करने से पूर्व के किये समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं, और वंध्यापन की शान्ति होकर निःसंदेह पुत्र की प्राप्ति होती है ॥ १८ ॥

काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं मृतवत्सा सुपुत्रिणी ।
व्याधयः संक्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥१९॥

काकवन्ध्या और मृतवत्सा स्त्री भी उत्तम पुत्र को पाती हैं, सब रोग भी नष्ट हो जाते हैं, इसके करने में कुछ भी विचार नहीं करना चाहिये ॥ १९ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे
उत्तरानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं
नाम चतुरशीतितमोऽध्यायः ॥८४॥

चौरासीयवाँ अध्याय समाप्त ॥ ८४ ॥

अथ पञ्चाशीतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

शंकेश्वरपुरे देव्यवात्सोच्चैको द्विजो वरः ।
म्लेच्छवाणीं वदेन्नित्यं म्लेच्छसेवारतः सदा ॥ १ ॥

शिवजी कहे कि हे देवि ! शंकेश्वरपुर में एक श्रेष्ठ ब्राह्मण निवास करता था । परन्तु वह म्लेच्छ की ही बातें सर्वदा कहा करता और म्लेच्छों की नित्य सेवा किया करता था ॥ १ ॥

अतिष्ठन् म्लेच्छनिकटे म्लेच्छविद्यासु पण्डितः ।
मत्स्यं मांसं च मद्यं च भोजनं चाकरोत्सदा ॥ २ ॥

और म्लेच्छों के निकट में रहने से और संसर्ग से म्लेच्छ विद्या में प्रवीण था मत्स्य-मांस को खाता, और मदिरा पान करता था ॥ २ ॥

एवं सर्वं वयो जातं धनं बहु सुसञ्चितम् ।
तद्धनं भूमिमध्ये हि स्थापितं तु गृहे शुभे ॥ ३ ॥

हे शुभे ! इस तरह सब अवस्था व्यतीत हो जाने पर घर में ही अपने संचित धन को भूमि में गाड़ दिया ॥ ३ ॥

एकस्मिन्समये देवि ! भ्रातुः पुत्रः समागतः ।
रत्नव्यापारकरणे स दक्षश्चतुरस्तथा ॥ ४ ॥

हे देवि ! एक समय उसके भाई का पुत्र आया जो कि रत्नों के व्यापार करने में बहुत ही चतुर था ॥ ४ ॥

ततो गेह स्थितो नित्यं रत्नं बहु सुसञ्चितम् ।
रत्नलोभेन भो देवि ! रात्रौ छुरिकया तदा ॥ ५ ॥

हे देवि ! उस घर में बहुत सा रत्न संचित था, रत्नों के लोभ से रात्रि समय छूरी से उसका ॥ ५ ॥

कृत्वा शिरश्छेदनं च सुप्तं निशि ममार तम् ।
तत्सर्वं भूमिमध्ये तु स्थापितं रत्नसञ्चितम् ॥ ६ ॥

शिर काटकर सोते हुये उसको मार डाला और यावत् संचित धन था उसे भूमि में गाड़ दिया ॥ ६ ॥

भ्रातृजस्य धनं गृह्य व्ययं कृत्वा दिने दिने ।
ततो बहुदिने याते द्विजः पूर्वं मृतः स च ॥ ७ ॥

और भतीजे के धन को लेकर प्रति दिन व्यय करता हुआ वह ब्राह्मण बहुत दिन बीत जाने पर मर गया ॥ ७ ॥

पश्चात्पत्नी मृता तस्य तौ गतौ नरकार्णवे ।
षष्टिवर्षसहस्राणि महाकष्टेन पीडितौ ॥ ८ ॥

बाद को उसकी स्त्री भी मर गई तब वे दोनों स्त्री पुरुष नरकरूपी समुद्र में गये और साठ हजार वर्ष तक महाकष्ट को भोगते रहे ॥

नरकान्निःसृतौ द्वौ तु गजयोनी बभूवतुः ।
पुनः कच्छपयोनी वै गोधायोनी बभूवतुः ॥ ९ ॥

नरक से निकलने के बाद दोनों हाथी की योनि में फिर कछुए की योनि में फिर गोह की योनि में उत्पन्न हुए ॥ ९ ॥

एवं योनित्रयं भुक्त्वा सरय्वा उत्तरे तटे ।
मानुषत्वं ततो लेभे भाग्यवान् साधुसञ्ज्ञितः ॥१०॥

इस तरह इन तीनों योनियों को भोगकर फिर सरयू के उत्तरीय तट पर मनुष्ययोनिमें उत्पन्न हुए और भाग्यवान्साधुनाम करके१०

सुशीलः सुमतिर्दक्षः स्वल्पविद्यायुतो नरः ।
अपुत्रो रोगवान् देवि ! भूपतिर्नरपूजितः ॥११॥

हे देवि ! सुन्दर शरीर सुशील स्वभाव, शुद्ध मति थोड़ी विद्या जानने वाला पुत्र से रहित रोगी, राजा और मनुष्यों का प्रिय हुआ ॥ ११ ॥

पूर्वजन्मनि देवेशि भ्रातृपुत्रवधः कृतः ।
निशायां च पुरा देवि ! तेन दोषेण नो सुतः ॥१२॥

हे देवि ! पूर्व जन्म में उसने रात के समय भाई के पुत्र का वध किया था, उस दोष से पुत्र नहीं हुआ ॥ १२ ॥

म्लेच्छस्य सेवनाद्देवि ! म्लेच्छस्याऽशुचिभाषणात् ।
तेन पापेन भो देवि ! शरीरे रोगसम्भवः ॥१३॥

म्लेच्छ (चाण्डाल) की सेवा करने और म्लेच्छों से अश्लील संभाषण करने के कारण शरीर में रोग ॥ १३ ॥

यत्तु दानं कृतं पूर्वं दत्ता शय्या सुरेश्वरि ।
तत्फलेन महादेवि ! धनाढ्यत्वमजायत ॥१४॥

हे सुरेश्वरि ! वह पूर्वजन्म में जो शय्या आदि का दान दिया था उस पुण्य के प्रभाव से धनाढ्य हुआ ॥ १४ ॥

अनाचारः कृतः पूर्वं पुत्रदारयुतेन च ।
तेन पापेन भो देवि ! नरः कन्याप्रजो भवेत् ॥१५॥

और पुत्र स्त्री सहित पूर्व में जो अनाचार किया उस दोष से कन्या ही उत्पन्न हुई ॥ १५ ॥

अथ शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि ! सुशोभने ।
गायत्रीमूलमन्त्रेण पञ्चलक्षं वरानने ! ॥१६॥

हे देवि ! अब उसकी शान्ति कहता हूँ, तुम सुनो। गायत्री मूल मंत्र से पांच लाख ॥ १६ ॥

जपञ्च कारयेद्देवि ! षडंशं दानमाचरेत् ।
होमञ्च कारयेत्कान्ते कुण्डे चैव सुसंस्कृते ॥१७॥

जप करावे और अपने घर के धन का छठाँ भाग द्रव्य दान करे और शुद्ध कुण्ड बनवाकर हवन करावे ॥ १७ ॥

दशांशं तर्पणं देवि ! मार्जनं तद्दशांशतः ।
भ्रातृपुत्रस्य प्रतिमां कारयेदद्रिनन्दिनि ॥१८॥

हे देवि ! उसके दशांश तर्पण और बादको भतीजे की एक प्रतिमा बनवावे ॥ १८ ॥

पलं दशसुवर्णस्य विधिवत्पूजयेत्ततः ।
मन्त्रेणानेन देवेशि गन्धधूपादिभिस्तथा ॥१९॥

दश पल (५० तोले) सुवर्ण की प्रतिमा बनवाकर विधिवत् गंध, धूपादि से इस मंत्र द्वारा उसका पूजन करे ॥ १९ ॥

गणाधिप ! सुराध्यक्ष ! सर्वसिद्धिप्रदायक ! ।
मम पूर्वकृतं पापं तत्क्षमस्व दयानिधे ! ॥२०॥
रौप्यपात्रे स्थितां तां तु प्रतिमां प्रार्थयेत्ततः ।
अज्ञानाद्वा प्रमादाद्वा पापं मम पुरा कृतम् ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव ! प्रपद्ये शरणं तव ॥२१॥

और चाँदी के बर्तन में प्रतिमा को स्थापित कर प्रार्थना करे और कहे कि मैंने अज्ञान वश अहंकार से पूर्व जन्म में जो पाप

किया है, हे देव! उसको आप क्षमा करें, आपकी शरण में मैं आया हूँ ॥ २०-२१ ॥

ॐगणपतये नमः। ॐलक्ष्म्यै नमः। ॐसूर्याय नमः। ॐशिवाय नमः। ॐविश्वयोनये नमः। ॐगरुडाय नमः। ॐनंदिकेश्वराय नमः

एभिर्मन्त्रैस्तु सर्वाणि वस्तूनि दापयेत्ततः।
कलशं पूजयेद्देवि! गणाधिपस्वरूपिणम् ॥२२॥

हे देवि! इन सातों मन्त्रों से सब वस्तुयें निवेदन कर फिर गणाधिपरूप कलश का पूजन करे ॥ २२ ॥

गन्धपुष्पैश्च ताम्बूलैर्वस्त्रैर्नानाविधैरपि।
प्रतिमां पूजितां देवि! ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ॥२३॥

और गन्ध, पुष्प, पान तथा सुपारी अनेक प्रकार के वस्त्रादि से पूजन की हुई उस मूर्ति को ब्राह्मण को दे देवे ॥ २३ ॥

दशवर्णास्ततो दद्याद्वृषमेकं वरानने!।
पञ्चपात्रं ततो दद्याद् ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः ॥२४॥

इसके बाद दश वर्णवाली गौवें एक बैल के सहित और पांच पात्र ब्राह्मण को दे फिर ब्राह्मण भोजन करावे ॥ २४ ॥

रविवारेण संयुक्तसप्तम्यां विधिपूर्वकम्।
उपोषणं नियमतः पत्न्या सह वरानने! ॥२५॥

हे वरानने! रविवार से युक्त सप्तमी के दिन विधिपूर्वक नियम से स्त्री के सहित व्रत करे ॥ २५ ॥

सप्तवत्सरपर्यन्तं प्रकुर्याद्वै सुरेश्वरि।
ततस्तूद्यापनं कुर्याद्यथाशक्ति सदाशिवे ॥२६॥

और इस नियम को सात वर्ष तक करके फिर उसका उद्यापन करे और शक्ति के अनुसार ब्राह्मण को दक्षिणा दे ॥ २६ ॥

दद्याद्विप्राय विदुषे श्रोत्रियाय तपस्विने ।
कूष्माण्डं नारिकेलं च पञ्चरत्नसमन्वितम् ॥२७॥

विद्वान् और तपस्वी उत्तम ब्राह्मण को कुष्माण्ड (सफेद कुम्भड़ा) और नारियल में पञ्चरत्न भरकर ॥ २७ ॥

गङ्गामध्ये प्रदातव्यं पूर्व पापविशुद्धये ।
एवंकृते वरारोहे ! शीघ्रं पुत्रः प्रजायते ॥२८॥

पूर्व कृत पाप की शुद्धि के लिये गंगा के मध्य में दान देवे, इस प्रकार के विधानको करनेसे शीघ्र ही पुत्रकी प्राप्ति होती है॥२८॥

सर्वे रोगाः क्षयं यान्ति नीहारा भास्कराद्यथा ॥२९॥

और सब रोग भी नष्ट हो जाते हैं, जैसे सूर्य के तेज से कुहिरा नष्ट हो जाता है ॥ २९ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे उत्तराषाढनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामपञ्चाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८५ ॥

पचासीयवाँ अध्याय समाप्त ॥ ८५ ॥

अथ षडशीतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

मध्यदेशे महादेवि ! ब्राह्मणो वेदपारगः ।
जयदेवाभिधो विप्रो विख्यातश्चातिशीलवान् ॥ १ ॥

शिवजी बोले—हे महादेवि ! मध्यदेश में जयदेव नामक वेदों को भली प्रकार जानने वाला अत्यन्त सुशील स्वभाव का एक ब्राह्मण रहता था ॥ १ ॥

तस्य भार्या शीलवती सुशीला शीलरूपिणी ।
तस्याः पुत्रत्रयं जातं गुणज्ञं वेदपारगम् ॥ २ ॥

उसकी सुशीला नाम की स्त्री शीलस्वभावाली सहज ही

गुणवती थी। उसे तीन पुत्र उत्पन्न हुए, वे भी गुणी और वेदों को जानने वाले हुए॥ २॥

पुत्राः सर्वे गुणज्ञाश्च वेदवेदाङ्गपारगाः।
ज्येष्ठपुत्रस्य चोद्वाहे स्वसा तस्य समागता॥ ३॥

सब पुत्र गुणज्ञ वेद-वेदांगों में पारंगत अर्थात् उसमें प्रवीण थे। एक समय ज्येष्ठ पुत्रके विवाहमें उस ब्राह्मणकी वहिन आई॥३॥

भगिन्याश्चादरं कृत्वा बहुमानेन पार्वति।
विवाहे च समाप्ते तु ज्ञातयः स्वेषु वेश्मसु॥ ४॥

हे पार्वति! उस (ब्राह्मण) ने बहुत सम्मान के साथ अपने बहिन का आदर किया, और विवाह समाप्तहो जाने के बाद उसके सम्बन्धके भाई बन्धु सब अपने-अपने घरों को चले गये॥ ४॥

गताः सर्वे विशालाद्ययाचयद्भगिनी च सा।
ताटङ्कं स्वर्णरत्नाढ्यं भ्रातृपत्नी प्रकोपिता॥ ५॥

जब उस ब्राह्मण की बहिन ने अपने भाई से सुवर्ण के रत्नों से जड़ा हुआ ताटंक (कर्णफूल) आभूषण को माँगा तब उसकी स्त्री ने क्रोध से कहा कि नहीं है॥ ५॥

श्रुत्वेर्ष्यया सवत्सा तु तदाऽऽयाता स्ववेश्मनि।
स्त्रीस्वभावाच्च देवेशि! मृता सा भगिनी गृहे॥ ६॥

हे देवेशि! उसके क्रोध युक्त ऐसे वचन को सुनकर पुत्र सहित अपने घर को चली गई, और स्त्री स्वभाव भी वैसाही होता है वह अपने घर में आकर मर गई॥ ६॥

तदुद्देशेन देवेशि! शरीरं निशि साऽत्यजत्।
ततो बहुदिने याते तस्य मृत्युरभूत्तदा॥ ७॥

उस क्रोध से उसने रात्रिके समय शरीर त्याग कर दिया। औद बहुतदिनव्यतीत हो जाने पर उस ब्राह्मणकी भी मृत्यु होगई।७।

पत्नी तस्य सती जाता सत्यलोकमभूत्तदा।
वर्षकोटित्रयं देवि! सत्यलोकेऽवसत्पुनः॥ ८॥

और उसके साथही उसकी स्त्री सती हो गई फिर उसे सत्य लोक प्राप्त हुआ। और उसने तीन करोड़ वर्ष तक सत्यलोक में वास कर ॥ ८ ॥

मर्त्यलोके मनुष्यत्वं लब्धं पुण्यक्षये सति ।
धन-धान्यसमायुक्तो विद्यावाञ्छास्त्रपारगः ॥ ९ ॥

जब पुण्य नष्ट हो गया तब मृत्युलोक में आकर मनुष्य शरीर धारणकर धनधान्ययुक्त होकर शास्त्रोंको जाननेवाला हुआ।९

कृतं तेन पुन पापं भगिन्या दारकारणात् ।
पुत्रो न जायते देवि ! कन्योत्पन्ना विनश्यति ॥१०॥

वह स्त्रीसे विवश होकर बहिनका पाप किया इस कारण उसे पुत्र नहीं हुआ और कन्या होकर भी मर जाया करती थीं ॥ १० ॥

शरीरे सततं दुःखं मध्ये तस्य प्रजायते ।
काकवन्ध्या भवेद्भार्या मृतवत्सा सुदुःखिता ॥११॥

उसके शरीरमें सर्वदा दुःख रहता था और उसकी स्त्री काकवन्ध्या अर्थात् सन्तान न जन्मानेवाली या सन्तानहोकरमर जातीहो॥११॥

अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि तत्सर्वं शृणु पार्वति ।
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥१२॥

हे पार्वति ! अब इसकी शान्ति कहता हूँ, वह सब सुनों अपने गृहमें जो धन हो उसके छठें भागसे पुण्य कार्य करे ॥ १२ ॥

वापी-कूप-तडागानां जीर्णोद्धारं प्रयत्नतः ।
वाटिकां मार्गमध्ये तु सहितां शीतवारिणा ॥१३॥

बावली, कुआँ, तालाब इनका जीर्णोद्धार कराना चाहिये और मार्गमें कुआँ बनवाकर बगीचा लगा देना चाहिये ॥ १३ ॥

गायत्री-जातवेदाभ्यां जपं वै कारयेत्ततः ।
लक्षद्वयं विशालाद्वि हवनं तद्दशांशतः ॥१४॥

तर्पणं मार्जनं तद्वद्गोदानं विधिवत्ततः ।
एवं कृते वरारोहे तस्य पुत्रः प्रजायते ॥१५॥

गायत्री और जातवेद से इस मंत्रका दो लाख जप कराकर उसके दशांश हवन तर्पण और मार्जन तथा विधिपूर्वक गोदान करे इस विधानके करनेसे पुत्र उत्पन्न होता है॥१४-१५॥

गुणज्ञः सर्ववस्तूनां साधूनां सम्मतस्तथा ।
स्वर्णदानं विशालाक्षि पलपञ्चमितं तथा ॥१६॥

और वह संपूर्ण वस्तुओंके गुणोंको जानने वाला तथा सज्जनोंके समान होता है पाँच पल सोना ॥ १६ ॥

ब्राह्मणाय ततो दद्यात् पूजयेद्युवतिं ततः ।
वस्त्राऽलङ्कारसिन्दूरैर्गन्धाद्यैः सुमनोहरैः ॥१७॥

ब्राह्मणों को दान देवे और वस्त्र, आभूषण, सिंदूर, गंधादि मनोहर वस्तुओंसे युवती स्त्रीका पूजन करे ॥ १७ ॥

ताटङ्कैर्मुद्रिकाभिश्च गन्ध-माल्यैस्तथैव च ।
सर्वपापं क्षयं याति व्याधिनाशो भवेद्ध्रुवम् ॥१८॥

ताटङ्क नामक आभूषणोंसे, मुद्रिकाओंसे, और गंधमालादिसे पूजन करे तो सब पापोंका नाश हो और रोग भी नष्ट हो जायँ॥१८॥

ब्राह्मणीं पार्वतीरूपां ब्राह्मणं शिवरूपिणम् ।
भोजयेद्विविधैश्चान्नैर्मोदकैः शतसंख्यकैः ॥१९॥

ब्राह्मणीको पार्वतीका रूप जानकर और ब्राह्मणको शिव रूप समझ उन्हें लड्डुओंसे तथा नाना भाँतिकेभोज्य पदार्थोंसे तृप्तकरे१९

काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं मृतवत्सा च पुत्रिणी ।
कन्यकाजननी या तु पुत्रवत्यपि जायते ॥२०॥

इस प्रकारके विधि विधानसे काकवन्ध्या और मृतवत्सा में दोनों पुत्रवती होती हैं और जिसे केवल कन्या ही होती हो उसे भी पुत्र होता है ॥ २० ॥

एवं न जायते चेत्तु सप्तजन्मस्वपुत्रकः ॥२१॥

यदि ऐसा न करे तो सात जन्म तक वह अपुत्र ही रहता है, इसमें संदेह नहीं ॥ २१ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे उत्तराषाढनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम षडशीतितमोऽध्यायः ॥८६॥

छीयासीयवाँ अध्याय समाप्त ॥ ८६ ॥

अथ सप्ताशीतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

गुर्जरे नगरे देवि ! न्यवसज्ज्ञानवान् द्विजः ।
बलभद्रः समाख्यातो वेदानां पाठकः सुधीः ॥ १ ॥

शिवजी बोले कि देवि ! गुर्जर नामक नगरमें एक ज्ञानवान् वेदपाठी बलभद्र नामका ब्राह्मण निवास करता था ॥ १ ॥

ऋग्वेदं च यजुर्वेदं सामवेदमथर्वणम् ।
पठनं चैव कुरुते चतुर्वेदी द्विजोत्तमः ॥ २ ॥

ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद इन चारोंका नित्य पाठ किया करता था, इस प्रकार वह चारों वेदों का जाननेवाला चतुर्वेदी श्रेष्ठ ब्राह्मण था ॥ २ ॥

एकस्मिन् दिवसे देवि ! देशे कश्चिन्मृतः खलु ।
भोजनं तेन संस्कारं विना तत्र कृतं प्रिये ॥ ३ ॥

हे प्रिये ! एक दिन उस देशमें कोई आदमी मर गया और विना संस्कार किये ही उस ब्राह्मणने उसके यहाँ भोजन कर लिया ॥ ३

म्लेच्छद्रव्यं गृहीतं च भुक्तं पुत्रयुतेन च ।
पत्न्या सह वरारोहे ! ततो वृद्धवयो गतः ॥ ४ ॥

और म्लेच्छके धनको लेकर स्त्री पुत्रादिके साथ भोगते हुए वृद्धावस्था प्राप्त हुई ॥ ४ ॥

मरणं तस्य वै जातं शङ्केश्वरपुरे यदा ।
यमाज्ञया तदा देवि ! यमदूतैरितस्ततः ॥ ५ ॥
नरके पातितं पश्चान्मर्त्यलोके ततोऽगमत् ।
कुक्कुटत्वं विशालाक्षि ! काकं पारावतं ततः ॥ ६ ॥

जब शंकेश्वरपुरीमें उसकी मृत्यु हो गई तब यमराजकी आज्ञासे उसे उनके दूतोंने नरकोंमें इधर-उधर घुमाते-फिराते लेजाकर छोड़ दिया वहाँका दुःख भोगकर मुर्गा, कौवा, कबूतर इन योनियोंमें क्रमशः शरीर धारण कर मृत्युलोकमें उत्पन्न हुआ ॥ ५-६ ॥

मानुषत्वं पुनर्लेभे शुभे देवि ! कुले महत् ।
स पण्डितो महाविद्वान् जातिधर्मविचक्षणः ॥ ७ ॥

हे देवि ! फिर मनुष्य शरीरसे वह बड़े उत्तमकुलमें महाविद्वान् पण्डित और अपने जातीय धर्मको जाननेवाला उत्पन्न हुआ ॥७॥

पूर्वजन्मनि देवेशि ! म्लेच्छान्नं भोजनं कृतम् ।
तेन पापेन भो देवि पुत्रः कन्या न जायते ॥ ८ ॥

हे देवेशि ! वह पूर्व जन्ममें म्लेच्छका अन्न खाया था उस पापसे उसे सन्तान नहीं हुई ॥ ८ ॥

प्रेतान्नं भोजनं कृत्वा संस्कारो न कृतः पुरा ।
तेन पापेन भो देवि ! शरीरे रोगसम्भवः ॥ ९ ॥

और पूर्वमें उसने मृतकर्म न होनेके पहले ही प्रेतका अन्न खाकर उसकी शुद्धिके लिए संस्कार नहीं किया उस पापसे शरीर से रोगी हो गया ॥ ९ ॥

अस्य शान्तिं शृणुष्वादौ पूर्वपापप्रणाशिनीम् ।
गृहवित्ताष्टमं भागं ब्राह्मणाय प्रकल्पयेत् ॥ १० ॥

प्रथम इस प्रकारकेकियें हुए पापकोनाश करनेवाली शान्तिको सुनो, अपने गृहके धनका आठवाँभाग द्रव्य ब्राह्मणकोदानदे ॥१०

गायत्रीमूलमन्त्रेण दशायुतजपं ततः ।
हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं तथा ॥११॥

और गायत्री मूल मंत्र का एक लाख जप कराकर उसके दशांश हवन, तर्पण और मार्जन करावे ॥ ११ ॥

दशवर्णा ततो दद्याच्छय्यादानं विशेषतः ।
कूष्माण्डं नारिकेलं च पञ्चरत्नसमन्वितम् ॥१२॥

इसके बाद दश प्रकारकी गौओंका दान और शय्यादान विधिवत् देकर फिर सफेद कुम्हड़ा या नारियल में पञ्चरत्न रखकर ॥१२॥

गङ्गामध्ये प्रदातव्यं पूर्वपापप्रणाशनम् ।
एवं कृते वरारोहे ! शीघ्रं पुत्रः प्रजायते ॥१३॥

इन सब वस्तुओंका गङ्गाके मध्यमें दान करे तो पूर्व जन्मके सब पापोंका नाश हो जाता है और शीघ्रही पुत्रकी प्राप्ति हो ॥१३॥

व्याधयः संक्षयं यान्ति काकवन्ध्या लभेत्सुतम्॥१४॥

और सम्पूर्ण व्याधियाँ नष्ट हो जाती हैं और काकवन्ध्या स्त्री भी पुत्रवती होती है ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे उत्तराषाढनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम सप्ताशीतितमोऽध्यायः ॥ ८७ ॥

सतासीयवाँ अध्याय समाप्त ॥ ८७ ॥

अथाष्टाशीतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

यवनस्य महादेशे मारुते नगदे शुभे ।
गौतमो नाम विख्यातो ब्राह्मणो वेदपारगः ॥ १ ॥

शिवजी बोले कि—यवनके महान् देशमें और सुन्दर मारुत नामक नगरमें गौतम नामसे प्रसिद्ध वेदोंको जाननेवाला एक ब्राह्मण रहता था ॥ १ ॥

तस्य भार्या विशालाक्षि मालिनी मातृपालिनी।
धनञ्च बहु संगृह्य म्लेच्छसेवारतो हि सः ॥ २ ॥

मालिनी नामवाली उसकी स्त्री माता सेवा करनेवाली थी और वह ब्राह्मण अपने घरके धनसे म्लेच्छोंकी सेवा किया करता था ॥२॥

तस्य मित्रो द्विजः कश्चित् तपस्वी सत्यवाक्छुचिः।
आगतस्तस्य निकटे प्रेम्णा तत्र तपोऽकरोत् ॥३॥

एक समय उसका कोई मित्र तपस्वी ब्राह्मण सत्य भाषण करनेवाला और पवित्र उसके पास आकर वहाँ ही प्रेमसे तपस्या करने लगा ॥ ३ ॥

अब्दे चैके ततो जाते पुनःकाश्यां गतोऽपि सः।
स्वर्णरत्नं महादेवि गौतमाय समर्पितम् ॥ ४ ॥

हे महादेवि! एक वर्षके बाद फिर वह अपना सुवर्ण रत्नादि को गौतम ब्राह्मणके पास रख काशी चला गया ॥ ४ ॥

रक्षार्थं तेन द्रव्यं च गृहीतं गौतमेन च।
वाराणस्यां ततो गत्वा तपस्वी प्राणमत्यजत् ॥ ५ ॥

गौतमने रक्षा के लिये वह द्रव्य ग्रहण किया, फिर वह तपस्वी काशीमें जाकर अपना शरीर त्याग दिया ॥ ५ ॥

गौतमेन तु स्वद्रव्यं स्थापितं भूमिमध्यके।
तद्द्रव्यं ब्राह्मणस्यैव पुत्रदारयुतेन च ॥ ६ ॥

गौतमने अपना सब धन तो भूमि में गाड़ दिया और उस ब्राह्मणके धनको स्त्री पुत्रादि सहित ॥ ६ ॥

भक्षितं तेन विक्रीय बहुवर्षे गते शिवे।
गौतमस्य ततो मृत्युर्वृद्धे जाते वरानने ॥ ७ ॥

हे शिवे ! उस स्वर्णरत्नको बेचकर उपभोग किया फिर बहुत सा समय बीत जानेपर उस वृद्ध गौतमकी मृत्यु हो गई ॥ ७ ॥

गन्धर्वस्य ततो लोकं विंशतिर्वै सहस्रकम् ।
तेन भुक्तं विशालाक्षि गन्धर्वैः सह किन्नरैः ॥ ८ ॥

और बीस हजार वर्ष गन्धर्व-लोकमें रहकर गन्धर्व व किन्नरों के साथ वहाँ पर भोग करता रहा ॥ ८ ॥

ततः पुण्यक्षये जाते हंसयोनिं ततोऽमथत् ।
मृगयोनिं ततो भुक्त्वा मानुषत्वं ततोऽलभत् ॥ ९ ॥

फिर पुण्यक्षीण होने पर क्रमशः हंस, मृग इन योनियों को भोगता हुआ फिर मनुष्ययोनिको प्राप्त हुआ ॥ ९ ॥

स भाग्यवान् महाधीरः पुण्याचारे सदा मतिः ।
पूर्वजन्मनि देवेशि ! मित्रद्रव्यं विनाशितम् ॥१०॥

वह बड़ा भाग्यवन् महाधीर पुण्यकर्म में सदा स्थिर बुद्धि रखनेवाला हुआ, हे देवेशि ! उसने पूर्वजन्ममें अपने मित्रके धनका नाश किया था ॥ १० ॥

अदत्तं यद्विशालाक्षि तेन पापेन तत्प्रिया ।
वन्ध्या भवति वै नारी काकवन्ध्या च जायते ॥११॥

हे विशालाक्षि ! उसने मित्र का धन लेकर नहीं दिया उस पापसे उसकी स्त्री काकवन्ध्या हो गई ॥ ११ ॥

रोगयुक्तोऽभवद्देहो ज्वराश्च विविधास्तथा ।
अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि सुशोभने ॥१२॥

हे देवि ! शरीरमें अनेक प्रकारके रोग और ज्वर हो गया अब इसकी शान्ति कहता हूँ सुनो ॥ १२ ॥

गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ।
वापी-कूप-तडागानि जीर्णोद्धारं च कारयेत् ॥१३॥

अपने घरके धनका छठवाँ भाग द्रव्य से पुण्य कार्य करावे

और बावली, कुआँ, तालाब इनका सुधार करावे ॥ १३ ॥

गायत्रीमूलमन्त्रेण दशायुतजपं शिवे ! ।
हवनं तद्दशांशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥१४॥

हे शिवे ! गायत्री मूल मन्त्रसे एक लक्ष जप कराकर उसके दशांश प्रमाणसे हवन और तर्पणादि करावे ॥ १४ ॥

गामेकां तरुणीं शुभ्रां कांस्यदोहां सवत्सकाम् ।
सतीं स-वस्त्रां विप्राय दद्याद्वेदविदे ततः ॥१५॥

एक युवा गौ सुन्दर सफेद रंगकी सवत्सा और कांसेका दूध दूहनेका पात्र पीठ वस्त्र के सहित वेदज्ञ ब्राह्मणको दान देवे ॥१५॥

ब्राह्मणान्भोजयेद्दत्त्वा यथाशक्त्या तु दक्षिणाम् ।
ज्ञातिभिः सह भुञ्जीत ततो नृत्यं तु कारयेत् ॥१६॥

और दान देनेके बाद ब्राह्मणोंको भोजन कराकर अपनी शक्तिके अनुसार दक्षिणा दे और अपने भाइयोंके साथ भोजन करे, पीछे से नृत्य (कीर्तन) करावे ॥ १६ ॥

पुराणश्रवणं देवि ! चण्डिकाचरणार्चनम् ।
अन्नदानं च भो देवि ! घृतदानं विशेषतः ॥१७॥

हे देवि ! पुराणों का श्रवण कर देवी का पूजन करे अन्न और घृत दान देनेका विशेष महत्व है ॥ १७ ॥

एवंकृते न सन्देहो वंशवृद्धिर्भविष्यति ।
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति सुखानि विविधानि च ॥१८॥

ऐसा करनेसे वंश वृद्धि होती है, इसमें सन्देह नहीं और सब रोग भी नष्ट हो जाते हैं तथा अनेक प्रकार के सुखप्राप्त होते हैं ॥१८॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे
श्रवणनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं
नामाऽष्टाशीतितमोऽध्यायः ॥८८॥

अठासीयवाँ अध्याय समाप्त ॥ ८८ ॥

अथैकोननवतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

गान्धारदेशे वै शुभ्रे गान्धारस्य पुरे शुभे ।
वसन्ति तत्र बहवो जनाः पुण्योपजीविनः ॥ १ ॥

शिवजी बोले कि—गांधार देश में एक सुन्दर गांधार नामक पुरमें पुण्य ही जिनका जीवन है ऐसे बहुतसे लोग वहाँ पर वास करते थे ॥ १ ॥

तन्मध्ये ब्राह्मणोऽप्येको लक्ष्मीवान् गुणवर्जितः।
यवनानां महन्मित्रं सार्द्धं म्लेच्छेन तिष्ठति ॥ २ ॥

उनके बीच एक धनवान् ब्राह्मण गुणहीन यवनोंका अत्यन्त मित्र और सर्वदा म्लेच्छों ही के साथ रहा करता था ॥ २ ॥

ऊर्णादिकं वरारोहे विक्रयं कुरुते सदा ।
म्लेच्छान्नं भुज्यते नित्यं म्लेच्छभार्याविहारकृत् ॥३॥

हे वरारोहे ! वह सर्वदा ऊन बेचता था और नित्य म्लेच्छोंके अन्नका भोजन किया करता था, तथा उन्हीं के स्त्रियों के साथ विहार करनेवाला था ॥ ३ ॥

एवं बहु वयो जातं ततो वै मरणं खलु ।
यमदूतर्महाघोरे नरकेऽत्यन्तदारुणे ॥ ४ ॥

इस प्रकार बहुतसा समय बीत जाने पर वृद्धावस्थामें उसकी मृत्यु हो गई यमराज के दूतों ने उसे महाघोर दारुण नरक में डाल दिया ॥ ४ ॥

निक्षिप्तं तेन वै देवि षष्टिवर्षसहस्रकम् ।
भुक्तं सुदुःसहं कर्म विविधं नारकं फलम् ॥ ५ ॥

हे देवि ! और उसे उस नरकमें साठ हजारवर्ष तक रक्खा तब वह अपनादुःसह कर्म और नानाप्रकारके नरकोंके फलोंको भोगा ।५

नरकान्निःसृतो देवि ! वृकयोनिरभूत्पुरा ।
रासभस्य ततो योनिसृक्षत्वेऽभूत्पुनः प्रिये ॥ ६ ॥

हे प्रिये ! नरकसे निकलकर क्रमशः भेड़ियेकी योनिमें बाद गधेकी योनिमें फिर ऋक्ष (भालू) की योनि में जन्म लिया ॥६॥

मानुषत्वं पुनर्लेभे मध्यदेशे सुरेश्वरि ।
पूर्वजन्मनि म्लेच्छान्नं भुक्तं पुत्रेण वै शिवे ॥ ७ ॥

उसके बाद फिर मध्यदेशमें मनुष्य शरीर धारण किया है, वह पूर्वजन्ममें पुत्र सहित म्लेच्छोंका अन्न खाया था ॥ ७ ॥

अतो वंशस्य विच्छेदो व्याधीनां चोद्भवस्तथा ।
अस्य दोषस्य वै शान्तिं शृणु मे परमेश्वरि ॥ ८ ॥

इसलिये उसके वंशका नाश और अनेक प्रकार की व्याधियाँ उत्पन्न हो गईं । इस दोष की शांति अब तुम मुझसे सुनो ॥८॥

गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं वरानने ! ।
हवनं तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा ॥ ९ ॥

हे वरानने ! गायत्री मंत्र से एक लक्ष जप कराकर उसके दशांश हवन, तर्पण और मार्ज करावे ॥ ९ ॥

सवृषं पञ्च गोदानं वस्त्रदानं विशेषतः ।
सहस्रघटदानं च गोदानं च सुरेश्वरि ॥१०॥

हे सुरेश्वरि ! बैल के सहित पाँच गौवोंका भी दान करे और विशेषता यह कि वस्त्रोंका दान, हजार घटोंका दान तथा गोदान ये सब यथाविधि करावे ॥ १० ॥

एवं कृते न सन्देहो वंशवृद्धिर्भविष्यति ।
रोगा विनाशमायान्ति नात्र कार्या विचारणा॥११॥

ऐसा करनेसे वंशकी वृद्धि होगी इसमें संदेह नहीं और सब रोग भी नष्ट हो जाते हैं । इस विधानको करनेमें विचार न करे ॥११॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसम्वादे श्रवणनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकोननवतितमोऽध्यायः ॥८९॥

नवासीयवाँ अध्याय समाप्त ॥ ८९ ॥

अथ नवतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

काश्मीरनगरे देवि ! ब्राह्मणोऽध्यवसत्पुरा ।
खण्डशर्मेति विख्यातो गङ्गाख्या स्त्री तु कर्कशा ॥ १ ॥

शिवजीने कहा—हे देवि ! काश्मीर नगरमें पहिले एक ब्राह्मण निवास करता था वह खण्डशर्मा नामसे प्रसिद्ध था तथा उसकी स्त्री गंगा नामकी बड़ी कर्कशा थी ॥ १ ॥

पतिवाक्यं न साऽकार्षीद्विक्रयं कुरुते सदा ।
घृतं तलं च देवेशि ! दधि तक्रं पुनर्गुडम् ॥ २ ॥

हे देवेशि ! वह पतिके वचनको नहीं मानती थी, सर्वदा घी, तेल, दही, तक्र (मट्ठा) और गुड़ तकको भी बेच दिया करती थी ॥२॥

अश्वं च वृषभं चैव चामरं धातुवस्तु च ।
प्रत्यहं विक्रयं कर्त्री व्ययकर्त्री दिने दिने ॥ ३ ॥

और घोड़े, वृषभ, (बैल) चमर, धातुकी वस्तुयें उन सबको भी नित्य प्रति बेचकर स्वतः व्यय किया करती थी ॥ ३ ॥

एवं सर्वं वयो जातं वृद्धे सति वरानने ! ।
मरणं तस्य वै जातं ब्राह्मणस्य सदा शिवे ॥ ४ ॥

हे शिवे ! इस तरह सब अवस्था बीत गई, जब वह वृद्ध हो गया तब उस ब्राह्मणकी मृत्यु हो गई ॥ ४ ॥

यमराजाज्ञया दूतैर्नरके कर्दमे तथा ।
निक्षिप्तः षष्टिसाहस्रं भुक्त्वा वै यातनां तथा ॥ ५ ॥

नरकान्निःसृतो देवि! वृकयोनिस्ततोऽभवत् ।
रासभस्य पुनर्योनिर्मेषयोनिस्ततोऽभवत् ॥ ६ ॥

और यमराजकी आज्ञासे उनके दूतोंने उसे लेजाकर कर्दम नरकमें डाल दिया और साठ हजार वर्ष तक वहां की पीड़ायें भोग करके नरकसे जब निकला तब भेड़ियेकी योनिको प्राप्त किया फिर गधेकी योनि मिली उसके बाद भेड़ की योनिको प्राप्त हुआ ॥ ५-६ ॥

मानुषत्वं पुनर्लेभे मध्यदेशे वरानने ! ।
धन-धान्यसमायुक्तः पुत्रकन्याविवर्जितः ॥ ७ ॥

हे वरानने ! फिर मध्यदेशमें मनुष्य शरीरसे धनधान्य सहित और सन्तान रहित उत्पन्न हुआ ॥ ७ ॥

पुनर्विवाहिता सा तु पूर्वजन्मफलाच्छुभे ।
शरीरे सततं रोगो वायोः सञ्जायते शिवे ! ॥ ८ ॥

हे शिवे ! पूर्वजन्मके फलसे फिर वही स्त्री उससे विवाही गई, और उसके शरीरमें हमेशा वायुके रोग होते रहते थे ॥ ८ ॥

ब्राह्मणस्य स्वयं धर्मं यतस्त्यक्तं पुरा शुभे ।
अतः पुत्रविहीनेयं मृतवत्सात्वमाप्नुयात् ॥ ९ ॥

हे शुभे ! जो पूर्वजन्ममेंउसने ब्राह्मण धर्मका परित्यागकरदिया था इसलिये वह स्त्री पुत्रहीन होकर मृतवत्साको प्राप्त हुई ॥ ९ ॥

अस्य शान्तिमहं वक्ष्ये शृणु देवि ! सुशोभने ।
गृहवित्तषडंशं च ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥१०॥

अब इसकी शांति हम कहते हैं तुम सुनो । अपने घरके धनका छठां भाग ब्राह्मणको दान कर दे ॥ १० ॥

गायत्रीं चायुतं जप्त्वा मूलमन्त्रं शिवस्य तु ।
षडक्षरं सप्रणवं लक्षमेकं वरानने ! ॥११॥

हे वरानने ! दश हजार गायत्री मंत्र का जप और शिवजी के छः अक्षरों के मन्त्र से एक लक्ष जप कराकर ॥ ११ ॥

हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं तथा ।
ब्राह्मणान् भोजयेद्भक्त्या हविषा पायसेन च ॥१२॥

उसके दशांश हवन, तर्पण, मार्जन करावे, इसके बाद श्रद्धासे खीर और घी आदिसे भोजन तैयार कराकर ॥ १२ ॥

पञ्चाशत्संख्यया देवि ! यथाशक्त्या तु दक्षिणाम् ।
प्रयागे माघमासे तु स्नानं भार्यासमन्वितः ॥१३॥

हे देवि ! पचास ब्राह्मणोंको भोजन करावे और शक्तिके अनुसार दक्षिणा दे । फिर माघ महीनेमें स्त्रीसहित प्रयागमें नियमसे स्नान करे ॥ १३ ॥

कूष्माण्डं नारिकेलं च पञ्चरत्नसमन्वितम् ।
गङ्गामध्ये प्रदातव्यं विधिपूर्वं वरानने ! ॥१४॥

और कुम्हड़ा या नारियल पंचरत्न भरकर विधिवत् गङ्गाके मध्यमें दान करे ॥ १४ ॥

एवं कृते न सन्देहो वंशवृद्धिर्भवेद्ध्रुवम् ।
रोगा सर्वे क्षयं यान्ति बन्ध्या भवति पुत्रिणी ॥१५॥

ऐसा करनेसे अवश्य वंशकी वृद्धि होती है इसमें संदेह नहीं और संपूर्ण रोग भी नष्ट हो जाते हैं तथा वन्ध्या स्त्री भी पुत्रवती होती है ॥ १५ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे
श्रवणनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं
नाम नवतितमोऽध्यायः ॥ ९० ॥

नब्बेयवाँ अध्याय समाप्त ॥ ९० ॥

अथैकनवतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अटकस्य प्रतीच्यां तु यादवं नाम वै पुरम् ।
वसन्ति बहवो देवि ! जनाः कर्मविचक्षणाः ॥ १ ॥

शिवजी बोले कि हे देवि अटक देशके पश्चिम दिशामें यादव नामका एक नगर था वहाँ पर बहुतसे मनुष्य अपने-अपने कर्मों में निपुण निवास करते थे ॥ १ ॥

तन्मध्ये ब्राह्मणोऽप्येकः सिद्धलाल इति श्रुतः ।
तस्य भार्या विशालाक्षि देवीनाम्नी सदा शिवे॥ २ ॥

हे शिवे ! उनके मध्यमें एक सिद्धलाल नामक ब्राह्मण रहता था और उसकी स्त्री देवी नामकी थी ॥ २ ॥

पतिव्रता गुणोपेता मिष्टवाक्यप्रवादिनी ।
सिद्धलालो महाचौरश्चौर्यवृत्तिरतः सदा ॥ ३ ॥

वह पतिव्रता और अत्यन्त गुणी मीठे वचन बोलनेवाली थी और सिद्धलाल जो था वह महाचोर और सदैव चोरी किया करता था ॥ ३ ॥

दारपुत्रादिभृत्यानां चौर्येण पोषणं कृतम् ।
एवं सर्वं वयो जातं ततो मृत्युमुपागतम् ॥ ४ ॥

वह चोरीसे ही स्त्री, पुत्र, नौकरोंका पालन किया करता था। इस प्रकार सब अवस्था बीत गई तब उसकी मृत्यु हो गई ॥ ४ ॥

तस्य भार्या सती जाता तत्प्रभावाद्गतो द्विजः ।
सत्यलोके वरारोहे सततं विविधं सुखम् ॥ ५ ॥

हे वरारोहे! उसकी स्त्री उसके साथ सती हो गई, और उसके प्रभाव से वह ब्राह्मण सत्यलोक में गया और वहाँ पर अनेक प्रकार के सुखों का उपभोग किया ॥ ५ ॥

भुक्तं पूर्वकृतात्पुण्याच्चतः पुण्यक्षये सति ।
मानुषत्वे पुनर्जन्म दुर्लभं सर्वदेहिनाम् ॥ ६ ॥

पूर्व पुण्य के प्रभाव से सब फल भोग कर बाद को जब पुण्य क्षीण होगया तब जो सब देहधारियों को दुर्लभ मनुष्य शरीर है उसको प्राप्त किया ॥ ६ ॥

धनधान्येन संयुक्तः कन्यापुत्रविवर्जितः ।
ब्राह्मण्यं च यतस्त्यक्त्वा शूद्रकर्म समाचरेत् ॥ ७ ॥

और धनधान्य से युक्त होते हुए पुत्र कन्या से रहित हुआ कारण कि पूर्व जन्म में ब्राह्मण के कर्म को छोड़कर शूद्र के कर्मको किया था ॥ ७ ॥

परद्रव्यं हृतं देवि ! तस्माद् व्याधिरजायत ।
तस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि यत्कृतं पूर्वजन्मनि ॥ ८ ॥

हे देवि ! और जो दूसरे का धन हरण कर लिया था उस दोषसे उसे रोग उत्पन्न हो गया, अब इसके पूर्वपापों की शांति कहताहूँ ॥

गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्यं च कारयेत् ।
दशवर्णाप्रदानं च पूर्वपापविशुद्धये ॥ ९ ॥

अपने घरके धन का आठवाँ भाग द्रव्य पुण्यकार्य में व्यय करे। और दश वर्णवाली गौवों का दान अपने पापशुद्धिके लिए करे ॥९॥

शय्यादानं ततः कुर्यादेकादश्यां व्रतं शुभम् ।
गायत्रीमूलमन्त्रेण विष्णुमन्त्रेण सुन्दरि ॥१०॥

इसके वाद शय्यादान करे और एकादशी व्रत को करे। हे सुन्दरि ! गायत्री मूल मंत्र से अथवा विष्णु मन्त्र से ॥ १० ॥

लक्षजाप्यं प्रयत्नेनाऽश्वत्थबिल्वतलेऽबले ।
दशांशं हवनं कुर्यात्तर्पणं मार्जनं तथा ॥११॥

विधिवत् एक लाख जप करावे, पीपल या वेलवृक्ष के नीचे उसके दशांश हवन, तर्पण तथा मार्जन करावे ॥ ११ ॥

विप्राणां भोजनं देवि ! घटदानं विशेषतः ।
एवंकृते न सन्देहो वंशो भवति नान्यथा ॥१२॥

हे देवि ! ब्राह्मणों को भोजन करावे घड़ा दान दे ऐसे विधि विधान को करने से वंश की वृद्धि होती है इसमें सन्देह नहीं ॥ १२ ॥

व्याधयः संक्षयं यान्ति मम वाक्यं न चान्यथा ॥१३॥

और सम्पूर्ण व्याधियां नष्ट हो जाती हैं, यह मेरा कहा हुआ वाक्य अन्यथा नहीं हो सकता ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे श्रवणनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकनवतितमोऽध्यायः ॥ ९१ ॥

इक्यानबे अध्याय समाप्त ॥ ९१ ॥

अथ द्विनवतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

देशे पञ्चनदे देवि गङ्गानाम्नी पुरी शुभा ।
वसन्ति सर्वे वर्णा ब्राह्मणाः क्षत्रिया विशाः ॥ १ ॥

शिवजी ने कहा कि—हे देवि ! पंचनद (पञ्जाब) में गंगा नामक पुरी थी जिसमें ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य आदि सब जाति के लोग निवास करते थे ॥ १ ॥

स्वकर्मनिरताः सर्वे वर्णाचारसमाश्रिताः ।
तन्मध्ये ब्राह्मणोऽप्येकः कृषिकर्मरतः सदा ॥ २ ॥

वे सब वर्ण आचार के क्रमसे अपने-अपने कर्म में दृढ़ थे, उनमें एक ब्राह्मण कृषि भी करता था ॥ २ ॥

एकस्मिन् समये तदीयभगिनीपुत्रो गृहे भिक्षुकः ।
प्राप्तस्तस्य बुभुक्षितो निशि तदा यष्ट्याऽहनत्तं खलः
प्राप्तःकालकरालदन्तदलनं पुत्रः स्वसुस्तस्य तत्-
पापात् सत्वरमाजगाम मरणं दुष्टः स्वयं चान्धधीः ३

एक समय उनका भानजा उसके घर भिक्षा लेने के ध्येय से आया और वह भूख से बहुत ही पीड़ित था तब रात्रि में उस कृषक ब्राह्मण ने इस तरह से अपने भानजे को मार दिया और वह मर गया इसके बाद इस पाप से पीड़ित अन्धदुर्बुद्धिवाला वह पापी भी आप काल के वश होगया ॥ ३ ॥

यमदूतैर्महादेवि निक्षिप्ता नरकार्णवे ।
अष्टाशीतिसहस्राणि वर्षाणि च तदा शिवे ॥ ४ ॥
भुज्यते विविधं कष्टं नरकं चैव दारुणम् ।
नरकान्निःसृतो देवि मार्जारत्वे भवेत्किल ॥ ५ ॥

हे देवि ! तब यमराज के दूतों ने यमाज्ञा से उसे नरक समुद्र में डाल दिया और वहाँ पर अट्ठासी हजार वर्ष तक उस में वास कर और तरह २ के कष्टों को भोगने के बाद नरक से जब निकला तब बिल्ली की योनि को प्राप्त किया ॥ ४–५ ॥

व्याघ्रस्य च पुनर्योनिं कुक्कुटत्वं ततोऽभवत् ।
पुनर्मानुषयोनिं च धनधान्यसमन्वितम् ॥ ६ ॥

उसके बाद बाघ की योनि, फिर मुर्गे की योनि में प्राप्त होकर मनुष्ययोनि में धन-धान्य के सहित उत्पन्न हुआ ॥ ६ ॥

स प्रवीणो महावक्ता कुलाचाररतः सदा ।
पूर्वजन्मनि भो देवि भागिनेयस्य वै वधः ॥ ७ ॥

हे देवि ! वह चतुर अधिक बोलनेवाला और अपने कुल के अनुसार आचरण करनेवाला हुआ जो उसने पूर्वजन्म में अपने भानजे का वध किया था ॥ ७ ॥

कृतो वै मन्दमतिना तत्पापेन हि दुःखभुक् ।
पुत्रो न जायते देवि व्याधिश्चैव पुनः पुनः ॥ ८ ॥

उस पाप से वह मतिमन्द महाकष्टको भोगता रहा और उसे पुत्र नहीं हुए बारम्बार व्याधि से पीड़ित होता था ॥ ८ ॥

अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु मत्तो वरानने ।
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥ ९ ॥

हे वरानने ! अब उसकी शान्ति कहता हूँ तुम सुनो, अपने घरके धन का छठवाँ भाग द्रव्य से पुण्यकार्य करावें ॥ ९ ॥

गायत्रीत्र्यम्बकाभ्यां च द्यौःशान्तीति मन्त्रयम् ।

लक्षत्रयं वरारोह ! जपं वै कारयेत्सुधीः ॥१०॥

गायत्री मन्त्र और त्र्यम्बक तथा द्यौशान्तिः, इन तीनों मन्त्रोंका तीन लक्ष जप विद्वान् से करावे ॥ १० ॥

दशांशहवनं देवि ! तर्पणं मार्जनं तथा ।
ब्राह्मणान्भोजयेद्भक्त्या पञ्चाशच्च वरानने ! ॥११॥

हे देवि ! उसके दशांश हवन, तर्पण और मार्जन कराकर पचास ब्राह्मणोंको भोजन करावे ॥ ११ ॥

हविषा पायसेनापि खण्डेन मोदकेन वै ।
दशवर्णा ततो दानं तिलधेनुं प्रदापयेत् ॥१२॥

अच्छे पदार्थ, खीर, खाँड़ और लड्डू आदिका भोजन करावे और दशवर्णवाली गौवें तथा तिल, धेनुका दान करे ॥ १२ ॥

पञ्चपात्रं च संदाय पिण्डदानं च कारयेत् ।
भागिनेयस्य वै मूर्त्तिः सुवर्णरजतान्विता ॥१३॥

फिर पाँच पात्रोंका दान करके पिण्डदान करे और भानजे की मूर्त्ति सुवर्ण अथवा चाँदी की बनवावे ॥ १३ ॥

दशपलसुवर्णेन सवत्सां पीठसंयुताम् ।
पूजयामास विधिवन्मन्त्रेणानेन वै शिवे ! ॥१४॥

और वह मूर्त्ति दश पल सोनेकी सवत्सा सिंहासन सहित बनवावे और इस मंत्रसे विधिवत् पूजन करे ॥ १४ ॥

सुराराध्य जगत्स्वामिन् चराचरगुरो हरे ।
मम पूर्वकृतं पापं तत्क्षमस्व दयानिधे ॥१५॥
अज्ञानाद्वा प्रमादाद्वा भागिनेयवधः कृतः ।
तत् क्षमस्व दयापूर्ण त्र्यम्बके त्रिपुरान्तक ॥१६॥

और हाथ जोड़कर प्रार्थना करे तथा कहे कि हे सुराराध्य ! हे जगत्के स्वामी ! हे चराचरगुरो ! हे हरे ! हे दयानिधे ! पूर्व

जन्ममें अज्ञानवस जो मैंने भानजेका वध किया है उस पापको आप क्षमा करें ॥ १५–१६ ॥

ततो वै पूजयामास लोकपालान् पृथक् पृथक् ।
पश्चान्माषबलिं दद्यात्प्रतिमां दापयेत्ततः ॥१७॥

इसके बाद फिर लोकपालोंका पृथक्-पृथक् पूजन करे और उड़द की बलि देकर मूर्तिका दान कर दे ॥ १७ ॥

ब्राह्मणाय तदा देवि ! पूर्वपापविशुद्धये ।
एवंकृते वरारोहे ! पुत्रः सञ्जायते खलु ॥१८॥

हे देवि ! पूर्वपापकी शुद्धिके लिये ब्राह्मणको मूर्ति दान देवे। ऐसा करनेसे निश्चय पुत्र होता है ॥ १८ ॥

व्याधयःसङ्क्षयं यान्ति न कन्या जायते खलु ।
यदा न क्रियते देवि ! सप्तजन्मस्वपुत्रकः ॥१६॥

हे देवि ! और सम्पूर्ण व्याधियोंका नाश हो जाय और कन्या नहीं होय यदि ऐसा न करे तो सात जन्म तक पुत्र हीन रहता है।१६।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे धनिष्ठानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम द्विनवतितमोऽध्यायः ॥ ९२ ॥

बानवे अध्याय समाप्त ॥ ९२ ॥

त्रिनवतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

पश्चिमायां महादेवि ! यवनस्य पुरं महत् ।
महानन्द इति ख्यातः सर्वदेशे सुरेश्वरि ॥ १ ॥

शिवजी कहे कि—हे देवि ! पश्चिम दिशामें यवनोंका एक महान् नगर था जिसमें महानन्द नामक ब्राह्मण रहता था ॥१॥

वसन्ति बहवो म्लेच्छाः स्वविद्यायां विचक्षणाः।

ब्राह्मणास्तत्र वै देवि! विद्यायां निपुणास्तथा ॥ २ ॥

और उसमें म्लेच्छ विद्यामें निपुण बहुतसे म्लेच्छ वास करते थे। और वहाँ पर अपने विद्यामें निपुण बहुतसे ब्राह्मण भी निवास करते थे ॥ २ ॥

तिष्ठत्यशङ्कया नित्यं म्लेच्छान्नं भुज्यते सदा।
स सन्ध्यारहितो विप्रः पिशुनो दुर्मतिः शठः ॥ ३ ॥

और वहाँ पर एक ऐसा ब्राह्मण था जो कि निर्भय होकर नित्य म्लेच्छोंके अन्नको खाता था और संध्यासे रहित, वञ्चक दुर्बुद्धि और चुगुल था ॥ ३ ॥

सञ्चितं बहुसाहस्रं स्वर्णरत्नगजादिकम्।
ततो बहुदिने जाते तस्य मृत्युरभूत्पुरा ॥ ४ ॥

और उसने स्वर्ण, रत्न, हाथी, घोड़े अनेकानेक सम्पत्तिसंचय किया और बहुत दिन बीत जाने पर उसकी मृत्यु हो गई ॥४॥

सर्पेण दंष्टो देवेशि पङ्के निर्जलेऽपि वा।
यमदूतैर्महादेवि ! यमाज्ञां गृह्य वै द्विजम् ॥ ५ ॥

हेदेवेशि ! किन्तु वह ब्राह्मण जल रहित देशमें और सर्पके काटने से मरगया तब यमाज्ञासे उनके दूतोंने उसे ले जाकर ॥ ५ ॥

रौरवे क्षिप्तवाञ्छीघ्रं महाकष्टं प्रभुज्यते।
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ६ ॥

रौरव नरकमें छोड़ दिया शीघ्र ही महाकष्टोंको भोगने लगा और साठ हजारवर्ष तक नरकके दुखोंको भोगता रहा ॥ ६ ॥

नरकान्निःसृतो देवि ! ग्राहयोनिरभूत्पुरा।
पुनः कच्छपयोनिश्च मानुषत्वं ततोऽभवत् ॥ ७ ॥

हे देवि ! नरकसे निकलनेके बाद ग्राह (मगर) की योनिको प्राप्त किया बादको फिर कछुए की योनिमें तत्पश्चात् मनुष्य हुआ ॥७॥

पूर्वजन्मनि भो देवि ! ब्राह्मणत्वं यतोऽत्यजत्।

अपुत्रत्वं ततो देवि ! कन्यका नैव जायते ॥ ८ ॥

हे देवि ! उसने पूर्वजन्ममें ब्राह्मणधर्मका त्याग किया था, उस पापसे पुत्र रहित हुआ और कन्या भी नहीं हुई ॥ ८ ॥

म्लेच्छान्नं भुज्यते देवि! संध्यां च तर्पणं विना ।
अतो व्याधियुतो नित्यं न सुखं लभते क्वचित्॥ ९ ॥

और जो म्लेच्छोंका अन्न खाया था और संध्या, तर्पणादि नहीं किया था, इसीसे नित्य व्याधियुक्त तथा शुभ की किंचित् मात्र भी प्राप्ति नहीं हुई ॥ ९ ॥

शान्तिं शृणु वरारोहे पूर्वपापप्रणाशिनीम् ।
गृहं शुभ्रं वरारोहे धनधान्यसमन्वितम् ॥१०॥

हे वरारोहे ! पूर्वपापको नाश करनेवाली शांतिको कहता हूँ, वह सुनो सुन्दर शुद्ध घर धनधान्यके सहित ॥ १० ॥

सञ्चितान्नं वरारोहे ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ।
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ॥११॥

उसको अन्न समेत ब्राह्मणको दे और गायत्रीके मूल मंत्रसे एक लक्ष जप करावे ॥ ११ ॥

हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं तथा ।
त्रैमासिकव्रतं कुर्याद् व्रतं च रविसप्तमी ॥१२॥

और उसके दशांश हवन तर्पण तथा मार्जन करावे और त्रैमासिक व्रत करे, तथा रवियुक्त सप्तमी का व्रत करे ॥ १२ ॥

जातवेदेति मन्त्रेण लक्षजाप्यन्तु कारयेत् ।
ततो गां कपिलां देवि स्वर्णवस्त्रविभूषिताम् ॥१३॥

हे देवि ! जात वेदस० इस मन्त्रका एकलक्ष जपकराकर कपिला गऊका दान विधिपूर्वक ब्राह्मण को दे ॥ १३ ॥

दद्यात्सवस्त्रां विधिवद्ब्राह्मणाय शिवात्मने ।
अश्वदानं च कर्तव्यं चामरं छत्रमेव च ॥१४॥

और शिवस्वरूपी ब्राह्मणको घोड़ा तथा चमर और छत्रका दान देवे ॥ १४ ॥

एवंकृते न सन्देहो व्याधिनाशो भवेद्ध्रुवम् ।
पुत्रोऽपि जायते देवि वन्ध्यात्वं च प्रणाशयेत् ॥१५॥

हे देवि! ऐसा करनेसे सब रोग नष्ट हो जाते हैं और पुत्रकी प्राप्ति होती है तथा वंध्यापन भी नष्ट होता है, इसमें संदेह नहीं ॥१५॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे धनिष्ठानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम त्रिनवतितमोऽध्यायः ॥९३॥

तिरानवे अध्याय समाप्त ॥ ९३ ॥

अथ चतुर्नवतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

यत्किञ्चित्क्रियते कर्म वैदिकं चापि लौकिकम् ।
तत्तत्कर्मफलं भोग्यमिह लोके परत्र च ॥ १ ॥

शिवजीने कहा कि—इस संसारमें जो कुछ कर्म लौकिक या वैदिक (पारलौकिक) किया जाता है, उस कर्मका फल इस लोक और परलोक दोनोंमें भोगने पड़ते हैं ॥ १ ॥

सौराष्ट्रनगरे देवि क्षत्रियो वसति प्रिये ।
क्षत्रधर्मरतो नित्यं मृगपक्षिप्रहारकः ॥ २ ॥

हे प्रिये! सौराष्ट्र नरगमें एक क्षत्रिय रहता था जो कि अपने धर्माचरणमें रत और मृग पक्षियों को मारा करता था ॥ २ ॥

एकस्मिन् समये काले वनं यातः स दुर्मतिः ।
मृगीं सगर्भां हतवान् बालद्वयसंयुताम् ॥ ३ ॥

एक समय उस दुष्टने वनमें जाकर दो बालकोंसे युक्त एक गर्भवती मृगीको मारा ॥ ३ ॥

पुत्रेण भार्यया सार्धं भुक्तं तेन दुरात्मना ।
ततो बृद्धे तु सञ्जाते तस्य मृत्युरभूत्किल ॥ ४ ॥

और उस दुरात्मा ने ले आकर सपरिवार खाया और वृद्धावस्था में उसकी मृत्यु हो गई ॥ ४ ॥

यमदूतैर्महादेवि ! नरके क्षिप्त एव सः ।
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ५ ॥

तब यमदूतों ने उसे नरक में डाल दिया और साठ हजार वर्ष तक नरक यातनायें भोगकर ॥ ५ ॥

नरकान्निःसृतो देवि ! महिषो जायते खलु ।
वराहत्वं पुनर्जातं मानुषत्वं पुनर्भवेत् ॥ ६ ॥

हे देवि ! जब नरक से बाहर आया तब भैंस की योनि प्राप्त किया, फिर शूकर की योनि में उत्पन्न होकर बाद में मनुष्य शरीर पाया ॥ ६ ॥

देशे पुण्यतमे देवि ! धनधान्यसमन्वितः ।
विद्यावान् गुणवान् वक्ता राजसेवासु तत्परः ॥ ७ ॥

और एक उत्तम देश में धनादि से सम्पन्न विद्वान् और गुणी, वक्ता तथा राज-सेवक हुआ ॥ ७ ॥

पूर्वजन्मनि देवेशि ! हत्वा मृगगणान्बहून् ।
प्रसवोन्मुखीं मृगीं हत्वा मृगवृन्दसमन्विताम् ॥ ८ ॥

हे देवेशि ! उसने जन्मान्तरमें मृग वृन्दोंके सहित प्रसवोन्मुखी अर्थात् थोड़ेही दिनमें प्रसव करनेवाली गर्भवती मृगीको मारा था॥८

तत्पापेन महादेवि ! मृतवत्सत्वमाप्नुयात् ।
शरीरे बहवो रोगा ज्वराश्चातुर्थिकास्तथा ॥ ९ ॥

उस पाप से मृतवत्सा योग हो गया याने सन्तान होकर मर जाती थीं, शरीर में अनेक तरह की व्याधि तथा चातुर्थिक ज्वर (जिसे चौथिया कहते हैं) हो गया ॥ ९ ॥

शान्तिं शृणु वरारोहे ! मृतवत्सत्वशान्तये ।
गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥१०॥

हे वरानने अब उस मृतवत्सा की शान्ति सुनो, अपने गृह के धन का आठवाँ भाग द्रव्य से पुण्य कार्य करावे ॥१०॥

गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ।
हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं ततः ॥११॥

और गायत्री मूल मंत्र से एक लक्ष जप कराकर उसके दशांश हवन, तर्पण और मार्जन करावे ॥ ११ ॥

पलपञ्चसुवर्णस्य मृगीं वत्ससमन्विताम् ।
कृत्वा समर्पयामास ब्राह्मणाय शिवात्मने ॥१२॥

और पाँच पल (हरिणी) की प्रतिमा बनवा कर शिवात्मने (शैव) ब्राह्मण को दान दे देवे ॥ १२ ॥

दशवर्णां ततो दद्याच्छय्यादानं विशेषतः ।
वाटिकारोपणं कुर्यात् पथि कूपं तथा शिवे ! ॥१३॥

हे शिवे ! दश प्रकार की गौवों का दान और विधिवत् शय्या दान करके मार्गमें वाटिका और कुआँ इनका निर्माण करावे॥१३॥

ब्राह्मणान् भोजयामास शतसङ्ख्यान्समोदकैः ।
एवंकृते वरारोहे ! पुत्रः सञ्जायते खलु ॥१४॥

इसके बाद सौ ब्राह्मणोंको उत्तम पदार्थों से भोजन करावे इस प्रकारके नियमाचरण से अवश्य पुत्रकी प्राप्ति होती है ॥ १४ ॥

व्याधयः सङ्क्षयं यान्ति वन्ध्यात्वं च प्रशाम्यति ।
मृतवत्सा तु या नारी सुतं सानुग्रहं लभेत् ॥१५॥

और सब प्रकार की व्याधियां तथा वन्ध्यापन भी दूर हो जाता है और जो मृतवत्सा स्त्री है वह भी उत्तम सन्तान पाती है ॥१५॥

काकवन्ध्या पुनः पुत्रं लभते नात्र संशयः ॥१६॥

और काकवन्ध्या फिर पुत्रको पाती है इसमें संशय नहीं ॥१६॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे धनिष्ठानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चतुर्नवतितमोऽध्यायः ॥ ९४ ॥

चौरानवे अध्याय समाप्त ॥ ९४ ॥

अथपञ्चनवतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

मथुरादक्षिणे भागे योजने व त्रयो यदि ।
पुरं सिद्धमिति ख्यातं वसन्ति बहवो जनाः ॥ १ ॥

शिवजी बोले—मथुरा से दक्षिण दिशा में तीन योजन अर्थात् बारह कोस की दूरी पर एक सिद्ध पुर था जिसमें बहुत से लोग निवास करते थे ॥ १ ॥

क्षिप्रकारो वसत्येको धनधान्यसमन्वितः ।
बलभद्र इति ख्यातो वैष्णवो ज्ञानवल्लभः ॥ २ ॥

और उसके मध्य में एक क्षिप्रकार रहता था जो कि धनिक और वैष्णव ज्ञान से युक्त बलभद्र नामक था ॥ २ ॥

तस्य पुत्रत्रयं जातं कनीयांसस्य चादरः ।
नादरो ज्येष्ठपुत्रस्य मध्यमस्य तथैव च ॥ ३ ॥

उसे तीन लड़के उत्पन्न हुए किन्तु सबसे अधिक प्रेम छोटे पुत्रपर रखता था ज्येठे और मध्यवालेका उतना आदर नहीं करता था ॥३॥

धनं च सञ्चितं तेन महाशूद्रेण चानघे ।
भ्रातृणां विग्रहो जातो विभागार्थं धनस्य तु ॥ ४ ॥

उस शूद्र ने बहुत सा धन सञ्चित किया था जिसके लिये उन तीनों भाइयों ने आपस में हिस्से के लिये विग्रह (झगड़ा) करना आरम्भ कर दिया ॥ ४ ॥

ब्राह्मणस्तस्य वै मित्रं विग्रहस्तेन वै श्रुतः ।

आगतस्तस्य निकटे क्षिप्रकारस्य व शिवे ॥ ५ ॥

हे शिवे ! उस क्षिप्रकार का एक ब्राह्मण मित्र उनके झगड़े को सुनकर उनके पास आया ॥ ५ ॥

ब्राह्मणस्य वधो जातः शूद्राणां विग्रहे सति ।
सर्वद्रव्यं कनिष्ठाय क्षिप्रकारो ददौ स्वयम् ॥ ६ ॥

और उन शूद्रों के झगड़े में उस ब्राह्मण की मृत्यु हो गई तब शूद्र ने अपना सब धन छोटे पुत्र को दे दिया ॥ ६ ॥

एवं बहुगते काले शूद्रस्य मरणं भवेत् ।
रौरवं नरकं यातः क्षिप्रकारोऽपि वै स्वयम् ॥ ७ ॥

इस तरह बहुत सा समय बीत जाने पर उस शूद्र की भी मृत्यु हो गई, और मरकर रौरव नामक नरक में चला गया ॥ ७ ॥

लक्षवर्षं वरारोहे भुक्त्वा नरकयातनाम् ।
नरकान्निःसृतो देवि व्याघ्रयोनिस्ततोऽभवत् ॥ ८ ॥

और एक लाख वर्ष तक नरक यातनायें भोग लेने के बाद जब नरक से बाहर आया तो व्याघ्र की योनि को पाया ॥८॥

भुक्त्वा व्याघ्रस्य योनिं स काकयोनिस्ततोऽभवत् ।
मानुषत्वं पुनर्जातं मध्यदेशे सुरेश्वरि ॥ ९ ॥

बाघ की योनि को भोग लेने के बाद कौवे की योनि में गया उसके बाद फिर मनुष्य शरीर प्राप्त किया ॥ ९ ॥

धनधान्यसमायुक्तो रोगवान् पुत्रवर्जितः ।
अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु मे परमेश्वरि ॥१०॥

धनधान्य से युक्त होते हुए शरीर से रोगी और सन्तान रहित हुआ । अब इसकी शान्ति कहता हूँ—मुझसे सुनो ॥ १० ॥

गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ।
पूर्वपापविशुद्ध्यर्थं दशवर्णा ददेत्ततः ॥११॥

अपने गृहके धनके छठवें भाग द्रव्यसे पुण्य कार्य करावे और पूर्व पाप की शुद्धि के लिए दश प्रकार की गौवों का दान दे ॥११॥

गायत्रीसूर्यमन्त्रेण लक्षजाप्यं वरानने ।
दशांशं हवनं देवि मार्जनं तर्पणं तथा ॥१२॥

हे देवि! गायत्री मंत्र और सूर्य मन्त्र से एक लक्ष जप करा: कर उसके दशांश हवन, तर्पण और मार्जन करावे ॥ १२ ॥

दशांशं भोजयेद्विप्रान् ब्राह्मणान्वेदपारगान् ।
कूष्माण्डं नारिकेलं च पञ्चरत्नसमन्वितम् ॥१३॥
गङ्गामध्ये प्रदातव्यं देवि सत्यव्रताय च ।
एवंकृते वरारोहे सर्वरोगक्षयो भवेत् ॥१४॥

और उसके दशांश वेदज्ञ ब्राह्मणोंको भोजन कराकर कूष्माण्ड (सफेदकोहड़ा)यानारियलमें पञ्चरत्न भरकर गङ्गाके मध्यमें सत्यवादी ब्राह्मणकोदान देवे ऐसा करनेसे सब रोग नष्ट होजाते हैं ॥१३-१४॥

वंशवृद्धिर्भवेत्तस्य नात्र कार्या विचारणा ॥ १५ ॥

और उसके वंश की वृद्धि होवे इसमें सन्देह नहीं ॥ १५ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे
धनिष्ठानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं
नाम पञ्चनवतितमोऽध्यायः ॥ ९५ ॥

पञ्चानवे अध्याय समाप्त ॥ ९५ ॥

अथ षण्णवतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

मथुरायां विशालाक्षि आभीरस्तत्र तिष्ठति ।
गोपालेति समाख्यातो सदा गोधनजीवितः ॥ १ ॥

शिवजी कहे कि–हे विशालाक्षि! मथुरा में एक आभीर (अहीर) गोपाल नाम का गौवों से जीविका चलानेवाला रहता था ॥१॥

तस्य भार्या विशालाक्षी सती नामातिसुन्दरी ।
गोधनं बहुसाहस्रं गोपालस्य सुरेश्वरि ॥ २ ॥

हे सुरेश्वरि ! उसकी स्त्री परम सुन्दरी तथा सती नाम की थी । और उस गोपालके पास एक हजार गौवें थीं ॥ २ ॥

वत्सानां वृषभानां च पालनं क्रियते सदा ।
शीतकाले महादेवि वृष्टिर्जाता वरानने ॥ ३ ॥

वह सर्वदा बछड़ा और बैलोंका पालन किया करता था एक समय शीतकाल अर्थात् जाड़ेके महीनोंमें बहुत वर्षा हुई ॥ ३ ॥

गौः सवत्सा महादेवि ! पीडिता भोजनं विना ।
गृहाभावे मृता बाह्ये वत्सेनैव च संयुता ॥ ४ ॥

जिससे उसके सब गौ और बछड़े भोजनके बिना याने घास इत्यादि नहीं पाये और शीतसे बचनेके लिए कोई घर भी न मिला बाहर ही रह जानेके कारण पीड़ित होकर वे सब मर गये ॥४॥

ततो बहुगते काले गोपालस्य मृतिस्तदा ।
यमदूतैर्महाघोरे नरके नामकर्दमे ॥ ५ ॥

उसके बाद बहुत दिन बीत जाने पर गोपालकी मृत्यु हो गई और यमदूतोंने उसे ले जाकर कर्दम नामक नरक में ॥ ५ ॥

क्षिप्तं यमाज्ञया देवि ! षष्टिवर्षसहस्रकम् ।
नरकान्निःसृतो देवि भेकयोनिस्ततोऽभवत् ॥ ६ ॥

यमराजकी आज्ञासे छोड़ दिया और साठ हजारवर्ष तक कष्ट भोगनेके बाद उससे जब उद्धार हुआ तब मेढ़ककी योनि पाया ॥६॥

सरटस्य ततो देवि मानुषत्वं ततोऽभवत् ।
धनधान्यसमायुक्तो व्याधिना पीडितः सदा ॥ ७ ॥

उसके बाद गिरगिटकीयोनिमें उत्पन्न होकर फिर धनादिसेयुक्त मनुष्य शरीर प्राप्त किया और व्याधिसे सर्वदा पीड़ित रहता था ।७।

अपुत्रत्वं ततो लेभे कन्यका जायते खलु ।
तस्य शान्तिमहं वक्ष्ये शृणु देवि सुशोभने ॥ ८ ॥

और हे देवि! वह पुत्र रहित था, उसे केवल कन्या ही होती थीं। अब मैं उसकी शान्ति कहता हूँ उसे सुनो ॥ ८ ॥

निर्बीजं वृषभं तेन कृतं योगेन वै शिवे ।
तेन पापेन भो देवि गर्भपातः पुनः पुनः ॥ ९ ॥

उसने बैलोंको बधिया कराया था उसी पापसे बार-बार गर्भ पात होता था ॥ ९ ॥

वसन्ते मासि वै कुर्याद्घटदानं सहस्रशः ।
एकादशीव्रतं नित्यं वेण्याः स्नानं समाचरेत् ॥१०॥

वसन्त ऋतुके महीनोंमें एक हजार घड़ोंका दान और सदैव एकादशीव्रतको करेऔर प्रयागमेंत्रिवेणी संगमपर स्नान करे ॥१०॥

दशवर्णगवां दानं शय्यादानं तथैव च ।
आकृष्णेति जपं कुर्याल्लक्षसङ्ख्यं वरानने ॥११॥

और दशवर्ण वाली गौवोंका दान, शय्यादान, तथा "आकृष्णेन०" इस मंत्रका एक लक्ष जप करावे ॥ ११ ॥

दशांशं हवनं तद्वन्मार्जनं तर्पणं तथा ।
भोजयेद्विविधैश्चान्नैर्ब्राह्मणाञ्छ्रोत्रियाञ्छतम् ॥१२॥

और उसके दशांश हवन, तर्पण तथा मार्जन कराकर सौ श्रोत्रिय ब्राह्मणोंको नाना प्रकारके मिष्ठान्नोंका भोजन करावे ॥१२॥

पायसान्नेन खण्डेन घृतेन दधिना तथा ।
एवं कृते न सन्देहो ज्वरमोक्षः प्रजायते ॥१३॥

खीर आदि मिष्ठान्न पदार्थों सहित दहीका भोजन करावे,ऐसा करनेसे निःसन्देह ज्वरसे छुटकारा पा जाता है ॥ १३ ॥

वंशवृद्धिर्भवेत्तस्य मृतवत्सा च पुत्रिणी ।

काकवन्ध्या पुनः पुत्रं लभते नात्र संशयः ॥१४॥

और उसके वंशकी वृद्धि होती है तथा मृतवत्सा स्त्री भी पुत्रवती होती है और काकवन्ध्या भी पुनः पुनः पुत्र लाभ करे इसमें संशय नहीं ॥१४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे शतभिषा नक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नामषण्णवतितमोऽध्यायः ॥९६॥

छानवे अध्याय समाप्त ॥ ९६ ॥

अथ सप्तनवतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

मध्यदेशे महेशानि लुब्धको वसति प्रिये ।
मृगारिर्नाम विख्यातो मृगमांसेन जीवति ॥ १ ॥

शिवजी बोले कि—हे प्रिये ! मध्यदेशमें एक लुब्धक (शिकार करनेवाला) मृगारि नाम करके रहता था, वह मृगोंके माँससे ही अपना जीवन निर्वाह करता था ॥ १ ॥

प्रत्यहं मृगयां याति पक्षिणां मारणे रतः ।
मांसक्रयं च कुरुते कलत्रं पोषयेत्सदा ॥ २ ॥

वह नित्यप्रति शिकारके लिये जाता और पक्षियोंको मारनेमें बिल्कुल लिप्त रहता था और मांस बेंच कर अपने कुटुम्बका पालन पोषण करता था ॥ २ ॥

एवं वयो गतं सर्वं वृद्धे सति वरानने ! ।
मरणं तस्य वै जातं यमदूतैर्यमाज्ञया ॥ ३ ॥

हे वरानने ! इस प्रकार सब अवस्था बीत जाने पर जब वृद्ध हुआ तो उसकी मृत्यु हो गई और यमाज्ञासे उनके दूतोंने ॥ ३ ॥

रौरवे नरके क्षिप्तं तत्र कष्टं मुहुर्मुहुः ।

सप्ततिर्वै सहस्राणि नरके परिपच्यते ॥ ४ ॥

उसे रौरव नामक नरकमें डाल दिया और सत्तर हजारवर्ष तक बराबर नरकके कष्टोंको भोगता हुआ पड़ा रहा ॥ ४ ॥

नरकान्निःसृतो देवि ! श्येनयोनिं प्रजायते ।
उष्ट्रस्य च पुनर्योनिं शृगालत्वं ततः पुनः ॥ ५ ॥

हे देवि ! जब नरकसे बाहर आया तो क्रमशः श्येन (बाज पक्षी) की योनिमें फिर ऊँट की योनिमें उसके बाद सियार इन योनियोंमें भोगता हुआ ॥ ५ ॥

मानुषत्वं ततो जातो धनधान्येन संयुतः ।
पूर्वजन्मनि देवेशि पक्षिणो बहवो हताः ॥ ६ ॥

धनादिसे युक्त मनुष्य शरीर धारण किया और पूर्व जन्ममें उसने बहुत सी पक्षियोंका वध किया था ॥ ६ ॥

तेन पापेन भो देवि ! व्याधिना पीडितो हि सः ।
मृगं हत्वा वरारोहे हतं च मृगशावकम् ॥ ७ ॥

हे देवि ! उस पाप से वह व्याधियों से पीडित हुआ तथा बच्चों सहित मृगों को जो मारा था ॥ ७ ॥

एतद्दोषेण भो देवि ! पुत्राणां मरणं खलु ।
काकवन्ध्या भवेन्नारी कन्यका जायते सदा ॥ ८ ॥

उस पापके दोष से उसके पुत्रों का मरण हुआ तथा उसकी स्त्री काकवन्ध्या होगई या केवल कन्या उत्पन्न करनेवाली हुई ॥ ८ ॥

वन्ध्या भवति वै नारी शांतिं शृणु वरानने ।
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥ ९ ॥

हे वरानने ! उस वन्ध्यापन के दोष से दूषित नारियों के लिये अब शान्ति कहता हूँ उसे सुनो; अपने गृह के धन के छठवें भाग द्रव्य से पुण्यकार्य करावे ॥ ९ ॥

गायत्रीजातवेदाभ्यां लक्षजाप्यं वरानने ।

दशांशं हवनं तद्वत्तर्पणं मार्जनं तथा ॥१०॥

गायत्री मूल मंत्र तथा "जातवेदसे०" इन मन्त्रों से एक-एक लक्ष जप कराकर उसके दशांश हवन तर्पण तथा मार्जन करावे ॥१०॥

दशधेनूस्ततो दद्यात्स्वर्णदानं विशेषतः ।
हरिवंशश्रुतिं देवि ! व्रतं च हरिवासरम् ॥११॥

हे देवि ! दश गौवें तथा सुवर्ण दान विधि से करे और हरिवंश सुने एकादशी व्रत रहे ॥ ११ ॥

ब्राह्मणान् भोजयामास यथाशक्तिस्तु दक्षिणा ।
एवंकृते वरारोहे वंशस्तस्य भविष्यति ॥१२॥

और ब्राह्मणों को भोजन कराकर शक्ति के अनुसार उन्हें दक्षिणा दे, ऐसा करे तो उसके वंश की वृद्धि होगी ॥ १२ ॥

वन्ध्यात्वं प्रशमं याति काकवन्ध्या पुनः सुतम् ।
मृतवत्सा सुतं लेभे चिरञ्जीविनमुत्तमम् ॥१३॥

वन्ध्यापन दूर हो जाय और काकवन्ध्या तथा मृतवत्सा स्त्री भी उत्तम दीर्घजीवी पुत्र प्राप्त करें ॥ १३ ॥

व्याधयः संक्षयं यान्ति ज्ञानं च लभते क्वचित् ॥१४॥

और सब रोग भी छूट जाय तथा ज्ञान प्राप्त हो ॥१४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे शतभिषानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम सप्तनवतितमोऽध्यायः ॥ ९७ ॥

सत्तानवे अध्याय समाप्त ॥ ९७ ॥

अथाष्टनवतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच

गोमतीनिकटे देवि ! पुरमस्ति धुरंधरम् ।
वसन्ति बहवो देवि ! जना धर्मविचक्षणाः ॥ १ ॥

शिवजी बोले कि—हे देवि ! गोमती नदी के निकट धुरन्धरपुरी थी वहाँ पर बहुत से धार्मिक लोग निवास करते थे ॥ १ ॥

तन्मध्ये ब्राह्मणोऽप्येको ब्रह्मकर्मविवर्जितः ।
द्यूतकर्मरतः सोऽपि वेश्यासुरततत्परः ॥ २ ॥

उनके मध्य में एक ब्राह्मण रहता था, जो कि ब्रह्मकर्म से रहित जुआड़ी और वेश्यागामी था ॥ २ ॥

मद्यपानरतो नित्यं वेदशास्त्रविनिन्दकः ।
ततो बहुदिने देवि ! तस्य मृत्युरभूत्पुरा ॥ ३ ॥

और नित्यप्रति मद्यपान तथा वेदों की निन्दा किया करता था, इसप्रकार बहुत दिन बीत जाने पर उसकी मृत्यु हो गई ॥३॥

यमदूतैर्महाघोरैर्नरके तु निपातितः ।
स्थितः स नरके घोरे लक्षवर्षं महेश्वरि ॥ ४ ॥

तब यमदूतों द्वारा महाघोर नरक में ले जाया गया और लाखों वर्ष तक वह उस नरक में रहा ॥ ४ ॥

नरकान्निःसृतो देवि वृकयोनिरभूत्पुरा ।
वराहस्य पुनर्योनिर्गर्दभत्वं ततोऽभवत् ॥ ५ ॥

हे देवि ! जब नरक से बाहर आया तब वृक (भेड़िये) शूकर, गधे इन योनियों में क्रमशः भ्रमण करता हुआ ॥ ५ ॥

मानुषत्वं ततो लेभे देशे पुण्यतमे शुभे ।
पूर्वजन्मनि देवेशि ! मद्यपानरतस्सदा ॥ ६ ॥

एक पुनीत उत्तम देश में मनुष्य योनि में जन्म लिया और जो जन्मान्तर में मद्य पान किया था ॥ ६ ॥

तेन पापेन भो देवि ! शरीरे रोगसम्भवः ।
द्यूतवेश्यारतो नित्यं यत्कृतं पूर्वजन्मनि ॥ ७ ॥

हे देवि ! उस पाप के दोष से शरीर से रोगी हुआ और पूर्व में जो जुआ में रत तथा वेश्यागमन किया था ॥ ७ ॥

तत्पापेन महादेवि ! वंशच्छेदश्च जायते ।
शान्तिं शृणु वरारोहे ! पूर्वपापप्रणाशिनीम् ॥ ८ ॥

उस पाप के कारण सन्तान रहित हुआ । अब पूर्व पाप की शान्ति के लिये उपाय कहता हूँ सुनो ॥ ८ ॥

गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ।
विष्णोरराट्मन्त्रेण लक्षजाप्यं वरानने ! ॥ ९ ॥

अपने गृह के धन के छठवें भाग द्रव्य से पुण्य कार्य करावे और "विष्णोरराट्" इस मंत्र से एक लक्ष जप कराकर ॥ ९ ॥

दशांशं हवनं तद्वन्मार्जनं तर्पणं तथा ।
ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चात्पञ्चाशच्च वरानने ! ॥१०॥

उसके दशांश हवन, तर्पण तथा मार्जन करावे इसके बाद पचास ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ १० ॥

ततो गां कृष्णवर्णां च स्वर्णशृङ्गीं विभूषिताम् ।
वस्त्रयुक्तां सवत्सां च दद्याद्द्विजवराय च ॥११॥

इसके बाद सुवर्ण से युक्त सींगवाली बछड़े सहित कृष्ण वर्ण की गौ वस्त्रादि के साथ उत्तम ब्राह्मण को दान दे ॥ ११ ॥

प्रतिमां तु ततः कुर्याद्विष्णोः साम्बस्य वा शिवे ! ।
पलं दशसुवर्णस्य विष्णोर्मुक्ताविभूषिताम् ॥१२॥

हे शिवे ! फिर विष्णु की मूर्ति दश पल सुवर्ण की बनवाकर मोती आदि से अलंकृत करे ॥ १२ ॥

तद्वदेव शिवस्यैव रजतस्य वरानने ! ।
नानावस्त्रैरलङ्कारैः पूजयित्वा यथाविधि ॥१३॥

और उसी तरह चाँदीकी प्रतिमा शंकरजी की बनवा करके उस प्रतिमाको अनेक प्रकार के वस्त्रादिसे अलंकृत कर विधिवत् पूजन करे ॥ १३ ॥

मन्त्रेणानेन देवेशि ! तद्वदेव गणं नमेत् ।
गरुडध्वज देवेश भूतनाथ दयानिधे ॥१४॥

और इस मंत्रसे गणेशजी का पूजन करे और हाथ जोड़कर प्रार्थना करते हुए कहे कि—हे गरुड़ध्वज, हे देवेश, हे भूतनाथ, हे दयानिधे, इस प्रकार सब गणोंका भी पूजन करे ॥ १४ ॥

मम पूर्वकृतं पापं तत् क्षमस्व दयानिधे ।
गन्धधूपादिभिर्देवि ! पूजयित्वा पृथक् पृथक् ॥१५॥

हे दयानिधे ! मेरे पूर्वजन्मके किये हुए पापोंका शमन करें इस प्रकार गन्ध, धूपादि से पृथक् २ इनका पूजन करे ॥ १५ ॥

ॐ सुदर्शनाय नमः । ॐ त्रिशूलाय नमः ।
ॐ गरुडाय नमः । ॐ भैरवाय नमः ।
ॐ जयाय नमः । ॐ विजयाय नमः ।
ॐ वटुकाय नमः ॐ कालभैरवाय नमः ।
प्रतिमां पूजयित्वा तु विप्राय प्रददौ स्वयम् ।
ततो विष्णुं नमस्कृत्य शिवं सर्वसुखप्रदम् ॥१६॥

बादको उस पूजित प्रतिमाकोब्राह्मणको दान दे देवे और विष्णु तथा सर्व सुखोंको देनेवाले सदा शिवको नमस्कार करे ॥ १६ ॥

एवंकृते न सन्देहः सर्वपापक्षयो भवेत् ।
वंशवृद्धिर्भवेत्तस्य व्याधिनाशस्तथैव च ॥१७॥

ऐसा करनेसे निश्चय सब पापोंका नाश होकर वंशवृद्धि होती है और सब व्याधियोंका भी नाश हो जाता है ॥ १७ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे शतभिषानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामाष्टनवतितमोऽध्यायः ॥ ९८ ॥

अट्ठानवे अध्याय समाप्त ॥ ९८ ॥

अथैकोनशततमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

पञ्चकोशमिते देवि ! मथुरा उत्तरे तथा ।
हेमन्तपुरसद्ग्रामे वसन्ति बहवो जनाः ॥ १ ॥

शिवजीने कहा हे देवि मथुरापुरीसे पाँचकोश की दूरी पर उत्तम हेमन्तपुर नामक ग्राममें बहुत मनुष्य निवास करते थे ॥ १ ॥

तन्मध्ये वैश्य एको हि क्रयविक्रयतत्परः ।
स सुकर्मा इति ख्यातो धनं च बहु सञ्चितम् ॥ २ ॥

उनके मध्यमें सुकर्मा नामक एक वैश्य भी रहता था, जो कि क्रय-विक्रय रूपी व्यापारको करता हुआ बहुत सा धन एकत्र कर लिया था ॥ २ ॥

तस्य स्त्री पार्वती नाम रूपयौवनसंयुता ।
वैश्यश्चैव महादेवि ! प्रौढ़िं यातः सुरेश्वरि ! ॥ ३ ॥

और परम सुन्दरी युवावस्थावाली पार्वती नाम की उसकी स्त्री थी, जब वह वैश्य वृद्ध हुआ ॥ ३ ॥

दरिद्रत्वं भवेद्देवि ! दरिद्रत्वात्सुपीडितः ।
शतपञ्चऋणं नीतं ब्राह्मणस्य सुरेश्वरि ॥ ४ ॥
व्यापारार्थं विशालाद्धि न दत्तं ब्राह्मणाय वै ।
सर्वं भुक्तं महादेवि बहुकाले गते सति ॥ ५ ॥
वैश्यस्यैव भवेन्मृत्युः सभार्यस्य वरानने ।
मथुरायां विशालाद्धि लब्धं स्वर्गं वरं शुभम् ॥ ६ ॥

हे देवि ! तब दरिद्र हो गया और उससे पीड़ित होकर किसी ब्राह्मणसेपाँचसौरुपयेव्यापारके वास्तेऋण लिया औरउस ब्राह्मणको फिर नहीं दिया। इस प्रकार बहुत काल गत हो जाने पर स्त्री के

सहित उसकी मृत्यु हो गई और पुनीत मथुरा नगरी में शरीर छूटनेके कारण उत्तम स्वर्ग की प्राप्ति हुई ॥ ४-५-६ ॥

दशलक्षमितं स्वर्गं फलं भुक्त्वा वरानने ।
ततः सह कलत्रेण पुनः पुण्यक्षये सति ॥ ७ ॥

और दश लाख वर्ष पर्यन्त स्वर्ग सुखको भोगकर फिर जब पुण्य क्षीण हुआ तब स्त्री सहित आकर ॥ ७ ॥

मानुषत्वं पुनर्लेभे देशे शुभ्रे मनोहरे ।
धनधान्यसमायुक्तो जायते वै सुरेश्वरि ॥ ८ ॥

उत्तम एक रमणीय देशमें मनुष्य योनिमें उत्पन्न होकर धनादिसे सम्पन्न हुआ ॥ ८ ॥

पूर्वजन्मनि देवेशि ब्राह्मणस्य धनं हृतम् ।
न दत्तं वै ततो देवि ततः पुत्रो न जायते ॥ ९ ॥

हे देवि ! उसने पूर्वजन्ममें ब्राह्मणका धन लेकर फिर नहीं दिया उस दोष से पुत्र नहीं हुआ ॥ ९ ॥

ततः शान्तिं प्रवक्ष्यामि यतः पापस्य सङ्क्षयः ।
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥१०॥

अब उसकी शान्ति कहता हूँ जिससे पाप नष्ट हो, अपने गृह के धनके छठवें भाग द्रव्यसे पुण्य कार्य करावे ॥ १० ॥

आकृष्णेति ततो मन्त्रं लक्षजाप्यं च कारयेत् ।
दशांशं हवनं कुर्याद्दशांशं तर्पणं तथा ॥११॥

और "आकृष्णेन रजसा०" इस मंत्र से एक लक्ष जप कराकर उसके दशांश प्रमाण हवन, तर्पण तथा मार्जन करावे ॥ ११ ॥

हरिवंशश्रुतिं देवि चण्डीपाठशिवार्चनम् ।
विधिवत्कारयामास ब्राह्मणानाञ्च भोजनम् ॥१२॥

हे देवि ! हरिवंश पुराण का श्रवण करे और दुर्गापाठ

तथा शिवार्चन विधि विधानसे कराकर श्रद्धासे ब्राह्मण भोजन करावे ॥ १२ ॥

दशवर्णा तु गौर्देया शय्यादानं विशेषतः ।
एवंकृते वरारोहे वंशो भवति नान्यथा ॥
व्याधिनाशः समायाति मम वाक्यामृतं भवेत् ॥ १३ ॥

और दशवर्ण वाली गौवों का दान करके विधिवत् शय्यादान करे । ऐसा करने से अवश्य वंश की वृद्धि होती है तथा सब रोग भी नष्ट हो जाते हैं मेरा अमृत सदृश यह वचन सत्य है ॥१३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसम्वादे शतभिषानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकोनशततमोऽध्यायः ॥९९॥

निन्यानवे अध्याय समाप्त ॥ ९९ ॥

अथ शततमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

मथुरापुरिमध्ये तु शूद्र एको हि तिष्ठति ।
शाकादीनां च सततं विक्रयन्तु सदाकरोत् ॥ १ ॥

शिवजी बोले—हे देवि ! मथुरा पुरी में एक शूद्र रहता था, वह सर्वदा शाकादि का विक्रय किया करता था ॥ १ ॥

विष्णुशक्तिरतःशान्तःपुण्यात्मासाधुसम्मतः ।
सेवादास इति ख्यातस्तस्य पत्नी तु राधिका ॥ २ ॥

वह विष्णु भगवान् की भक्ति में निरत शान्तचित्त, पुण्यात्मा और साधुजनों का सेवक था, उसका नाम सेवादास और स्त्री का नाम राधिका था ॥ २ ॥

कुलाचारे रतः साधुर्द्विजसेवासु तत्परः ।
वाणिज्यं कुरुते साधुः पुरोहितधनेन च ॥ ३ ॥

और वह अपने कुलाचार के अनुसार साधुओं की सेवा और अपने पुरोहित के द्रव्य से व्यापार किया करता था ॥ ३ ॥

बहुवर्षगते देवि ! ब्रह्मणोऽपि तदागतः ।
आदरं बहुधा कृत्वा कलत्रेण तदा शिवे ! ॥ ४ ॥

हे देवि ! बहुत वर्ष बीत जाने के बाद ब्राह्मण भी आगया और बहुत आदर सत्कार करके उसकी स्त्री ने ब्राह्मणको रक्खा ॥ ४ ॥

विषं दत्तं चतुर्थेऽह्नि भोजनान्तर्विधानतः ।
न जानाति तदा साधुस्तद्वृत्तं ब्राह्मणस्य तु ॥ ५ ॥

और चौथेदिन उस ब्राह्मण के भोजन में स्त्री ने विष दे दिया, किन्तु इस वृत्तान्तको वह साधु (शूद्र) नहीं जानता था ॥ ५ ॥

मरणं वै ततो जातं ब्राह्मणस्य सुरेश्वरि ।
ब्राह्मणस्य बधे जाते हाहाकारो गृहे गृहे ॥ ६ ॥

हे सुरेश्वरि ! जब ब्राह्मण मर गया तो इस प्रकार के ब्राह्मण के वध से घर-घर में हाहाकार मच गया ॥ ६ ॥

श्रुत्वा तच्च पुरीं त्यक्त्वा प्रयागे साधुरागतः ।
देहं त्यक्त्वा तदा साधुर्हठं कृत्वा वरानने ! ॥ ७ ॥

ऐसा सुनकर अर्थात् ब्राह्मण बधको सुनकर वह साधु (शूद्र) अपनी नगरी का परित्याग कर दिया और प्रयाग में आकर हठ-पूर्वक रहकर शरीर छोड़ दिया ॥ ॥

पश्चात्तदैव सा गत्वा पत्नी प्राणस्ततोऽत्यजत् ।
प्रयागे मथुरां त्यक्त्वा तदुद्देशेन शोभने ॥ ८ ॥

बादको उसी प्रकार उसकी स्त्री भी मथुरा पुरी को छोड़कर प्रयाग में गयी और उसी उद्देशसे अपने प्राणको त्याग दिया ॥८॥

बहुवर्षसहस्राणां स्वर्गवासस्ततोऽभवत् ।
ततः पुण्यक्षये जाते मानुषत्वं ततोऽभवत् ॥ ९ ॥

मरने के बाद स्वर्ग प्राप्त हुआ और कई हजार वर्ष तक स्वर्ग में रहने के बाद जब पुण्य नष्ट हुआ तब मनुष्य शरीरको प्राप्त हुआ ॥ ९ ॥

शूद्रयोनिं विशालाक्षि देहजस्य कुले तदा ।
पुनर्विवाहिता पत्नी पूर्वजन्मप्रसङ्गतः ॥ १० ॥

तब शूद्रयोनि में आकर अपने पुत्रके ही कुलमें उत्पन्न हुआ और पूर्वजन्म वाली स्त्री संस्कार वश उससे फिर विवाही गई ॥१०॥

धनधान्यसमायुक्तो विद्यावान् कुलपूजितः ।
गौराङ्गो नीचजातीनां मतज्ञो लब्धवान् स्वयम्॥११॥

धन-धान्यसे सम्पन्न विद्या विनीत और अपने कुलमें श्रेष्ठ गौरवर्ण शरीर वाला तथा नीचजातियोंके विचारको स्वयं समझने वाला हुआ ॥ ११ ॥

पूर्वजन्मनि भो देवि ! ब्राह्मणाय विषं ददौ ।
भार्या तस्य विशालाक्षि तत्पापेनैव पातकी ॥ १२ ॥

हे देवि ! पूर्व में उसकी स्त्रीने जो ब्राह्मणको विष दे दिया था, उस पाप से वह पातकी ॥ १२ ॥

मासि पुष्पं ततस्तस्याः सन्तानं नैव जायते ।
अस्य पापस्य वै शान्तिं शृणु देवि सुशोभने॥१३॥

स्त्री मासिक धर्मवाली होती थी परन्तु सन्तान नहीं हुई हे देवि ! अब इस पाप की शान्ति सुनो ॥ १३ ॥

गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्यं च कारयेत् ।
गायत्रीजातवेदाभ्यां त्र्यम्बकेन वरानने ॥१४॥
लक्षत्रयं जपं देवि ! कारयामास यत्नतः ।
हरिवंशश्रुतिं देवि ! भार्यया सहितस्तदा ॥१५॥

अपने गृहके धन के आठवें भाग द्रव्य से पुण्य कार्य कराये।

"गायत्री" जातवेदसे तथा "त्र्यम्बक" इन मंत्रों से तीन लक्ष जप विधिसे करावे और हरिवंशको स्त्री-पुरुष दोनों सुनें ॥१४-१५॥

होमं वै कारयामास कुण्डे शुद्धे सुदारुणे ।
चतुष्कोणे विशालाक्षि योनिपल्लवशोभिते ॥१६॥

हे विशालाक्षि! चतुष्कोण सुन्दर योनि कुण्ड निर्माण कराकर जपके दशांश हवन करें ॥ १६ ॥

दशांशं विधिवद्देवि ! तर्पणं मार्जनं ततः ।
ब्राह्मणस्य ततो मूर्तिं दशपञ्चपलात्मिकाम् ॥१७॥

और शास्त्ररीति से दशांश तर्पण तथा मार्जन करावे, इसके बाद पन्द्रह पल सोने की एक ब्राह्मण की मूर्त्ति ॥ १७ ॥

विधिवत्कारयेद्देवि ! पूजयेच्चैव बुद्धिमान् ।
वस्त्रालङ्कारशय्याभिर्भूषणैर्विविधैस्तथा ॥१८॥

विधिवत् बनवाकर उसे अनेक भाँति के वस्त्र अलङ्कारादि से सुसज्जित कर पूजन करे ॥ १८ ॥

मन्त्रेणानेन देवेशि ! गन्धपुष्पैः पृथक् पृथक् ।
सर्वकारणकर्ता त्वं साक्षीभूतो जगत्त्रये ॥१९॥
पापं ब्रह्मवधं घोरं हर मे भुवनाधिप ।

हे देवेशि ! इस मंत्र के द्वारा और गन्ध पुष्पादि से पृथक्-पृथक् पूजन करके प्रार्थना के साथ कहे कि आप ही सब कार्य कारणों के कर्त्ता हैं और तीनों लोकों के साक्षी अर्थात् द्रष्टा हैं ॥ १९ ॥

मंत्र—ॐ चक्रधराय नमः । ॐ त्र्यम्बकाय नमः ॐ शङ्खहस्ताय नमः । ॐ सनकसनत्कुमारसनन्दनसनातनेभ्यो नमः ॥ २० ॥

हे भुवनाधिप (त्रिलोकेश) ब्राह्मण वध रूपी मेरे घोर पापका हरण करें ॥ २० ॥

...नयामास विविधैर्मोदकैश्च फलैरपि ।
...मां पूजितां तान्तु सुविप्राय प्रदापयेत् ॥२१॥

इसके बाद अनेक प्रकार के मिष्ठान्नों तथा फलों से प्रतिमा का पूजन करके उसे कर्मनिष्ठ ब्राह्मण को दे देवे ॥ २१ ॥

दशवर्णां सवृषभां पट्टवस्त्रविभूषिताम् ।
दद्याद्विप्राय विदुषे श्रोत्रियाय तपस्विने ॥२२॥

और वस्त्रादि से विभूषित एक बैल के साथ दश प्रकार की गौवों का दान वेदज्ञ श्रोत्रिय तपस्वी ब्राह्मण को देवे ॥ २२ ॥

सप्तम्यां रविवारे च व्रतं कुर्याद्विधानतः ।
एवं करोति देवेशि ! पुत्रयुग्मं प्रजायते ॥२३॥
कन्या नैव वरारोहे ! रोगं सर्वं विनश्यति ॥२४॥

और रवि युक्ता सप्तमी को विधिवत् व्रत करे यदि इस प्रकार के विधान को करे तो दो पुत्र उत्पन्न हों और कन्या न हों तथा सब रोग भी नष्ट हो जायँ ॥ २३-२४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे पूर्वाभाद्रपदनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नामशततमोऽध्यायः ॥ १०० ॥

सौवाँ अध्याय समाप्त ॥ १०० ॥

अथैकोत्तरशततमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

धर्मेण जायते पुत्रो धर्मेण लभते श्रियम् ।
धर्मेण व्याधिनाशः स्यात्तस्माद्धर्मपरो भव ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं कि धर्म से पुत्र उत्पन्न होता है, और धर्मसेही लक्ष्मी की प्राप्ति होती है और धर्म से ही व्याधि भी नष्ट होती है. इसलिये सर्वदा धर्म का ही आचरण करना चाहिये ॥ १ ॥

कांपिल्ये नगरे देवि ब्राह्मणस्तत्र तिष्ठति ।
स वेदपाठनिरतो धनाढ्यश्च बहूद्यमी ॥ २ ॥

हे देवि ! कांपिल्य नगर में एक वेदपाठी ब्राह्मण निवास करता था । वह धनिक तथा बहुत उद्यमी था ॥ २ ॥

तस्य पत्नी वरारोहे ! पतिसेवासु तत्परा ।
एकदा चागता कन्या ब्राह्मणस्य किलानघे !॥ ३ ॥

और उसकी स्त्री जो थी वह पति सेवा परायणा थी, एक समय उसके यहाँ ब्राह्मणकी एक कन्या आई ॥ ३ ॥

पुत्रेण सह देवेशि ! चादरस्तेन वै कृतः ।
ततो बहुदिने जाते तस्य स्वर्णं च चोरितम् ॥ ४ ॥

हे देवेशि ! उसने उसके पुत्र के सहित दोनों का बड़ा आदर सत्कार किया और बहुत दिनों बाद उसके सुवर्ण की चोरी हो गई ४

कन्यापुत्रेण स्वर्णं हि हृतं चेति तदा शिवे !।
वदन्ति बहवस्तत्र जनास्तु ब्राह्मणं प्रति ॥ ५ ॥

हे शिवे ! तब सब लोगों ने उस ब्राह्मण के प्रति कहा कि इस कन्या के पुत्र ने ही सब धन चोरी किया है ॥ ५ ॥

ततो रोषपरीतात्मा पौत्रो भवति वै शिवे ।
विषं भुक्तं तदा तेन बहुरोषाकुलेन तु ॥ ६ ॥

तब उस ब्राह्मणके पौत्र (नाती) ने क्रोधसे संतप्त होकर विष खालिया ॥ ६ ॥

मरणं तस्य वै जातं पौत्रस्यैव वरानने ।
ततो बहुदिने जाते ब्राह्मणस्य तदा मृतिः ॥ ७ ॥

हे वरानने । जिससे कि उस ब्राह्मण के पौत्र की मृत्यु होगई तदनन्तर बहुत दिनों बाद उस ब्राह्मण की भी मृत्यु हो गई ॥७॥

तस्य पत्नी सती जाता सत्यलोकेऽवसत्तदा ।

ततः पुण्यक्षये जाते मर्त्यलोके सुरेश्वरि ॥ ८ ॥
मानुषत्वं ततो जातमयोध्यानगरे शिवे ।
धनधान्यसमायुक्तो राजमन्त्री विचक्षणः ॥ ९ ॥
पौत्रस्तस्य मृतो देवि तदुद्देशेन भो शिवे ॥१०॥

तब उसकी स्त्री भी सती हो गई और उसके प्रभाव से सत्य लोक प्राप्त हुआ, जब पुण्य नष्ट हुआ तब मर्त्यलोक में आकर मनुष्य शरीर से अयोध्या पुरी में जन्म लिया और धनधान्य से युक्त चतुर तथा-मंत्री हुआ उसी के कारण उसके पौत्र (नाती) की मृत्यु हुई थी ॥ ८-९-१० ॥

अतः पुत्रो न जायेत कन्या चैव प्रजायते ।
शरीरे शततं चोग्रो ज्वरो जातः सुदारुणः ॥११॥

इसलिये उसे पुत्रकी प्राप्ति नहीं हुई और केवल कन्याही उत्पन्न होती थी तथा शरीर में सर्वदा उग्र ज्वर बना रहता था ॥११॥

शत्रवो बहवः सन्ति न सौख्यं लभते क्वचित् ।
पुण्यं शृणु वरारोहे पूर्वपापस्य संक्षयः ॥१२॥

बहुतशत्रुओंके हो जानेसे उसेसुख भीकभी नहींमिला, अब उस पुण्य को सुनो जिससे पूर्वके किये हुए पापोंका क्षय हो ॥१२॥

गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ।
गायत्रीत्र्यम्बकं चेति श्रीश्चते इति ऋक्त्रयम् ॥१३॥

अपने गृहके धनके छठवेंभाग द्रव्यसे पुण्य कार्य कराये, इसके बाद "गायत्री" त्र्यम्बक० और "श्रीश्चते" इन तीनों मंत्रों से॥१३॥

प्रतिमन्त्रं जपेल्लक्षं दशांशं हवनं ततः ।
दशांशतर्पणं देवि ! मार्जनं तद्दशांशतः ॥१४॥

हे देवि ! प्रति मंत्र से एक लक्ष जप कराकर उसके दशांश प्रमाण हवन, तर्पण तथा मार्जन करावे ॥ १४ ॥

गोदानं तद्दशांशं च तद्दशांशं च भोजयेत् ।
ब्राह्मणांश्चैव देवेशि श्रद्धाभक्तिसमन्वितः ॥१५॥

और दशांश गोदान तथा दशांश ब्राह्मण भोजन श्रद्धा पूर्वक करावे ॥ १५ ॥

कूष्माण्डं नारिकेलं च पञ्चरत्नसमन्वितम् ।
गङ्गामध्ये प्रदातव्यं पूर्वपापविशुद्धये ॥१६॥

और पूर्व पाप शुद्धि के लिये कूष्माण्ड (सफेद कुम्हड़ा) या नारियल में पञ्चरत्न भरकर गंगा के मध्य में दान करे ॥ १६ ॥

वृषभस्तरुणः शुभ्रो घण्टाचामरशोभितः ।
ब्राह्मणाय प्रदातव्यः शय्यादानं विशेषतः ॥१७॥

इसके अनन्तर घण्टा तथा चामरसे युक्त श्वेत रंगका एक तरुण बैल ब्राह्मणको दान दे बादको विधि से शय्या दान करे ॥१७॥

एवं कृते वरारोहे ! शीघ्रं पुत्रः प्रजायते ।
रोगस्यैव निवृत्तिः स्याज्ज्वरस्तस्य न जायते ॥१८॥

हे वरारोहे ! ऐसा करनेसे शीघ्र ही पुत्र की प्राप्ति तथा रोगों की निवृत्ति हो जाती है और ज्वर कभी नहीं आता ॥ १८ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे पूर्वाभाद्रपदनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकशततमोऽध्यायः ॥ १०१ ॥

एक सौ एक अध्याय समाप्त ॥ १०१ ॥

अथद्वि-उत्तरशततमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

गांधारनगरे देवि ! ब्राह्मणो वसति प्रिये !
दयाशर्मा इति ख्यातो मद्यपानरतः सदा ॥ १ ॥

शिवजी बोले—हे प्रिये! गान्धार नगरमें दयाशर्मा नाम का एक ब्राह्मण रहता था जो कि सदैव मद्यपान किया करताथा ॥१॥

वेश्यासुरतसंतृप्तश्चौरकर्मरतः सदा ।
म्लेच्छाचाररतःसोऽपि म्लेच्छान्नं भुज्यते सदा ॥२॥

और वेश्यागमन, चोरी इन व्यसनोंमें नित्य रह कर म्लेच्छोंका सा आचार हो गया था और उनका ही अन्न खाया करता था ॥ २ ॥

धनं तु सञ्चितं तेन म्लेच्छभार्यासु तत्परः ।
श्राद्धकर्मविहीनश्च पितुर्मातुश्च निन्दकः ॥ ३ ॥

उसने बहुत सा धन सञ्चित किया और म्लेच्छों की स्त्रियोंके साथ रमण भी किया तथा श्राद्ध कर्म से हीन रहकर माता पिता की निन्दा करता था ॥ ३ ॥

एवं बहुगते काले मरणं तस्य जायते ।
महारौद्रं च नामानं नरकं नाम दारुणम् ॥ ४ ॥
निक्षिप्तः शृङ्खलैर्बद्ध्वा यमदूतैर्यमाज्ञया ॥ ५ ॥

इस प्रकार बहुत सा समय बीत जानेपर उसकी मृत्यु होगई, और यमाज्ञा से उनके दूतोंने शृङ्खला (बेड़ी) से बाँध कर महारौद्र नामक ऐसे घोर नरक में छोड़ दिया ॥ ४-५ ॥

नरकान्निःसृतो देवि ! गोधायोनिरभूत्पुरा ।
सरटस्य पुनर्योनिं चटकत्वं ततोऽभवत् ॥ ६ ॥

हे देवि ! फिर नरक से निकलने के बाद गोधा (गोह) गिरगिट, चटक क्रमशः इन योनियों में घूमता हुआ ॥ ६ ॥

मानुषत्वं ततो लेभे मध्यदेशे वरानने ! ।
धनधान्यसमायुक्तो वंशहीनो महेश्वरि ॥ ७ ॥

फिर मध्य देश में मनुष्य शरीर धारण किया और धनधान्य से सम्पन्न लेकिन वंशहीन हुआ ॥ ७ ॥

पूर्वजन्मनि देवेशि! ब्राह्मणत्वं यतोऽत्यजत् ।
तत्पापेनैव भो देवि ! पुत्रस्य मरणं मुहुः ॥ ८ ॥

हे देवेशि ! वह पूर्वजन्ममें ब्राह्मणत्वसे अर्थात् ब्रह्म कर्मसे च्युत हो गया था, अतः उसपापकेदोषसे बराबरउसकेपुत्र मरते गये ॥८॥

अनेन पितरौ वृद्धौ त्यक्तौ दुर्मतिना यतः ।
अतः शरीरे वै रोगः काकवन्ध्या सहव्रणा ॥ ९ ॥

और इस दुर्बुद्धि ने वृद्ध अपने माता-पिताको छोड़ दिया था इसलिये उसके शरीरमें रोग और स्त्री काकवन्ध्या होकर व्रणवाली होगई ॥ ९ ॥

शान्तिं शृणु वरारोहे यतः पुत्रो हि जायते ।
गृविहत्ताष्टमं भागं पुण्यकार्ये च कारयेत् ॥१०॥
पलपञ्चसुवर्णस्य गणाध्यक्षस्य चाकृतिम् ।
कृत्वा वै पूजयेद्देवि ! मन्त्रेणानेन सुव्रते ॥११॥

हे वरारोहे ! जिसको करनेसे पुत्र प्राप्तहो वह शान्ति (मुझसे) सुनो, गृहके धनका आठवाँ भाग द्रव्य पुण्य कार्यमें व्यय करे और पन्द्रह पल सुवर्णकी एक प्रतिमा गणेशजीकी बनवाकर अग्रिम लिखित मंत्रसे उसका पूजन करे ॥ १०-११ ॥

गणाध्यक्ष सुरेशान सर्वोपद्रवनाशन ।
मम पूर्वं कृतं पापं हर दुःखनिवारण ॥१२॥

हे गणाध्यक्ष ! देवताओंमें श्रेष्ठ, सर्वविघ्न विनाशन सब दुखों का हरण करनेवाले पूर्व कृत मेरे पापोंका शमन करें ॥ १२ ॥

एवं कृत्वा विधानं च ब्रह्मणाय समर्पयेत् ।
ततो भवति वंशश्च व्याधिनाशश्च जायते ॥१३॥

इस प्रकारके विधानको करके उस पूजित प्रतिमाको ब्राह्मणको दे देवे, तब वंशकी वृद्धि और व्याधियोंका नाश होता है ॥१३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे पूर्वाभाद्रपदनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम द्व्यधिकशततमोऽध्यायः ॥१०२॥

एकसौ दो अध्याय समाप्त ॥ १०२ ॥

अथ त्र्यधिकशततमोऽध्यायः ।

शिव उवाच

वैदंडे च पुरे देवि ! लुब्धको वसति प्रिये ।
सेमानाम्ना स विख्यातस्तस्य भार्यातिनिष्ठुरा ॥१॥

शिवजी बोले—हे प्रिये ! वैदण्ड नामक नगरमें एक लुब्धक (व्याध) रहता था और वह सेमा नाम करके प्रसिद्ध था तथा उसकी स्त्री अत्यन्त निष्ठुर थी ॥ १ ॥

प्रत्यहं मृगमांसेन व्ययं कुर्याद्दिने दिने ।
एवं सर्वं वयो जातं लुब्धकस्य तदा प्रिये ॥ २ ॥
मरणं तस्य वै जातं यमदूतैर्यमाज्ञया ।
निक्षिप्तो नरके घोरे षष्टिवर्षसहस्रकम् ॥ ३ ॥

और मृगोंके मांससे ही वह अपना जीवन नित्य बिताता था, इस तरहसे सब अवस्था बीत जानेके बाद उसका मरण हो गया और यमाज्ञासे उनके दूतोंने घोर नरकमें लेजाकर छोड़ दिया और साठ हजार वर्ष तक ॥ २-३ ॥

भुक्तं च विविधं दुःखं कृमिसूचिमुखैर्युतम् ।
मानुषत्वं ततो जातं धनधान्यसमन्वितम् ॥ ४ ॥

वह नरकके अनेक प्रकारके कष्टोंको सूची मुख अर्थात् सूईके समान मुखवाले कीटाणुओं द्वारा संतप्त हो और कष्ट भोगकर फिर धनादिसे युक्त मनुष्य योनिमें उत्पन्न हुआ ॥ ४ ॥

पुत्राणां मरणं देवि जायते हि विपाकतः ।
पलपञ्चसुवर्णस्य माल्यं मेरुयुतं तु वै ॥ ५ ॥

हे देवि ! पूर्वकर्मविपाक से ही पुत्रों का मरण होता है, पाँच पल प्रमाण सुवर्णकी सुमेरू सहित एक माला बनवाये ॥५॥

ब्राह्मणाय ततो दद्याच्छय्यादानं विशेषतः ।
एवंकृते वरारोहे पुत्रस्तस्य च जीवति ॥ ६ ॥

और उसे ब्राह्मणको दान दे देवे, फिर विधिसे शय्याका दान करे, इस प्रकारके विधानको यदि करे तो उसके पुत्र जीवित रहें ॥ ६ ॥

व्याधयः संक्षयं यान्ति काकवन्ध्या लभेत्सुतम् ॥७॥

और सब व्याधियोंका नाश हो जाय तथा काकवन्ध्या स्त्री भी पुत्र प्राप्त करे ॥ ७ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे पूर्वाभाद्रपदनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम त्र्यधिकशततमोऽध्यायः ॥१०३॥

एक सौ तीन अध्याय समाप्त ॥१०३॥

अथ चतुरधिकशततमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

श्रीपुरे नगरे देवि द्विज एकोऽवसत्पुरा ।
एकदा तस्य वै गेहे गुरुपुत्रः समागतः ॥ १ ॥

शिवजी ने कहा कि—हे देवि ! प्राचीन समय में श्रीपुर नामक नगरमें एक ब्राह्मण रहता था । एक समय उसके घर उसके गुरुका पुत्र आया ॥ १ ॥

आदरं बहुधा कृत्वा मासमेकं तदा खलु ।
गुरुपुत्रस्य घातं हि कृत्वा द्रव्यस्य लोभतः ॥ २ ॥

और एक मास तक उसे बहुत आदर सत्कारके साथ रखा बादको द्रव्यके लोभ वश गुरुके पुत्रका वध कर दिया ॥ २ ॥

तेन पापेन भो देवि ! महापापयुतो नरः ।
पुत्रहीनश्च देवेशि जायते धनवर्जितः ॥ ३ ॥

हे देवि ! उस पापके दोषसे वह मनुष्य महापातकी पुत्र रहित और धनहीन हुआ ॥ ३ ॥

वंशगोपालमन्त्रं वै गायत्रीमन्त्रमेव च ।
हरिवंशश्रवणं देवि कुर्याच्च विधिपूर्वकम् ॥ ४ ॥

यदि गोपाल सन्तान मंत्र और गायत्रीका जप तथा विधिसे हरिवंशका श्रवण करे ॥ ४ ॥

तुलसीवाटिकां कृत्वा तन्मूले विष्णुपूजनम् ।
दशवर्णा ततो दद्यात्पूर्वपापप्रणाशिनीम् ॥ ५ ॥

और तुलसीके वृक्षका आरोपण कर उसके मूलमें विष्णु भगवानका पूजन तथा दश वर्णकी गौवोंका दान करे तो पूर्व कृत पाप नष्ट हों ॥ ५ ॥

स्वर्णनिष्कस्ततो दद्याद्दशगोदानमेव च ।
एवंकृते वरारोहे ! वंशो भवति नान्यथा ॥ ६ ॥

एक निष्क प्रमाण सुवर्णका दान तथा दश गोदान करे, ऐसा करनेसे अवश्य वंशकी वृद्धि होती है ॥ ६ ॥

व्याधिनाशो भवेद्देवि ! सत्यं सत्यं न संशयः ॥ ७ ॥

हे देवि ! और सब रोग भी नष्ट हो जायें यह मेरा कथन सत्य जानना इसमें जरासा भी सन्देह नहीं है ॥ ७ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे उत्तराभाद्रपदनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चतुरधिकशततमोऽध्यायः ॥१०४॥

एक सौ चार अध्याय समाप्त ॥१०४॥

अथ पञ्चाधिकशततमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

मणिकाख्यपुरे रम्ये वसन्ति बहवो जनाः ।
लवणकारो वसत्येको नित्यं लवणविक्रयी ॥ १ ॥

शिवजी बोले कि—मणिपुर नामक एक रमणीक नगर में बहुत लोग रहते थे और उस नगर में एक नमक बनाने वाला (नोनियाँ) रहता था जो कि नित्य नमक बनाकर बेचता था ॥१॥

ब्राह्मणीगमनं तेन कृतं शूद्रेण वै शिवे ! ।
तेन पापेन भो देवि ! वंशहीनश्च जायते ॥ २ ॥

हे शिवे ! उस शूद्र ने एक ब्राह्मणी के संग में गमन किया जिस पापसे वह सन्तान रहित हो गया ॥ २ ॥

व्याधियुक्तो महेशानि ! पीडा चाङ्गेषु जायते ।
शान्तिं शृणु महेशानि ! येन पापनिवर्तनम् ॥ ३ ॥

वह रोग ग्रस्त हो गया जिससे कि सर्वाङ्ग में पीड़ा होने लगी अब उसकी शान्तिको सुनो जिससे पापकी निवृत्ति हो ॥३॥

गृहवित्ताष्टमैर्भागैर्ब्राह्मणं तोषयेद्यदि ।
हरिवंशश्रवणं देवि ! विधिवद्यदि पार्वति ॥ ४ ॥

अपने घरके धनका आठवाँ भाग द्रव्य ब्राह्मणको दान देकर सन्तुष्ट करे—बादमें विधि से हरिवंशका श्रवण करे ॥ ४ ॥

ब्राह्मणान्भोजयेद्देवि ! कूष्माण्डं चैव दापयेत् ।
एवंकृते वरारोहे ! पुत्रो भवति नान्यथा ॥ ५ ॥

हे देवि ! और ब्राह्मणको भोजन कराकर कुम्हड़ेका दान करे ऐसा करने से निश्चय पुत्रोत्पत्ति होती है ॥ ५ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे उत्तराभाद्रपदनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामपञ्चाधिकशततमोऽध्यायः ॥१०५॥

एक सौ पाँच अध्याय समाप्त ॥ १०५ ॥

अथ षडधिकशततमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अलकाख्यपुरे देवि क्षत्रियो वसति प्रिये ।
चन्द्रवर्मेति विख्यातो भार्या देवीतिसंज्ञिका ॥ १ ॥

शिवजी ने कहा—हे देवि ! अलकापुरी में एक क्षत्रिय रहता था उसका नाम चन्द्रवर्मा और उसकी स्त्री का नाम देवी था ॥ १ ॥

क्षत्रधर्मरतो नित्यं धनाढ्यः शूरसम्मतः ।
कृष्णदास इति ख्यातो विप्रस्तस्य पुरोहित ॥ २ ॥

वह सर्वदा अपने धर्म का पालन करने वाला धनिक और शूर वीर था, उसका पुरोहित कृष्णदास नाम का एक ब्राह्मण था ॥२॥

क्रोधतः क्षत्रियस्यापि बभूव मरणं यतः ।
पुरोहितस्य विप्रस्य सप्ताहाच्च सुतक्षयः ॥ ३ ॥

एक समय युद्ध में क्षत्री के क्रोध से उस पुरोहित ब्राह्मण की मृत्यु हो गई और सात दिन के बाद ही उसका पुत्र भी मर गया ॥३॥

व्याधिपीडा गुल्मजालैः पीड्यते सततं हि सः ।
गायत्रीमूलमन्त्रेण पञ्चलक्षजपञ्चरेत् ॥ ४ ॥

तब उस पाप के दोष से उत्पन्न हुई व्याधि गुल्मजाल (फोड़ा वगैरह) से वह सर्वदा पीडित रहता था, अतः इसके शान्त्यर्थ गायत्री मूल से पाँच लाख जप करावे ॥ ४ ॥

गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ।
ब्राह्मणस्य ततो देवि प्रतिमां कारयेद् बुधः ॥ ५ ॥

और घर के धन का छठवाँ भाग द्रव्य धर्मार्थ व्यय करे, इसके बाद एक ब्राह्मण की प्रतिमा बनवा कर ॥ ५ ॥

पूजयित्वा ब्राह्मणाय दत्त्वा पापनिवृत्तये ।
पलपञ्चसुवर्णस्य दद्याद्वै ब्राह्मणाय च ॥ ६ ॥

विधिवत् उसका पूजनकरके पाप निवृत्ति के लिये ब्राह्मणकोदान देवे और उसके साथ में पाँच पल सोना ब्राह्मण को और देवे ॥६॥

काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं मृतवत्सा सुपुत्रिणी ॥ ७ ॥

यदि इस प्रकार के विधान को करे तो काकवन्ध्या और मृतवत्सा ये दोनों पुत्रवती होवें ॥ ७ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसम्वादे उत्तराभाद्रपदनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्त-कथनं नाम षडधिकशततमोऽध्यायः ॥१०६॥

अध्याय एक सौ छः समाप्त ॥१०६॥

अथ सप्ताधिकशततमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अयोध्यानिकटे देवि ! विप्रश्चैकोऽवसत्पुरा ।
वैष्णवोक्तप्रकारेण दीक्षां प्राप्तो हि गर्वितः ॥ १ ॥

शिवजी बोले कि—हे देवि ! पहिले अयोध्यापुरी के सन्निकट एक ब्राह्मण रहता था, वह वैष्णव मत के नियमानुसार दीक्षा प्राप्त करके अत्यन्त गर्वित हो गया था ॥ १ ॥

वेदनिन्दारतोऽसाधुः श्राद्धादिविधिवर्जितः ।
शिवभक्तिरतानां च नाभिवादं समाचरेत् ॥ २ ॥

वह सदैव वेदों की निन्दा में रत असाधु श्राद्धादि विधि से रहित था, यहाँ तक कि वह शिव भक्त याने शैवों को नमस्कार भी नहीं करता था ॥ २ ॥

विप्रद्रोहरतश्चैव हरिमन्दिरशोभितः ।
एकदा तस्य गेहे तु चागतः पथिकः प्रिये ॥ ३ ॥

वह ब्राह्मणों से सदा द्रोह करता और हरिमन्दिरसे सुशोभित था, एक समय उसके यहाँ घर पर एक पथिक आया ॥ ३ ॥

रुद्राक्षालङ्कृतोदान्तस्तस्मै क्रूरमभाषत ।
विषमाहारपानादौ दत्तं तेन द्विजन्मने ॥ ४ ॥

वह रुद्राक्ष की माला धारण किये हुए संयमी और जितेन्द्रिय था, जिसको उसने कटुवचन कहा और भोजनादि में विष दे दिया॥४॥

रात्रौ तद्द्रव्यलोभेन घटं कृत्वा त्वपाहरत् ।
कूपमध्ये तु तं विप्रं पापीयान् वैष्णवाधमः ॥ ५ ॥

उसके द्रव्य के लोभ वश होकर रात्रिके समय उस ब्राह्मण को उस पापी, अधम, वैष्णव ने घड़े के समान फाँस बाँधकर कुआँ में छोड़ दिया ॥ ५ ॥

कालान्तरे मृतिर्जाता तस्य साधोर्दुरात्मनः ।
विष्णुनाम स्मरेन्नित्यं वैकुण्ठे वासमाप्तवान् ॥ ६ ॥

बाद को कालान्तर में उस दुरात्मा साधु की भी मृत्यु हो गई और वह नित्य विष्णु भगवान् के नामका स्मरण किया करता था इसलिये उसको वैकुण्ठ प्राप्त हुआ ॥ ६ ॥

क्षीणे पुण्ये ततो देवि विड्भक्षो ग्रामशूकरः ।
ततो मनुष्ययोनिश्च दृश्यते पुत्रवर्जितः ॥ ७ ॥
रोगवानल्पकीर्तिश्च स एव सुरसुन्दरि ।
अतः शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणुष्व हरवल्लभे ॥ ८ ॥

हे देवि ! फिर पुण्य नष्ट होजाने के बाद वह मलादि को खाने वाला ग्राम शूकर हुआ, उसके बाद फिर मनुष्य योनि में जन्म लेकर पुत्र रहित, रोगी और अल्प यशस्वी हुआ । अतः अब उसकी शान्ति कहता हूँ तुम सुनो ॥ ७–८ ॥

लक्षमुद्रां ब्राह्मणाय दत्त्वा काश्यास्तु सेवनम् ।
ब्रह्मचर्यरतो नित्यं ततो मुच्येत पातकात् ॥ ६ ॥

ब्राह्मणको एक लक्ष रुपयोंका दान देकर काशीवास करे, और नित्य ब्रह्मचर्यका पालन करता हुआ रहे तब पापोंसेछुटकारा हो जाय ॥६॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे उत्तराभाद्रपदनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम सप्ताधिकशततमोऽध्यायः ॥१०७॥

अध्याय एक सौ सात समाप्त ॥ १२७ ॥

अथाष्टाधिकशततमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

मगधे विषये देवि लुब्धको वसति प्रिये ।
प्रत्यहं मृगमांसेन व्ययं कुर्यादि्दने दिने ॥ १ ॥

शिवजी बोले—हे देवि ! मगध देश का यह वर्णन है कि वहाँ पर एक व्याध रहता था और मृगों के मांससे ही वह अपना नित्य जीवन बिताता था ॥ १ ॥

एवं सर्वं वयो जातं वृद्धे सति वरानने ।
मरणं तस्य वै यातं यमदूतैर्यमाज्ञया ॥ २ ॥
निःक्षिप्तो नरके घोरे षष्टिवर्षसहस्रकम् ।
भुक्तं विविधजं दुःखं कृमिसूचिमुखैर्युतम् ॥ ३ ॥

हे वरानने ! इसीप्रकार उसकी समस्त आयु बीत कर जबवृद्धावस्था आई तब उसकी मृत्यु हो गई और यमाज्ञा से उनके दूतों ने घोर नरकमें ले जाकर छोड़ दिया और सात हजार वर्ष तक वहाँ अनेक प्रकार के दुःखों को सूची मुख वाले कृमियों द्वारा भोगा ॥२–३॥

नरकान्निःसृतो देवि ! मृगत्वं जायते खलु ।
शृगालस्य ततो योनिं छागयोनिस्ततोऽभवत् ॥ ४ ॥

हे देवि ! जब नरक से बाहर आया तो मृगकी योनि प्राप्त किया उसके बाद शृगाल की योनि फिर बाद को उसने बकरे की योनि प्राप्त की ॥ ४ ॥

पूर्वजन्मनि देवेशि जलदानं च वै कृतम् ।
मानुषत्वं ततो जातं धनधान्यसमन्वितम् ॥ ५ ॥
धनाढ्यत्वं पुनर्जातो ह्यपुत्रो मृगताडनात् ।
पुत्राश्च बहवो जातास्तेषां मृत्युः प्रजायते ॥ ६ ॥

इसके बाद फिर धन धान्य से युक्त मनुष्य शरीर धारण किया, पूर्वजन्म में उसने जलदान किया था जिससे कि धनाढ्य और बहुत से मृगों के बध करने के कारण सन्तान रहित हुआ, बाद में कई एक पुत्र हुए किन्तु उनकी मृत्यु होती गयी ॥५-६॥

रोगाणां च तथोत्पत्तिर्ज्वरश्चैव पुनः पुनः ।
शान्तिं शृणु वरारोहे पूर्वपापप्रणाशिनीम् ॥ ७ ॥

रोगों की उत्पत्ति तथा बराबर ज्वर बना रहता था अब पूर्व पाप नाशक इसकी शान्ति सुनो ॥ ७ ॥

गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ।
गायत्र्या वा शिवायेति जातवेदेति वै पुनः ॥ ८ ॥
दशायुतजपं कुर्याद्दशांशहवनं ततः ।
दशांशं तर्पणं देवि ! मार्जनं तद्दशांशतः ॥ ९ ॥

अपने गृहके धन का छठवाँ भाग द्रव्य पुण्य कार्यमें व्यय करे और गायत्री अथवा शिव मंत्रसे या जातवेदसे इन मंत्रोंकाएकलाख जप कराकर उसके दशांश हवन, तर्पण तथा मार्जन करावे॥८-९॥

ततो वै भोजयेद्भक्त्या द्विजान् देवि ! दशांशतः ।
दशवर्णां ततो दद्याद् वृषभं भूषितं शुभम् ॥१०॥

हे देवि ! उसके दशांश प्रमाण श्रद्धासे ब्राह्मणोंको भोजन करावे और एक वृषके साथ विभूषित करके दश वर्णवाली गौवोंका दान देवे ॥ १० ॥

पलपञ्चसुवर्णस्य माल्यं मेरुयुतं तु वै ।
ब्राह्मणाय ततो दद्याच्छय्यादानमनन्तरम् ॥११॥

और पाँच पल सुवर्णकी एक माला सुमेरु के सहित बनवाकर ब्राह्मण को दान देकर विधिसे शय्या दान दे ॥ ११ ॥

एवंकृते वरारोहे पुत्रः खलु प्रजायते ।
व्याधयः सङ्क्षयं यान्ति काकवन्ध्या लभेत्सुतम् ।१२।

हे वरारोहे ! इस प्रकार के कहे हुए विधि-विधान को करने से अवश्य पुत्र प्राप्त हो और सब रोग दूर होकर काकवन्ध्या को भी पुत्र प्राप्त होवे ॥ १२ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे
रेवतीनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं
नामाष्टाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०८ ॥

एकसौ आठ अध्याय समाप्त ॥ १०८ ॥

अथ नवाधिकशततमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

श्रीपुरे नगरे देवि ! द्विज एकोऽवसत्पुरा ।
पुत्रपौत्रयुतो देवि ! धन-धान्यसमन्वितः ॥ १ ॥

शिवजी ने कहा—हे देवि ! प्राचीन समय श्रीपुरनगरमें एक ब्राह्मण रहता था, वह पुत्रादि से युत और धन से सम्पन्न था ॥१॥

वैश्यकर्मरतो नित्यं क्रयविक्रयतत्परः ।
महिषीं वृषभं वस्त्रं चामरं गजवाजिनौ ॥ २ ॥

वह वैश्य वृत्तिमें प्रवृत्त होकर सर्वदा भैंस, बैल, वस्त्र, चामर, होथी, घोड़ा इनके क्रय-विक्रयादि व्यापार को करता था ॥ २ ॥

प्रत्यहं विक्रयं कृत्वा कृतश्च धनसङ्ग्रहः ।
एकदा तस्य वै गेहे गुरुपुत्रः समागतः ॥ ३ ॥

वह नित्य प्रति इनको वेंचकर वहुत सा धन भी संग्रह कर लिया था एक समय उसके यहाँ घरपर उसके गुरु का पुत्र आया ॥३॥

आदरं बहुधा कृत्वा मासे याते ततः शिवे ।
गमनं च हरिद्वारे स्नानार्थं कृतवांस्तथा ॥ ४ ॥

हे शिवे ! उसका वहुत आदर सत्कार किया सौर एक मास बीत जाने पर वह स्नान करने के लिये हरिद्वार चला गया ॥४॥

गुरुपुत्रेण भो देवि ! स्वर्णमूर्त्तिद्वयं तथा ।
ब्राह्मणाय तु दत्तं वै ततो वै गमनं कृतम् ॥ ५ ॥

सोने की वनी हुई दो मूर्त्तियोंको उस ब्राह्मण के यहाँ ही धरोहर रूप में रख दिया ॥ ५ ॥

हरिद्वारं ततो गत्वा तत्र प्राणमथात्यजत् ।
मूर्त्तिद्वयं गुरोश्चैव विक्रीतं तद्व्ययः कृतः ॥ ६ ॥

फिर हरिद्वार में ही रहकर अपने शरीर का परित्याग कर दिया और बादको उस ब्राह्मण ने गुरुपुत्र की दी हुई उन मूर्त्तियों को वेचकर खर्च कर दिया ॥ ६ ॥

एवं बहुगते काले मरणं ब्राह्मणस्य च ।
यमाज्ञया महादूतैर्नरके नामकर्दमे ॥ ७ ॥

इस तरह वहुत दिन बीत जानेके वाद उस ब्राह्मण की भी मृत्यु हो गई और यमाज्ञासे उनके दूतोंने उसे लेजाकर कर्दम नामक नरकमें ॥ ७ ॥

निःक्षिप्तो वै ततो देवि षष्टिवर्षसहस्रकम् ।
नरकान्निःसृतो देवि व्याघ्रयोनिस्ततोऽभवत् ॥ ८ ॥

छोड़ दिया और साठ हजार वर्ष तक नरक में रहने के बाद जब नरकसे उद्धार हुआ तब बाघकी योनिमें जाकर जन्म लिया ।।८।।

तीर्थे पुण्यतमे देवि कोशलायां सुरेश्वरि ।
बिडालस्य ततो योनिं मानुषत्वं ततोऽभवत् ।। ९ ।।

हे देवि ! उसके बाद फिर पुनीत और उत्तम कोशलपुरीमें बिड़ाल (बिल्ली)कीयोनिमेंउत्पन्नहुआ, फिरबादकोमनुष्य शरीर पाया ।।९।।

ब्राह्मणस्य कुले जन्म ज्ञानवान् प्रियदर्शनः ।
देवताराधने प्रीतिः परस्त्रीलम्पटस्तथा ।।१०।।

ज्ञान युक्त सुन्दर शरीर से ब्राह्मण के कुल में जन्म लिया । किन्तु देवताओं की आराधनामें प्रेम होते हुए परस्त्री से भी प्रेम करता था ।। १० ।।

तस्यापत्यत्रयं देवि ! कन्यका पुत्रकौ तथा ।
तेषां वै मरणं जातं पुनः पुत्रो न जायते ।।११।।

हे देवि ! उसे तीन सन्तान एक कन्या और दो पुत्र हुए परन्तु उन सबकीमृत्यु हो जानेके बाद फिर दूसरा कोई पुत्र नहीं हुआ।११।

काकवन्ध्या भवेद्भार्या गौरांगी सुन्दरी तु सा ।
तन्वङ्गी दीर्घकेशी च स्वपतौ प्रियभाषिणी ।।१२।।

और अपने पतिसे प्रिय बोलने वाली, सूक्ष्म और सुन्दर शरीर वाली बड़े केश तथा गौरवर्णकी उसकी स्त्री काकवन्ध्या होगई।।१२।।

तस्य पापक्षयं वक्ष्ये पुनः पुत्रो यतो भवेत् ।
हरिवंशश्रुतिं कुर्याद् गोपालस्य तु कीर्तनम् ।।१३।।

अब उसके पापक्षय की उस शान्तिको कहता हूँ, जिससे कि पुत्रोत्पन्न हो । इसके लिये हरिवंश पुराणका श्रवण करे और श्रीकृष्णजी का कीर्तन करे ।। १३ ।।

वंशगोपालमन्त्रस्य गायत्रीमन्त्रकस्य च ।
लक्षद्वयं वरारोहे जपं वै कारयेत्सुधीः ॥१४॥

हे वरारोहे ! और सन्तान गोपाल तथा गायत्री मत्रं का दो लक्ष जप अच्छे पण्डित से करावे ।। १४ ॥

हवनं तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा ।
तुलसीवाटिकां कृत्वा तन्मूले विष्णुपूजनम् ॥१५॥

और उसके दशांश हवन, तर्पण तथा मार्जन कराकर तुलसीकी एक वाटिका लगावे और उसके मूलमें विष्णु भगवान्का पूजन करे १५

दशवर्णगवां दानं शय्यादानं विशेषतः ।
ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चाच्छतसंख्यान्द्विजोत्तमान्॥१६॥

विधिसे शय्यादान तथा दस प्रकार की गौवोंका दान करके फिर सौ ब्राह्मणोंको भोजन करावे ॥ १६ ॥

विष्णोश्च प्रतिमां कृत्वा सौवर्णीं दशभिः पलैः ।
पूजयित्वा विधानेन ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ॥१७॥
एवं कृते न सन्देहो `वंशो भवति नान्यथा ॥१८॥

फिर दस पल सोनेकी प्रतिमा विष्णु भगवान् की बनवा कर सविधि उसका पूजन करके उसे ब्राह्मणको दान दे देवे । ऐसे विधि विधानको करनेसे निश्चय वंशकी वृद्धि होती है इसमें संशय नहीं ॥ १७-१८ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे रेवतीनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम नवाधिकशततमोऽध्यायः ॥१०९॥

एक सौ नव अध्याय समाप्त ॥ १०९ ॥

अथदशाधिकशततमोऽध्यायः।

शिव उवाच।

माणिक्ये च पुरे देवि! वसन्ति बहवो जनाः।
लवणकृद्वसत्येको प्रत्यहं लवणं कृतम् ॥ १ ॥

शिवजी बोले—हे देवि! माणिक्य नामक नगर में बहुत लोग निवास करते थे, जिसमें एक लवणकार (नोनियाँ) भी बसता था और नित्य प्रति नमक बनाया करता था ॥ १ ॥

लवणं विक्रयेन्नित्यं व्ययं कृत्वा दिने दिने।
तस्य मित्रं द्विजः कश्चिदागतस्तस्य वै गृहे ॥ २ ॥

प्रतिदिन नमक बेचकर अपना खर्च चलाता था, उसका मित्र कोई ब्राह्मण उसके यहाँ घरमें आया ॥ २ ॥

धनाढ्यो रत्नसंयुक्तस्तत्र वासमकारयत्।
आदरं बहु सन्मानं कृत्वा मित्रेण वै शिवे ॥ ३ ॥

हे शिवे! वह धन और रत्नोंसे युक्त आकर उसके यहाँ रहने लगा और उसके मित्र लवणकारने उसे बहुत आदर सत्कारके साथ रक्खा ॥ ३ ॥

पत्नी शूद्रस्य वै हृष्टा पुंश्चली चपला तु सा।
मासमेकं वरारोहे तस्य मित्रस्य वै स्थितिः ॥ ४ ॥

उस शूद्र की पत्नी हृष्टपुष्ट औरदुराचारिणी तथा चंचला थी। उस शूद्रके मित्र को एक मास तक यथावत् स्थित रहनेके बाद ॥४॥

मित्रपत्न्या विषं दत्तं ब्राह्मणाय तदा शिवे।
ब्राह्मणेन च न ज्ञातं भोजनाभ्यन्तरे तथा ॥ ५ ॥

हे शिवे! उसशूद्र की स्त्री ने उस ब्राह्मणको विष दे दिया और भोजनकेअन्दरदियाहुआविष ब्राह्मणकोतत्कालज्ञातनहींहुआ ॥५॥

ब्राह्मणस्याभवन्मृत्युरर्द्धरात्रे गते सति ।
नद्यां शवं ततस्त्यक्त्वा समगृह्णाच्च तद्धनम् ॥ ६ ॥

और जब अर्ध रात्रि व्यतीत हो चुकी तब ब्राह्मण की मृत्यु हो गई । उसके बाद ब्राह्मण के शवको नदी में फेंक कर उसका सब धन शूद्रने लेलिया ॥ ६ ॥

ब्राह्मणार्थं च संगृह्य कृतं व्ययमहर्निशम् ।
भार्यया सह पुत्राभ्यां भुक्त्वा द्रव्यं वरानने ॥ ७ ॥

हे वरानने ! उस ब्राह्मण के धनको लेकर स्त्री पुत्रादि सहित सभी नित्य प्रति उपभोग करने लगे ॥ ७ ॥

ततो वृद्धे च वयसि मरणं समजायत ।
पश्चान्मृता तु सा भार्या कुलटा व्यभिचारिणी ॥८॥

तदनन्तर जब वृद्धावस्था आई तब उसकी भी मृत्यु हो गई और बादको उसकी कुलटा जो व्यभिचारिणी स्त्री थी वह भी मर गई ॥ ८ ॥

यमदूतैर्महाघोरे नरके पङ्कसंज्ञके ।
कुम्भीपाके तदा देवि ! निःक्षिप्तश्च यमाज्ञया ॥ ९ ॥

हे देवि ! तब यमराज की आज्ञा पाकर उनके दूतों ने उसे महा घोर कुम्भीपाक नामक नरक में ले जाकर डाल दिया ॥ ९ ॥

युगमेकं विशालाक्षि भुक्त्वा नरकयातनाम् ।
नरकान्निःसृतो देवि ! शूकरत्वं प्रजायते ॥१०॥

और एक युग तक उस नरक की यातनायें भोगकर जब उससे उद्धार हुआ तो शूकर की योनि में जन्म लिया ॥ १० ॥

पुनः काकस्य वै योनिं विडालत्वं ततोऽभवत् ।
मानुषत्वं ततो देवि ! देशे शुभ्रे तदाऽभवत् ॥११॥

उसके बाद फिर कौवे की योनि, फिर बिल्ली की योनि प्राप्त कर बादको एक अच्छे देशमें मनुष्य शरीर में जन्म लिया ॥११॥

पूर्वजन्मनि देवेशि कुरुक्षेत्रे यतो मृतः।
अतो धनं भवेत्तस्य नापत्यं द्विजहत्यया ॥१२॥

हे देवेशि! पूर्वजन्ममें कुरुक्षेत्रमें शरीरका परित्याग किया था इसलिये वह धनिक और ब्रह्महत्याके दोषसे सन्तान रहित हुआ।

शरीरे जायते व्याधिर्भार्या तस्य मृतप्रजा।
अस्य पापस्य शमनीं शान्तिं शृणु वरानने ॥१३॥

और उसके शरीर में व्याधि उत्पन्न हो गई तथा उसकी स्त्री भी मृतप्रजा अर्थात् सन्तान हो कर मर जाती थी अब इस पापके शमनार्थ शान्ति सुनो ॥ १३ ;

गृहवित्ताष्टमं भागं ब्राह्मणाय समर्पयेत्।
हवनं कारयेद्दवि कुण्डे योनिसुशोभिते ॥१४॥

गृहस्थित धनका आठवाँ भाग द्रव्य ब्राह्मणको दान कर दे, और सुन्दर योनि कुण्डका निर्माण कराकर हवन करावे ॥१४॥

चतुरस्त्रे वरारोहे दशांशं विधिपूर्वकम्।
तर्पणं तद्दशांशेन तद्दशांशेन मार्जनम् ॥१५॥

उस हवन कुण्ड को चतुष्कोण बनावे और दशांश तर्पण तथा मार्जन करावे ॥ १५ ॥

गां सवत्सां ततो दद्यात्स्वर्णरत्नविभूषिताम्।
ब्राह्मणान् भोजयेत्पश्चात्कूष्माण्डं प्रददेत्सुधीः ॥१६॥

बादको ब्यायी हुई सवत्सा गौ स्वर्णादिसे अलंकृत कर दान करे और ब्राह्मण भोजन कराकर कूष्माण्ड का दान दे ॥ १६ ॥

एवंकृते वरारोहे! पुत्रो भवति नान्यथा ॥१७॥
ऐसे विधान को करने से पुत्र होता है इसमें सन्देह नहीं ॥१७॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे रेवतीनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामदशाधिकशततमोऽध्यायः ॥११०॥

एकसौ दश अध्याय समाप्त ॥ ११० ॥

अथैकादशाधिकशततमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अलर्कस्य पुरे देवि क्षत्रियो वसति प्रिये ।
चन्द्रवर्मेति विख्यातः पत्नी देवी ततोऽभवत् ॥ १ ॥

शिवजी बोले—हे प्रिये! अलर्क (अलका) पुरीमें चन्द्रवर्मा नाम करके एक क्षत्री रहता था और देवी नामकी उसकी स्त्री थी ॥१॥

क्षत्रधर्मरतो नित्यं धनाढ्यः शूरसम्मतः ।
कृष्णदास इति ख्यातो विप्रस्तस्य पुरोहितः ॥ २ ॥

वह नित्य अपने धर्मका आचरण करने वाला, धनिक, शूरवीर था और कृष्णदास नामक ब्राह्मण उसका पुरोहित था ॥ २ ॥

विप्राय प्रददौ भूमिं गिरिजे विग्रहे सति ।
ततो बहुदिने जाते दण्डस्तस्माच्च याचितः ॥ ३ ॥

हे गिरिजे! किसी विग्रह के समय उसने उस ब्राह्मण को भूमि दान दिया था फिर बहुत दिन के बाद उस ब्राह्मण से क्षत्रियने कर माँगा ॥ ३ ॥

ब्राह्मणोऽथावदद्देवि नाहं दण्ड्यः कदाचन ।
ततो रोषपरीतात्मा क्षत्रियो ब्राह्मणं प्रति ॥ ४ ॥

तब ब्राह्मणने कहा कि हम दण्ड देने योग्य नहीं हैं और न कभी दिया, ऐसा सुनकर क्रोध से भरकर क्षत्रिय ने ब्राह्मण को ॥४॥

दुर्वचश्चावदद्देवि ब्राह्मणं साधुसम्मतम् ।
मरणं ब्राह्मणस्यैव भूम्युद्देशेन वै शिवे ॥ ५ ॥

दुर्वचन कहने लगा और उस सज्जन ब्राह्मण ने उसके कटु-वचन से अपने को अपमानित समझ शरीर त्याग दिया ॥ ५ ॥

ततो बहुगते वर्षे मरणं क्षत्रियस्य तु ।
यमदूतैर्महाघोरे नरके नामदारुणे ॥ ६ ॥

तदनन्तर बहुत वर्ष बाद उस क्षत्रिय की भी मृत्यु हो गयी तब यमराज के दूतों ने महाघोर दारुण नरक में ॥ ६ ॥

कुम्भीपाके तदा घोरे क्षिप्तवान्यमशासनात् ।
युगानां त्रयसङ्ख्यानां नरके वास एव च ॥ ७ ॥

कुम्भीपाक में लेजाकर छोड़ दिया तथा यमराज की आज्ञानुसार तीन युग तक उस नरक में वास दिया ॥ ७ ॥

नरकान्निःसृतो देवि प्रेतत्वं समजायत ।
शूकरस्य पुनर्योनिं ततो भवति मानुषः ॥ ८ ॥

हे देवि ! नरकसे निकलनेके बाद प्रेत की योनि मिली उसके बाद शूकरकी योनिमें जाकर फिर मनुष्य शरीर धारण किया ॥८॥

मध्यदेशे विशालाक्षि हिमविन्ध्याद्रिमध्यमे ।
धनधान्यसमायुक्तो ब्राह्मणानां च सेवकः ॥ ९ ॥

हिमाचल और विन्ध्यपर्वत इन दोनों के मध्यवाले देशमें धनादि से युक्त तथा ब्राह्मणोंका सेवक हुआ ॥ ९ ॥

इह जन्मनि देवेशि मरणं सन्ततेर्ध्रुवम् ।
काकवन्ध्या भवेन्नारी मृतवत्सा पुनः पुनः ॥१०॥

इस जन्म में उसकी सन्तान नष्ट हुई और स्त्री काकवन्ध्या तथा मृतवत्सापन को प्राप्त हो गई ॥ १० ॥

शरीरे व्याधिरुत्पन्नो ज्वरश्चैव मुहुर्मुहुः ।
अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि ! वरानने ॥११॥

और शरीर व्याधिसे ग्रसित हो गया तथा बार-बार ज्वरसे भी पीड़ित होता था अब इसकी शान्ति कहता हूँ उसे सुनो ॥११॥

गृहवित्तषडंशं तु ब्राह्मणाय प्रकल्पयेत् ।
गायत्रीमूलमन्त्रेण पञ्चलक्षजपं तथा ॥ १२ ॥

अपने घरके धनका छठाँ भाग द्रव्य ब्राह्मणको दान कर दे और गायत्री मूल मंत्रसे पाँच लाख जप कराकर ॥ १२ ॥

दशांशं कारयेद्देवि ! हवनं विधिपूर्वकम् ।
तर्पणं मार्जनं तद्वद्गोदानं च विशेषतः ॥१३॥

उसके दशांश हवन, तर्पण तथा मार्जन करावे और विधिवत् गोदान करे ॥ १३ ॥

ब्राह्मणस्य ततो देवि ! प्रतिमां कारयेद् बुधः ।
पलपञ्चसुवर्णस्य वस्त्ररत्नविभूषिताम् ॥१४॥
ततो निर्माय प्रतिमां पूजयित्वा यथाविधि ।
मन्त्रणानेन देवेशि ! पाद्यं गन्धादिकं पृथक् ॥१५॥

हे देवि ! पाँच पल (पचीस तोले) प्रमाण सुवर्णकी एक प्रतिमा ब्राह्मणकी निर्माण कराकर उसे वस्त्र और रत्नोंसे अलंकृत करे और उस सुवर्ण निर्मित प्रतिमा को यथाविधि आगे कहे हुए मंत्रसे अर्घ्य, पाद्य देकर गन्धादिसे पृथक् २ पूजन करे ॥१४-१५॥

वासुदेव जगन्नाथ शरणागतवत्सल ।
ब्रह्महत्या कृता पूर्वं तत्सर्वं क्षन्तुमर्हसि ॥१६॥
वल्मीकमृत्तिकां गृह्य वेदीं वै कारयेत्ततः ।
तन्मध्ये सर्वतोभद्रं रचितं दिव्यमण्डले ॥१७॥

और कहे कि—हे वासुदेव, जगत्के स्वामी शरणागतोंके रक्षक, मैंने पूर्व जन्ममें जो ब्रह्म हत्या की है वह सब आप क्षमा करें क्योंकि आप क्षमा करनेके योग्य हैं इसके बाद एक मण्डपमें (विमउट) की मिट्टी लेकर एक सुन्दर वेदीका निर्माण कराकर उस पर सर्वतो भद्र बनावे और उसपर मूर्ति स्थापित कर पूजन करे ॥ १६-१७ ॥

तन्मध्ये प्रतिमां स्थाप्य ततः पूजां तु कारयेत् !
मंत्र—ॐवासुदेवाय नमः। ॐजगन्नाथाय नमः।
ॐविष्णवे नमः। ॐशार्ङ्गिणे नमः।
आचार्यं च ततो नत्वा शिवविष्णुस्वरूपिणम् ॥१८॥
प्रभोजयेत्ततो विप्रान् दक्षिणां दापयेत्ततः।
ततो विसर्जनं कुर्याद्वाचकं प्रणिपत्य च।
एवं कृते वरारोहे! शीघ्रं पुत्रः प्रजायते ॥१९॥

तदनन्तर शिव और विष्णु स्वरूप आचार्यको नमस्कार कर फिर ब्राह्मणोंको भोजन करावे और यथाशक्ति उनको दक्षिणा देकर विदा करे। बादको उपदेशक गुरुको प्रणाम करके विसर्जन करे। इस तरहके विधि विधानको करनेसे शीघ्रही पुत्र उत्पन्न होता है ॥ १८-१९ ॥

काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं सर्वव्याधि-प्रणाशनम्।
मृतवत्सा च या नारी जीवित्पुत्रा च जायते ॥२०॥
यः पठेच्छृणुयाद्वापि सर्वपापैः प्रमुच्यते।
अतः परतरं नास्ति सत्यं सत्यं वरानने ॥२१॥

और काकवन्ध्या स्त्री भी पुत्रवती होती है तथा सब व्याधि समूल नष्ट होकर जो मृतवत्सा स्त्रियाँ हैं वे भी चिरजीवी पुत्रवाली होती हैं। इस प्रसङ्गको जो पढ़ते अथवा सुनते हैं वे सब पापों से मुक्त हो जाते हैं, इससे अर्थात् पार्वतीके प्रति कहे हुए शिवजीके

इस प्रसङ्गसे बढ़कर पुण्यदायक अन्य कोई नहीं है यह सर्वथा सत्य है ॥२०-२१॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वती-शिवसम्वादे सर्वप्रायश्चित्त-कथनानन्तरे रेवतीनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकादशोत्तरशततमोऽध्यायः ॥१११॥

॥ कर्मविपाकसंहिता एकसौ ग्यारह अध्याय समाप्त ॥